Impact Factor : 7.834

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037
March-April 2026
Volume 14, Issue 3-4

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni
Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
www.ginajournal.com

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 14 अंक : 3 – 4, भाग – 4 मार्च – अप्रैल : 2026 आईएसएसएन : 2321 – 8037

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर, राज.
प्रधन सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)
अंतर्राष्ट्रीय सम्पादक मण्डल :
डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।
शिओंग छन श्यू, चीन।
डॉ. ऋतु शर्मा ननंन पाँडे
साहित्यकार, शिक्षाविद, नीदरलैंड।
डॉ. सुनीता शर्मा
हिन्दी साहित्यकार, कवयित्री, संपादक
एवं शिक्षाविद् मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया
डॉ. अनुरुद्ध बायन
मध्य कामरूप कॉलेज, सुभा
जिला बारपेटा, असम।
डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड
कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक
कॉलेज फॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।
श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर,
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा
अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।
कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)
डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)
डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।
डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर
डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)
डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)
डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।
श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार, अनुवादक, यूक्रेन।
डॉ. हेमराज न्यौपाने
काठमाण्डु, नेपाल।
डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।
डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।
डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।
डॉ. मधुबाला
राजकीय महाविद्यालय, लाखनमाजरा।
डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश
डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)
डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा
डॉ. राजेश शर्मा
शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)
डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)
डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर
डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश
डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।
डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की
डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, लखनऊ।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग**, एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज**, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07–07
2.	कांगड़ा–चम्बा जिला के लोकगीतों में संस्कृति	डॉ० ऊषा रानी	08–16
3.	समकालीन साहित्य लेखन में हाशिए की आवाजें	डॉ. योगेश कुमार यादव	17–22
4.	मोटापा के प्रबंधन में योग–प्राणायाम–ध्यान एवं आहार का एक 'प्रयोगात्मक अध्ययन'	योगाचार्य राजकुमार भारती	23–30
5.	स्वतंत्रता आंदोलन एवं साहित्यिक पत्रिकाएं	डॉ. मनीष काले, डॉ. सोनाली नरगुन्दे	31–38
6.	शैलेश मटियानी के उपन्यास 'कोई अजनबी नहीं' की समीक्षा (संचारी भावों के परिप्रेक्ष्य में)	डॉ. दीपशिखा	39–50
7.	**Effect of Competency-Based Assessment under National Education Policy 2020 on Teaching Practices of Secondary School Teachers**	**Pinky Agarwal, Dr. Manju Devi**	**51-58**
8.	अकबर के शासनकाल में आर्थिक सुधार : वर्तमान में प्रासंगिकता	डॉ० अनीता रानी	59–65
9.	**INDIAN DIASPORA IN THAILAND : MIGRATION AND OCCUPATIONAL ENGAGEMENTS**	**Chandan Kumar Yadav, Prof. Pawan Kumar Yadav**	**66-75**
10.	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति का चित्रण	राहुल साव	76–82
11.	गीतों के 'साहिर' – साहिर लुधियानवी	सिद्धार्थ	83–86
12.	**Pragmatic Statesmanship in Indian Politics : An Analytical Study of the Pragmatic Approach of Atal Bihari Vajpayee**	**Lakhwinder Jeet Kaur**	**87-91**
13.	औपनिवेशिक भारत में ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति : सांप्रदायिक राजनीति, जातीय विभाजन और भारत–विभाजन का ऐतिहासिक–राजनीतिक विश्लेषण	डॉ. प्रशांत कुमार	92–99
14.	श्रीरामचरितमानस में संस्कृति का धार्मिक चित्रण	पूनम, प्रोफेसर संजीव कुमार	100–103
15.	'बेगाने घर में' उपन्यास में अकेलेपन का विवेचन	किरन रावत	104–107
16.	आंग्ल–नेपाल युद्ध 1814–16 : ऐतिहासिक और राजनीतिक विश्लेषण	किशोर कुमार	108–113
17.	**The Role of Indian Diaspora in Influencing India's Soft Power Diplomacy : Under Modi Government**	**Khushboo Arya**	**114-126**

18.	**Antyodaya and Inclusive Growth : Deendayal Upadhyaya's Vision of Welfare Economics**	**Hemant Sharma**	**127-133**
19.	भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में उदारवादियों की भूमिका : एक ऐतिहासिक अध्ययन	डॉ. नागेश्वर कुमार	134–139
20.	उत्तर प्रदेश में विमुक्त जनजाति के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था	डॉ० सौम्या शंकर, मधु मिश्रा	140–147
21.	पर्यावरण चेतना और हिंदी साहित्य : नवाचार एवं स्थिरता का साहित्यिक दृष्टिकोण	डॉ अनिता सिंह	148–153
22.	डिजिटल युग में हिंदी भाषा का विकास : सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन	डॉ. आरती दुबे	154–158
23.	**Grammatical Error Correction Using Transformer-Based Models**	**Dr. K. Angel Vinoliya, Dr. M. Mary Velanganni, Dr. Vijayalakshmi. S, Dr. B. Abirami, Mr. B. Manojkumar, Dr. S. Sudha, Dr. S. Swarnalatha**	**159-163**
24.	सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था : धम्म, नैतिकता एवं लोककल्याण का ऐतिहासिक विश्लेषण	रोहिताश कुमार	164–171
25.	**Artificial Intelligence and Social Inequalities in India : A Sociological Perspective**	**Dr. Afroze Eqbal and Anjali Sharma**	**175-190**
26.	मानव अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रभाव	अवनीश धर दूबे	191–196
27.	**Roles of Parent's Involvement in Child's Education**	**Dr. Manju**	**197-200**
28.	संविधान और प्रमुख संविधान संशोधन का महत्व	विवेक कुमार सिंह	201–206
29.	**Human–Computer Interaction (HCI)**	**Dr. Charlesbabu. J, Dr. S. Kirubadevi, Dr. Jayanthi Sobhana. S, Dr. C. Thangamani, Ms. A. Vijayapriya, Dr.V. Deepa**	**207-211**

सम्पादक की कलम से.....

''शब्दों की लौ से ज्ञान का दीप जले,
हर पंक्ति में सृजन का संगीत ढले।''

प्रिय पाठकों,

नवसृजन और शोध की इस यात्रा में एक बार फिर गीना शोध संगम का नया अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। साहित्य, शोध और अभिव्यक्ति के इस मंच पर, हम हर बार नई सोच, नई धारा और नई दृष्टि को स्थान देने का प्रयास करते हैं। यह अंक भी उसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए, विचारों के गहरे सागर से निकले कुछ अनमोल मोतियों को संजोकर आपके सामने ला रहा है।

इस बार के अंक में हमने साहित्य और शोध की उन प्रवृत्तियों पर विशेष ध्यान दिया है, जो समाज के बौद्धिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को नई दिशा देती हैं। हमारे रचनाकारों ने अपने विचारों को शब्दों में ढालते हुए, जीवन के विभिन्न आयामों को उकेरा है। कविता, लेख, समीक्षाएँ और शोध आलेखों के माध्यम से, यह अंक एक सार्थक विमर्श को जन्म देगा।

''हर शब्द में एक आकाश छिपा होता है,
हर विचार में उजाले की तलाश छिपी होती है।''

आज के समय में जब सूचनाओं की बाढ़ है, तब सही शोध और सारगर्भित साहित्य की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। एक ओर साहित्य समाज का दर्पण है, तो दूसरी ओर शोध वह मशाल है, जो हमें सटीक और तर्कसंगत निष्कर्ष तक पहुँचाती है। इसी दृष्टिकोण से हमारे लेखकगण अपनी मौलिक और शोधपरक रचनाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं, जो निश्चित रूप से पाठकों के मन–मस्तिष्क को प्रबुद्ध करेंगी।

इस अंक में प्रस्तुत कविताएँ मानवीय संवेदनाओं को उजागर करती हैं, तो आलेख समाज के विविध पक्षों पर विचार प्रस्तुत करते हैं। आशा है कि यह अंक आपकी सोच को नई दिशा देगा और ज्ञान के प्रसार में एक छोटी–सी भूमिका निभाएगा।

''कलम की रोशनी से अंधेरे छँटते रहेंगे,
हम विचारों से नई दुनिया गढ़ते रहेंगे।''

आपकी प्रतिक्रियाओं और सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

–संपादक,
गीना शोध संगम

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 8–16
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

कांगड़ा–चम्बा जिला के लोकगीतों में संस्कृति

डॉ० ऊषा रानी
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
CDOE, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला–171005

सारांश :

लोकभाषा का आश्रय लेकर स्वर और लय के संगीतात्मक आवरण में जब मानव मन की आदिम वृत्तियां सहज ही प्रस्फुटित एवं अभिव्यक्ति होती है तो लोकगीतों का जन्म होता है। सामान्य जन समुदाय में हार्दिक रागाराग से पूर्ण भावानुभूतियां, लोकगीत कहलाती हैं। जगत की विभिन्न चेष्टाओं एवं स्थितियों का प्रभावपूर्ण वित्र इन गीतों में निबद्ध रहता है। लोकसाहित्य में लोकगीत सर्वाधिक प्राचीन माने जा सकते हैं। जंगल में उगे पेड़ पौधों की तरह इनका इतिहास अनादि है। ये कब शब्दों में बंध गए, स्वरों में गुंथ गए, यह कोई नहीं बता सकता। ये श्रुति परम्परा से ही निरन्तर विकसित एवं रक्षित हुए हैं। संगीत की अद्‌भुत शक्ति ने इनमें आकर्षण भरा और लोकजीवन की मार्मिक अनुभूतियों ने इन्हें लोगों का कण्ठहार बनाया। लोकगीत तो सहज उद्‌भुत संगीत योजना है। साहित्य और संस्कृति की सभ्यता का आकलन बिना वाचिक परम्परा के अध्ययन के कर पाना असम्भव है। लोक साहित्य निश्चय ही कर्मशील लोकजीवन की सामूहिक उपलब्धि है। लोकसाहित्य के लिए जो फोकलोर शब्द प्रचलित है, उसमें प्राचीन समाज की समस्त वाचिक परम्पराओं, कलाओं और प्रचलित विश्वासों का समूह रहता है। इसके अन्तर्गत नृत्य, गीत, जादू–टोना, कथा–पहेली, लोकोक्ति आदि भी आ जाते हैं

हिमाचल प्रदेश का कांगड़ा–चम्बा जिला अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के लिए सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। कांगड़ा–चम्बा जिला की लोकसंस्कृति में लोकगीतों का उल्लेखनीय स्थान है। यहाँ के लोकगीत केवल मनोरंजन का साधन मात्र न होकर समाज की परंपराओं, रीति–रिवाजों, विश्वासों, मान्यताओं और जीवन शैली के दर्पण हैं। कांगड़ा–चम्बा जिला के लोकगीतों में यहाँ के जनमानस के सुख–दुःख, प्रेम–विरह, भक्ति, आस्था और प्रकृति के प्रति गहरा लगाव झलकता है। यह लोकगीत पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परंपरा के माध्यम से प्रवाहित होते चले आए हैं जो आज भी इन क्षेत्रों के जनजीवन का अभिन्न भाग हैं। कांगड़ा–चम्बा जिला के लोकगीतों में विविधता देखने को मिलती है। प्रेम, विरह–वियोग सम्बन्धी गीत भी हैं और अनुष्ठान सम्बन्धी संस्कारों से जुड़े गीत भी हैं। जिनमें जन्म, सुहाग व विवाह संस्कार गीत हैं। यह बात पूर्णतः सत्य है कि अधिकांश लोकगीत महिलाओं द्वारा ही गाए जाते हैं और उन अनाम गीतों की रचनाकार भी महिलाएं ही रही होंगी क्योंकि नारी हृदय की भावनाओं का अति सूक्ष्म विश्लेषण इन गीतों में मिलता है। जहाँ तक जन्म व विवाह संस्कार संबंधी गीत हैं, उनमें नारी की चेतना व भावना मुखर हुई है। लेकिन वहां उन संस्कारों व अनुष्ठानों का

विधि–विधान, विस्तार से चित्रित हुआ है। जहाँ तक दूसरे गीत हैं। जो संयोग–वियोग सम्बन्धी गीत हैं। इन गीतों में ज्यादातर प्रेम विषय के ही गीत चित्रित हुए हैं। श्रृंगार के दोनों ही पक्ष लोकगीतों में मुखरित हुए हैं। संयोग पक्ष में नायिका का नख–शिख वर्णन जिस प्रकार वर्णित हुआ है उससे यही प्रतीत होता है कि इसके रचनाकार पुरुष ही हैं। पुरुष ने ही इन गीतों की रचना की हैं। लेकिन बहुत सारे ऐसे भी गीत हैं जो नारी की प्रधानता को दर्शाते हैं। नारी की रचनाधर्मिता ही उन गीतों में परिलक्षित होती है। ऐसे गीतों में संयोग सम्बन्धी गीत बहुत हैं। विरह की पीड़ा को अधिकतर लोकगीतों में स्त्री के दृष्टिकोण से ही विश्लेषित किया गया है। ज्यादातर यहां स्त्री ही विच्छोह या वियोग की पीड़ा को अनुभव कर रही है। लोकगीतों में उपमा, मानवीकरण एवं अन्य कई अलंकारों का भी प्रयोग देखने को मिला है। कहीं पर प्रेम, धर्म तथा जातिवाद की बेड़ियों को तोड़ते हुए अपने मन की आकांक्षाओं एवं उमंगों की अभिव्यक्ति लोकगीतों के माध्यम से व्यक्त होती है।

चमन लाल गुप्त की पुस्तक हिमाचली संस्कृति एवं समाज रू लोकगीतों के दपर्ण में' एक स्थान पर लिखा है, "कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक संस्कृति से इसकी तुलना करते हुए लोक संस्कृति को वृक्ष के समान तथा लोक साहित्य को उसका फल कहा है तथा एक अन्य स्थान पर उन्होंने लोक संस्कृति को समुद्र और लोक साहित्य को उसमें गिरने वाली बूंद बतलाया है।"[1] चमन लाल गुप्त की पुस्तक हिमाचली लोकगीत मंजूषा में आर०आर० मेरिक के अनुसार, "फोकलोर में लोगों की संस्कृति का समावेश माना जा सकता है ऐसी संस्कृति जोकि व्यवस्थित धर्म और इतिहास का अंग नहीं रही बल्कि जो स्वयमेव विकसित होती आई है।"[2] हजारी प्रसाद द्विवेदी ने "फोकलोर के लिए लोकसंस्कृति ग्रहण करने का सुझाव दिया है।"[3] सत्येन्द्र ने "लोकवार्ता को लोकसंस्कृति का पर्याय कहा है।"[4] अतः वास्तव में लोक मानस की मनोस्थिति के भीतर लोक संस्कृति का प्रतिपादन और उद्घाटन लोक साहित्य ही करता है।

गौतम शर्मा व्यथित ने अपनी पुस्तक 'हिमाचल के लोकगीत' में लिखा है, "लोकसंगीत हृदय से फूटता है, लोकगीतों में लोक बसता है। यह प्रकृति में सहज, स्वाभाविक है संस्कार जन्म है जो स्थानीय समाज, संस्कृति से संबंधित होता है। जब माटी गाती है तो लोकगीत जन्मते हैं।"[5] अतः लोकगायन लोकसंगीत के माध्यम से शाश्वत बनता है और कालजयी हो जाता है। प्रांतीय लोकगायन या लोकगीतों को पहचान केवल लोकसंगीत ही देता है।

श्रीराम शर्मा अपनी पुस्तक 'लोक साहित्य' में लिखते हैं, "जिस क्षेत्र का लोक जीवन जिस वातावरण में पला है, उसी के अनुरूप यहाँ के गीत भी निर्भर हुए हैं। मानव मन के सुख–दुरूख, करुणा, वेदना, उदारता, सहानुभूति, संवेदना, प्रेम आदि जो भाव उत्पन्न होते हैं, उनको सहज रूप में जीवित रखने का श्रेय लोकगीतों को ही है।"[6] अतः स्पष्ट है कि व्यक्ति जिस परिवेश में जन्म लेता है उसी के अनुरूप यहाँ के लोकगीत भी निर्भर करते हैं।

लोकगीतों में लोकगीत और लोकगाथाओं को लिया जाता है। दोनों में विषयगत और स्वरूपगत भेद है। लोकगीत आकार में छोटा होता है लोकगाथा विस्तृत। लोकगीत संस्कार, रस, ऋतु, जाति, श्रम से जुड़े हो सकते हैं। देवीगीत, खेलगीत, भजन, लोरी और नश्त्यगीतों को भी इनमें रखा जा सकता है। लोकगाथाएँ लम्बे कथानक लिए रहती हैं।

संस्कार वह है जिसके होने से मनुष्य, पशुत्व को छोड़ मनुष्यत्व ग्रहण करता है। ये सभ्य जीवन का आधार

है। गृहसूत्रों में संस्कारों का विस्तृत वर्णन है। मुख्य रूप से जन्म, विवाह और मृत्यु के संस्कारों पर अधिक गीत मिलते हैं। भारतीय जीवन दृष्टि सुखवादी रही है और मंगल अवसरों पर गीत गाने की प्राचीन परम्परा रही है। जन्म और विवाह में लोकमानस अत्यधिक सुख का अनुभव करता है इसलिए इन अवसरों पर मंगलगीत गाए जाते हैं। इन दोनों संस्कारों के अन्तर्गत छठी, अन्नप्राशन, नामकरण, चूड़ाकरण, बहरी, मुण्डन आदि संस्कार आते हैं। यों तो लोकगीत सभी रसों से संबद्ध रहते हैं परन्तु श्रृंगार, हास्य और करुण रस के अधिक गीत लोक साहित्य में मिलते हैं। भक्तिरस को भी लोक ने पर्याप्त महत्त्व दिया है। भारत में अनेक ऋतुओं का आगमन लोक के हृदय को आन्दोलित एवं आह्लादित करता रहा है और इसीलिए विभिन्न ऋतुओं से संबद्ध गीतों का सृजन होता रहा है। बसन्त, वर्षा और शिशिर के गीत अधिक मिलते हैं। भारत की धर्मपरायण जनता विविध व्रतों और त्यौहारों को जीवन का अंग मानती है और अवसरानुकूल लोकगीतों का सृजन होता रहा है। श्रमगीतों का दैनिक जीवन में महत्त्व है क्योंकि ये श्रम को सुखद एवं आनन्द पूर्ण बनाते हैं। कहार पालकी ढोते समय, खेत–मजदूर गुडाई रोपाई करते समय या हल चलाते हुए, चरवाहे ढोर चराते हुए गीत गाकर थकावट मिटाते हैं। पथिक गाते हुए लम्बा रास्ता तय कर जाते हैं। स्त्रियों और पुरुषों के श्रमगीत कुछ भिन्न रहते हैं। लोकगीतों और गाथाओं में स्थानीयता का प्रभाव रहता है। लोगों का रहन–सहन, रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार इनमें प्रतिबिम्बित होता है। लोक संस्कृति इन गीतों में अपनी पूर्णता के साथ प्रतिविम्बित होती है। लोकगाथाओं में स्थानीय बहादुरों, दयालु एवं न्यायप्रिय शासकों अथवा पौराणिक पात्रों का गुणगान किया जाता है।

धार्मिक लोकगीतों में भाग्यवाद और कर्मवाद का वर्णन रहता है। ये गीत देवी–देवताओं, व्रत–त्यौहारों और जोगियों तथा चमत्कारी महापुरुषों से सम्बद्ध होते हैं। पहाड़ों में दुर्गा, शिव, राम, कृष्ण तथा स्थानीय देवताओं से सम्बन्धित लोकगीत प्रचलित हैं। लोकगीतों में बालगीतों को भी उचित स्थान मिला है। इनका सम्बन्ध मुख्य रूप से खेलों से रहता है। लड़कियों के बालगीतों में भाई के प्यार का उल्लेख अधिक रहता है।

पुत्र का जन्म :

पुत्र का जन्म होते ही थाली बजाई गई और उपस्थित परिजनों तथा गांव भर के सुनने वाले लोगों में खुशी की लहर दौड़ गई। सभी सोचने लगे कि किसी के घर बेटे का जन्म हुआ है। लोकगायिका लोगों के कुतूहल को वाणी देती हुई गाती है :

अजी राजे की नगरी बसे सारा लोक बसे
सारा लोक मंडला किसे घर बाजिआ।
अजी बाड़ले भाईए घर जरमिआ पूत जरमिआ पूत
मंडला उसे घर बाजिआ।

अर्थात् स्पष्ट है कि बड़े भाई जेठ के घर में पुत्र ने जन्म लिया है। उसी की खुशियां मनाई जा रही हैं।

माता-पिता एवं सगे-संबंधियों का आह्लाद :

मां अत्यधिक आनन्दित और संतुष्ट है। वह अपने प्रिय के साथ बैठी अपने सौभाग्य पर गर्व करती हुई कहती है :

एक हसणु-खेलणु घर आएआ, मेरे पिआरेआ।
हसणा खेलणा मंदा नहीं बोलणा

क्या लेई जाणा संसार दा ए।....

ए कन्त जी चाहीदा सणे सेजा मेरे पिआरेआ

कुच्छड़ पुत्त झंडोलणा ए।

अतः पति–पत्नी का यह सारगर्भित और रोचक वार्तालाव माता–पिता के मनोविज्ञान को दर्शाता है।

बच्चे के जन्म पर उसकी दादी बालक की मिट्टी की तिकोनी आकृति (भियाई) बनाती है जिसे पूजा जाता है। यह भाग्य देवी की प्रतीक है। भ्याईयां गाने की प्रथा बालक के जन्म पर है। लोकगायिका बच्चे के भाग्य का निर्माण करने वाली भ्याई देवी की पूजा करती हुई करती है :

तू ए भिआइये राणिये, तू भिआइये।

घर घर हण्डणी, तू इस घर आई ऐ।

बड़े सह परागड़ें, तू लेई ऐ मनाई।

अर्थात् हे भियाई रानी, तू दूसरों के घर में घूमने के बाद आज मेरे घर आई है। उषाकाल में तुझे हमने मनाया है। इसे गंगाजल दो।

नामकरण संस्कार :

बच्चे के जन्म के नवें, ग्यारहवें अथवा तेरहवें दिन नामकरण संस्कार सम्पन्न होता है। स्थानीय बोली में इसे गुन्तर या पंजाप भी कहा जाता है। गोमूत्र द्वारा जच्चा को शुद्ध करने के कारण ही संभवतः इसे गुंतर कहा जाता है। इस दिन पुराहित बच्चे का लग्न गिनता है और टीप (जन्मपत्री) लिखता है। प्रसूता को ओवरी से बाहर लाया जाता है और स्नान करवाया जाता है जिसे स्थानीय भाषा में गूंतध्गून्तर कहा जाता है। जब तक गूंतर नहीं होता तब तक सूतक माना जाता है अर्थात् जच्चा को अशुद्ध माना जाता है और वह कोई व्रत या पूजा आदि नहीं कर सकती।

इस अवसर पर गाए जाने वाले गीतों में नाई द्वारा बच्चे की मां को सूतक से स्वच्छ करवाना, गर्भवती नारी का पति के नाम सन्देश भेजना, गर्भावस्था में उसके मन में उठी इच्छाओं और अकांक्षाओं को व्यक्त करना मुख्य विषय रहते हैं। निम्न गीत में जच्चा को शुद्ध करने का गीत निम्न प्रकार से है–

नाईया–नाईया मेरे धर्मे देआ भाईया,

गोरिआ जो उजल कराया।

बड़े दे पत्तरे, चिकां दे ठेलुये, गाई दे गुन्तरे,

गोरिया जो उजल कराया।

कहने का भाव यह है कि हे नापित! तुम मेरे धर्म के भाई हो। इस गौरी को प्रसूतिकाल के सूतक से उज्ज्वल अर्थात पवित्र करवाना। वट वृक्ष के पत्ते, मिट्टी के टुकड़े तथा गोमूत्र से गोरी को उज्ज्वल करवाना। गर्भिणी की मनोवस्था का चित्रण करने वाले गीत भी गाए जाते हैं। निम्नलिखित गीत दोखिए –

डुग्धी–डुग्धी वासी, लगदी उदासी, डोला

उचियां बंगला पुआई दे।

बंगला पुआई दे, खिड़की रखाई दे, डोला

उचिया बंगला पुआई दे।

प्राचीन काल में नामकरण पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। कांगड़ा में यदि तीन लड़कियों के बाद लड़का पैदा होता था तो उसे तेलू पुकारने लगते थे। वीरवार को पैदा हुए को वीरू, चौत मास में पैदा होने वाले को चौतू नाम दे दिया जाता था। गोरे रंग वाले को गोरु, काले को कालू आदि नाम दे दिए जाते थे। बुरी नजर से बचाने के लिए घटिया से नाम भी दिए जाते थे यथा –मकोडू, पीजू, फांदू और फीबू आदि। वर्तमान में पंडित भी सोच समझकर सार्थक नाम रखते हैं। परिवार कितना भी पश्चिमी सभ्यता में डूबा हो परन्तु तत्सम नामों का प्रचलन बढ़ रहा है। लड़कियों के नाम भी विचित्र ढंग के रखे जाते थे यथा भीखी, निक्की और जोडी आदि। आज स्थिति बदल चुकी है। आज लड़कियों के लिए निर्मला, उर्मिला, आस्था, आशा, उर्मि आदि नाम आम है। प्राचीन काल में लोग अपने नाम के साथ देश या निवास स्थान सूचक शब्द लगाते थे। कभी–कभी माता के नाम से भी नामकरण होता था। यथा गांगेय (गंगा–पुत्र भीष्म), दीर्घतपा मामतेय तथा कुत्स आर्जुनये (अर्जुन का पुत्र) आदि। सभी ग्रह्यसूत्रों में यह नियम पाया जाता है कि नाम का आरम्भ उच्चारण करने योग्य व्यंजन से हो, बीच में अर्द्धस्वर हो तवा अन्त में दीर्घ स्वर या विसर्ग का होना आवश्यक है।

विवाह गीत (समूहत और उबटन) :

समूहत के समय दोनों पक्षों में बटणा (बुटणा) मलने की रस्म पूरी की जाती है। लड़के के घर वालों की ओर से, पंडित जी बटणा लड़की के घर लेकर जाते हैं जिसे लड़की के शरीर पर लगाया जाता है। 'बुटणा' मलने की रस्म मामों के आने पर सम्पन्न की जाती है। वर पक्ष की ओर से उबटन के साथ कन्या को वस्त्रों का एक जोड़ा भी भेजा जाता है। उबटन मलने के पश्चात् वर और वधु अपने यहां स्नान करते हैं। कांगड़ा जनपद में उबटन में आटा, सरसों का तेल, हल्दी, नख न्हाणी (सुगन्धित जड़ी), सरोह आदि का प्रयोग किया जाता है। काया को निखारने के लिए यह उबटन या लेपन बहुत उपयोगी है। उबटन लगाने से विवाह संबन्धी कार्यों का प्रारम्भ माना जाता है। बुटणा मलती हुई लोकगायिकाएं गाती हैं –

बाये बा कि बुटणा चौलां दा
कि मिलैंदियां दो जणियां बाये बों
कि सकियां ताईयां चाचियां बाये बों बाये बा
कि नेड़ पड़ेसणियां बाये बा।

विवाह के समय किए जाने वाले कार्य उत्साह और आनन्द से किए जाते हैं और इनमें अपनत्व और स्नेह का भाव भी भरा रहता है इसलिए इन कार्यों को करते हुए नारियां उल्लसित होकर गाती हैं। इन मंगल कार्यों में न केवल पारिवारिक सगे संबन्धी भाग लेते हैं बल्कि आस–पड़ौस की स्त्रियां भी शामिल होती हैं और इस प्रकार यह कार्य सामूहिक सामाजिक कार्य बन जाता है। उबटन में मिलाने के लिए स्त्रियां एक–एक कर वस्तुएं मांगती जाती है और गाती जाती हैं।

मामा के हाथ में औली (मिट्टी का वर्तन) होती है जिसमें समूहत वाले दिन ऊषाकाल में पाणीहोद से जल भरकर लाया जाता है। उस समय मार्ग में स्त्रियां गाती जाती हैं :

जागो ओ चिड़ओ पखेरूओ,
मामा पाणियें आया ऐ।
भली किती जिन्नी कुड़ियां दे मामे,

गोहरे खूही दुआई ऐ।.....

मामे दे लक घघरा विराजे, मामिया दे लक धोती ऐ।

जागो ओ चिड़िओ पखेरूओ,

मामा पाणिए आया ओ।

भारतीय संस्कृति में देव पूजा का संस्कार गहरा है। कांगड़ा जनपद में वैदिक परम्पराएं आज भी देखी जा सकती हैं।

चम्बा का प्राकृतिक सौंदर्य बड़ा ही सुहावना है। चम्बा की ऊंची–ढलवां पहाड़ियों में गोरी नायिका का मन बड़ा लगता है। चम्बा की सुंदर स्त्रियां, हरी–भरी पहाड़ियां, ठंडी हवाएं, रिमझिम वर्षा की फुहारें, उड़ते–धुमड़ते बादल, पहाड़, नदियां देखने को मन तरसता है। नायिका के होठों पर यह गीत बार–बार उतरता है–

गोरी दा मन लगा चम्बे दियां धारां

गोरी दा मन लगा

चम्बे दियां धारां।

बेटी जब ससुराल में होती है तो त्यौहार के आने पर उसे मायके से बुलावा आने या त्यौहार लेकर भाई या बाप के आने की प्रतीक्षा लगी रहती है और जब कोई नहीं आता है तो निराश होकर कहती है–

बिस्सू तां बिस्सू आया पंजे सत्ते,

मेरा भाऊ सादा नी आया हो।

बिस्सू तां बिस्सू आया पंजे सत्ते,

मेरा बापू साद्धा नी आया हो।

अप्पू खायो पिदंड़ी तां पिंदड़ी भाऊआ!

अप्पू खायो, गुड़े दा धुआणी देई भेजे हो।

अतः पांच सात दिनों के बाद बैसाखी आने वाली है, पर न तो भाई, न ही पिता बुलाने आए। फिर स्वयं को समझाती कहती है– बेटी! अब तो तुझे अपने आप ही जाना होगा, क्योंकि भाई छोटा और पिता बृद्ध है। बुलाने कैसे आएंगें? फिर कहती है– पिदंड़ी (पकवान) स्वयं खा लेना, जिन पत्तों में वह रखी होगी उन पत्तों को ही भेजना। गुड़ और गुड़ाणी स्वयं खा–पी लेना, पर गुड़ धुला पानी ही दे भेजना।

चम्बा जनपद में वैसाखी के लिए 'बसोआ' शब्द प्रचलित है। इस त्यौहार पर बहनों–बेटियों को बुलाकर आदर और प्यार पूर्वक पकवान खिलाने की परंपरा है। यदि वे किसी कारण मायके न आ सकें तो उन्हें त्यौहार ससुराल में भेजते हैं। इस त्यौहार पर दूध या पानी में गुड़ घोल कर, जिसे गुड़ानी कहते हैं, के साथ पिन्नियां खिलाने की परंपरा है। पिन्नियां कोदरे के आटे में खमीर डालकर बनाई जाती है। उन्हें बैसाखी से पूर्व अखरोट के पत्तों की तहों में रखा जाता है जिससे दूसरे दिन रोटी खमीरी बन जाती है। चम्बयाली में इन्हें पिंदड़ी कहते हैं। इस त्यौहार पर मायके के बुलावे की प्रतीक्षा में बैठी, राह बिसूरती बहन या बेटी को जब कोई बुलाने नहीं आया होगा तभी यह गीत उनके अधरों पर उभरा होगा, आज भी परंपरित है जो इस अवसर पर महिलाओं द्वारा गाया जाता है।

समय के साथ कई रीतियां–रिवाज विस्मृति के पर्ती में दब जाते हैं। जब–जब है। इसी प्रसंग से जुड़ा

एक और गीत में गाया जाता है। इसमें त्यौहार पर नए वस्त्र उन लोकगीतों की हवाएं बहती है तो वे रीतियां–परंपरायें मुंहसरोखी करने लगती पाने की लालसा भी गहती है जो अव्यक्त रूप में व्यक्त होती है। वास्तव में जब त्यौहार भेजा जाता है तो पकवानों के साथ ऋतु अनुकूल वस्त्र भी दिए जाते हैं। ऐसे ही भावों को व्यक्त करता है यह लोकगीत –

सीकरिए ओ पारे!
मेरिये! सीकरिये ! ओ घारे!
धारे, जित्ते मुरूआ-मुरारी फुले हो।
मेरियो नगरे दियों कुड़ियों! चिड़ियो!
तुसां फुल चुगणे जो ईये हो।
मेरिये धारे दीए तरेली,
तरेली मेरे मोचडू हो, हो सीजे हो।

अतः सीकरी नामक धार पर मरूआ–मुरारी (ऋतु फूल) फूले हुए हैं। मेरे नगर की कुड़ियो (लड़कियों) चिड़ियो! तुम फूले चुनने आओ। सीकरी धार पर रिमझिम वर्षा हो रही है, जिससे मेरी जूतियां भीग जाएगीं। मैं कैसे आ सकती हूं? तेरी जूतियां पुरानी हो गई हैं।

सुखरात कुड़ियो ! चिड़ियो !
गुड़के चमके आया मेघा हो।
हो राणी चम्बयाली रे देसा हो।
किआं गुड़कां, किआं चमकां हो,
हो अंबर भरोरा तारे हो।
कुथुए ते आई काली बादली हो, कुयुए दा बरसेया मेघा हो।

चम्बा नगर के शीर्ष पर स्थित रानी सूही का मंदिर सदियों पूर्व नगर की जत समस्या आपूर्ति हेतु दिए बलिदान की स्मृति को सहसा दोहरा जाता है। सूही सूई जातरा या बसोआ अर्थात् वैशाखी मेला के अवसर पर चम्बा नगर में राजमहल के बेहड़े से उभरता यह गीत पूरे नगर की गलियों, मार्गों, ढलानों तथा बस्तियों पर पसरता हर किसी को संवेदित करता है। राजा साहिल वर्मा की पुत्री चंपावती के नाम पर ख्यात चम्बा नगर विभिन्न संस्कृतियों का संगम होने पर भी चंबयाली संस्कृति की पहचान देता है। समय के पदचिह्नों को रेखांकित करते अनेक लोकगीत रखे गए हैं इस धरती पर जिनमें लोक और शास्त्र का सहज संगम दिखाई देता है। ऋतु पर्व पर कुजंड़ी, मल्हार का अद्भुत ठाठ सुनने को मिलता है। चम्बा के चौगान से उठते ये सुर संगीत हवा में हवा होते चम्बयाली पहाड़ियों पर उड़ते–धुमड़ते बादल जहां–जहां बरसते हैं वहां प्रेम की सजरी पौगरें झूमने लगती हैं। लोक गायक ने कूजंड़ी के माध्यम से प्रेमिका के मन की बात कुछ यूं कही है –

उड़! उड़! कुंजड़िये!
बरखा दे ध्याड़े ओ।
मेरे रामा जीन्देआ दे मेले हो।
वे मना! याणी मेरी जान।।

उड़! उड़! कूजड़िये!

अतः मिंजर की अंतिम संध्या के आंचल में छिपे संयोग और वियोग में डूबते–उबरते मन की स्थितियां को कौन जान सकता है। महसूस करता है तो केवल वही जो इन स्थितियों से गुजरता है, इन्हें जीता, झेलता है। चम्बा के लोकगीतकारों द्वारा अनुभूत ये स्थितियां लोकगायकों द्वारा कुंजड़ी गीतों में इस प्रकार व्यक्त हुई हैं, जिससे भाषा के दायरे व्यापक बनते गए हैं। आज भी मिंजर पर्व पर चम्बा के चौगान में भरे उमड़े जन समूह में गूंजती है। बरसात के मेघदूत जब–जब पहाड़ियों पर संदेश देते घुमड़ते उड़ते हैं तो राग मल्हार की सुर माधुरी सहसा सुनाई देती है, छिझोंटी, फाटेड़ी गीति शैली में। बरसाती फुहार से भीगता चम्बा इस लोकसंगीत शैली के बहाने एक असहनीय वेदना बांटता समूचे माहौल को संवेदित कर जाता है।

कुंजू का गीत' लोग बड़े चाव से सुना करते हैं। कुंजू चम्बा–भरमौर तक ही परपरित लोकप्रिय लोकगीत नहीं है बल्कि कांगड़ा, मंडी आदि क्षेत्रों में भी इस लोकगीत की लोकप्रियता मिलती है। वास्तव में ऐसे लोकगीत जिनमें दो प्रेमियों का प्रेम, सामाजिक व्यवस्था या रूढ़ियों की बलि चढ़ जाता है तो वे लोकगीत सर्वकालिक और सार्वजनिक हो जाते हैं। जैसे पंजाब के हीर रांझा, ससि–पुन्नू, लैला–मजनू के किस्से या अमर प्रेम की कहानियां आज भी लोकधारा में परपरित मिलते हैं। वैसे ही हिमाचल में कुन्जू–चन्चलो, सुन्नी–भूखू, रांझू–फुलमू की अमर प्रेम कहानियों ने लोक गायन में अमर स्वर पाए हैं। कुन्जू–चन्चलो का लोकगीत तो हर गड़रिए या फुहाल की व्यूंखली–बांसुरी का मनभावन सुर है। इन दो प्रेमियों की कहानी का यह लोकगीत कुछ यूं गाता–सुनाता है–

कपड़े धोआं छम-छम रोआं कूजूंआ !
हाय वो मेरिए जिन्दे, बिच कै बो नसाणी हो
बिच के बो नसाणी हो?
कपड़े धोआं छम-छम रोआं कूजूंआ !
बिच गजरा नसाणी हो
नित दी होइयां सलामा कुन्जूआ
शिवजी करला रखुआली हो।

कपड़े धोती–रोती चौंचलों अपने कन्जू को वास्ते डालती है कि मेरे गांव मत आना। तेरे बैरियों ने तुझे मारने हेतु बंदूकें भर ली हैं। परंतु कुन्जू कहता है कि तेरी मेरी प्रीत बड़ी पुरानी और पक्की है शायद तू नहीं जानती पहचानती। कुन्जू! देखों मेरी बांहों में लाल चूड़ा सजा है, बीच में गजरा निशानी है। कुन्जू लोग तो कहते हैं कि चौंचलो काली है, परन्तु मुझे तो तू 'मरूए की डाली' अर्थात् अत्यंत सुंदर लगती है। चन्चलो–मेरे कून्जू! मुझे भुला मत देना, मुझे सदैव स्मरण रखना। कुन्जू–तूं और तेरा प्यार मुझे सदा स्मरण रहेगा, बेशक प्राण क्यों न निकल जाएं। चौंचलो–मेरे कुन्जू! तुम्हें मेरी सदा–सदा की सलाम! शिवजी तुम्हारी सदा रक्षा करेगें। ये लोकगीत गद्दी जनजाति के जीवनशैली, पहाड़ों की सरलता और पारंपरिक मान्यताओं को जीवंत रखते हैं।

निष्कर्ष :

लोक–साहित्य में लोकगीत सर्वाधिक प्राचीन माने जा सकते हैं। जंगल में उगे पेड़–पौधों की तरह इनका इतिहास अनादि है। ये कब शब्दों में बंध गए, स्वरों में गुंथ गए, यह कोई नहीं बता सकता। ये श्रुति परम्परा से ही निरन्तर विकसित एवं रक्षित हुए हैं। संगीत की अद्भुत शक्ति ने इनमें आकर्षण भरा और लोकजीवन की

मार्मिक अनुभूतियों ने इन्हें लोगों का कण्ठहार बनाया। लोकगीत तो सहज उद्‌भूत संगीत योजना है। साहित्य और संस्कृति की सभ्यता का आकलन बिना वाचिक परम्परा के अध्ययन के कर पाना असम्भव है। लोक–साहित्य निश्चय ही कर्मशील लोकजीवन की सामूहिक उपलब्धि है। पीढ़ी दर पीढ़ी लोकगीतों को साहित्यिक व संगीतात्मक दृष्टि से निरंतर आगे बढ़ाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। लोकगीत प्रायः युग की प्रिय व अप्रिय घटनाओं से जन्मते हैं। इन गीतों में युग की सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों का समावेश होता है। यद्यपि लोकगीत मौखिक परंपरा में जीवित रहते हैं। इनका सृजन कब और कैसे हुआ इसका उत्तर देना सहज नहीं है। गांवों की लोकनारियों मुख्यतः वृद्धा स्त्रियों से इन गीतों को गवाकर, रिकार्ड कर सकलित व स्वर लिपिबद्ध कर इस धरोहर को लुप्त होने से बचाया जा सकता है। इन लोकगीतों को संग्रहित भी किया गया है।

लोकगीत को आधुनिक समय में स्वर लिपियांकन के माध्यम से ही बचाया जा सकता है। कांगड़ा और चम्बा के लोकगीत हिमाचल प्रदेश की समृद्ध संस्कृति और प्राकृतिक सुंदरता के दर्पण हैं। ये गीत मुख्य रूप से प्रेम, बिछड़न, प्रकृति, विवाह और दैनिक जीवन पर आधारित होते हैं, जो ढोल–नगाड़े, बांसुरी और रणसिंघा जैसे पारंपरिक वाद्यों के साथ गाए जाते हैं। यह लोकगीत मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक ज्ञान को पहुँच रहे हैं जो स्थानीय पहचान को बनाए रखने का महत्त्वपूर्ण साधन है। अतः कांगड़ा–चम्बा के लोकगीत हिमाचल की जीवंत सांस्कृतिक विरासत और भारतीय ज्ञान परंपरा के संवाहक हैं।

संदर्भ ग्रंथ :

1. चमन लाल गुप्त, हिमाचली संस्कृति एवं समाज : लोकगीतों के दपर्ण में, पृ० 12
2. चमन लाल गुप्त, हिमाचली लोकगीत मंजूषा, पृ० 16
3. वही, पृ० 17
4. वही, पृ० 30
5. गौतम शर्मा व्यथित, हिमाचल के लोकगीत, पृ० 6
6. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य, पृ० 81
7. रमेश चन्द्र मस्ताना, लोकमानस के दायरे, पृ० 81
8. साक्षात्कार (गौतम शर्मा व्यथित, रमेश चन्द्र मस्ताना, गुलशन पाल)

ईमेल– drraniusha@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 17–22
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

समकालीन साहित्य लेखन में हाशिए की आवाजें

डॉ. योगेश कुमार यादव
सह आचार्य,
हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय नारनौल।

समकालीन साहित्य लेखन में लेखकों ने अपनी कलम का माध्यम हाशिए के समाज को ही बनाया है। हाशिए के समाज अर्थ है समाज के उस वंचित, अल्पसंख्यक वर्ग से है, समाज से बहिष्कृत लोग, जो मुख्य धारा से हाशिए/किनारे पर धकेल दिया जाता हैं। ये हमेशा से ही समाज के केंद्र में जाने व हितों के लिए लगातार संघर्षरत रहते हैं। जैसे– गरीब, मजदुर, स्त्री, अल्पसंख्यक, आदिवासी व जनजातियां इनका जीवन बहुत कठिन व दयनीय है। समाज में व्याप्त कुरीतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, विश्वास, धार्मिक मान्यताओं का उल्लेख किया गया है। समाज के ऐसे वर्ग को स्थान दिया है जो कम लाभ पाने की स्थिति व असुरक्षित वर्ग, शारीरिक व भावात्मक रूप से अति संवेदनशील समूह है।

"हाशिये के समाज की सबसे बड़ी पहचान हमेशा संकट में रहने की स्थिति में होता है। कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी स्थिति है, जिसका अनुभव 'हाशिये के लोग' बराबर करते हैं। अपनी मूल संस्कृति और समाज के कट जाने के बाद उन्हें हमेशा इस बात का डर बना रहता है कि पता नहीं उनके ऊपर कब कौन–सा संकट आ जाए। आर्थिक और विपरित भौगोलिक परिवेश के कारण व्यक्ति स्थान परिवर्तन करता है तथा अपने आपको एक नई जगह पर व्यवस्थित करने की कोशिश करता है, जो एक तरह से अस्थायी होता है।"[1]

"हाशिये के लोगों की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक परिवेश में पहले बढ़ने के कारण धीरे–धीरे उनके व्यक्तित्व में दोहरापन आने लगता है और ड्यू ब्वायज के शब्दों में वह दोहरी चेतना एकदम एकाएक नहीं होती बल्कि दो संस्कृति के मध्य वह ताकतवर या मुख्यधारा अपने आपको व्यवस्थित न कर पाने की स्थित में स्वयं को हाशिये पर खड़ा महसूस करने लगता है। इस संस्कृति अंर्तद्वंद्व का मूल कारण यह होता है कि व्यवस्थित करने की कोशिश करता है इसका कारण आर्थिक विषमता होती है। ऐसे में प्रभावशाली समूह का आविष्कार करना ही इस मनुष्य के लिए हाशिये पर खड़ा होना है। अर्थात स्थान परिवर्तन भी मूल कारणों में एक कारण है जिससे मानव संकट में पड़ जाता है तथा स्वयं को हाशिये पर महसूस करता है।"[2] समकालीन साहित्य लेखन में लेखकों ने अपनी कलम के माध्यम से हाशिये की आवाज को स्थान दिया है, साहित्य समाज को नई दिशा देता है। साहित्य समाज की यथा स्थिति प्रस्तुत कर, उसमें हो रहे उतार–चढ़ाव के समाधान को खोजता है। जिसके द्वारा व्यक्ति उस समाज को जान सकता है जिससे वह अब तक अनभिज्ञ

रहा है। जो इस प्रकार है–

1. गरीबी –

किसी भी समाज व देश के विकास के लिए गरीबी सबसे बड़ा अभिशाप है। लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान के लिए संघर्ष करना पड़ता है। दूसरी ओर पूंजीपति लोग अपना उच्च जीवन यापन करते हैं। इस स्थिति से जूझते समाज में गरीब व अमीर के बीच गहरी खाई बढ़ जाती है। जिसकी वजह से गरीब और गरीब, अमीर और अमीर होता चला जाता है। हाशिये के समाज में गरीबी की समस्या लम्बे समय से चली आ रही है। सरकारी योजनाओं की जानकारी न होने के कारण जरूरतमंद लोगों के पास पहुँच नही पा रही हैं, ये योजनायें फाइलों में ही सिमट कर रह जाती हैं। बच्चे, बूढ़े, विधवा, तलाक शुदा महिलाएं, बेघर, जरूरतमंद लोग सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं। आज भी दस में से चार लोग गरीबी में जीवन यापन करते हैं। मुस्लिम लोग परिवार नियोजन की बात पर अमल नहीं करते हैं। इस बढ़ती जनसंख्या की वजह से इन्हें खान–पान, रहन–सहन आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता है। राजनेताओं ने राजनीति के क्षेत्र में पढ़े–लिखे लोगों को नौकरियां दिलाने के उद्देश्य से रकम वसूली का गोरख धंधा खोल रखा है। गरीबी की मार को झेलते हुए बेटियों की शादी बचपन में ही कर दी जाती है, जिससे उन्हें अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। मेमन अपनी संवेदना व्यक्त करती हुई कहती हैं कि, "फिर क्या करैं मेरा अम्मीं–अब्बा..... हम गरीबां के किस्मत में यई लिक्खा है.....अगर उनकै पास ई कुछ होइता तो ऊ न भैजता इस दोजख में... ।"[3] दूसरी ओर एक गरीब विधवा 'असगरी' अनेक विपत्तियों में अपने बेटे का पालन–पोषण करती है, जो कुछ समय बाद उसको छोड़ कर चला जाता है। असगरी अपने दर्द को व्यक्त करती हुई नसीब खां से कहती है, "रईसन का बाप, छाती तो मेरी फट–फट जावे है बहू–पोतान् के बिना, पर मैं रांड कहाँ तलक मांग–मांग के लाऊँ । एकाधकूढ़ बाड़ी–बिसला भी ना है जिन्ने काई बणिया–बामण के पै (पास) गिरवी धार के ब्याज–बट्टापे पैसा–धैला उथा लेती और याहे कहीं लपेट देती।"[4]

आज समाज में गरीबी के चलते लड़कियों की खरीद–फरौख्त एक धंधा बन गया है। जिसमें मुस्लिम लड़कियां इस तरह फंस जाती हैं जिसकी तुलना जानवरों से की जाती है। शकीला, दादी जैतूनी से कहती है कि किसी गरीब का घर बसाना सबाब का काम हो सकता है लेकिन जानवरों की तरह खरीदना/बेचना अधर्म है। मुस्लिम समाज में गरीबी का मुख्य कारण खुद के विकास से ज्यादा जरूरी है, धर्म गुरु व मजहब का आकर्षण है। आधुनिक समाज धर्म के साथ–साथ शिक्षा पर ध्यान देने लगा है। आज समाज को धर्म, शिक्षा और तकनीकी का सामंजस्य बैठाकर बहुमुखी विकास की ओर अग्रसर करना होगा।

2. बेरोजगारी –

समाज में बेरोजगारी बड़ी भयंकर समस्या है, जिससे लोग गांवों से शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। वहां जाकर वे अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मेहनत, मजदूरी करते हैं। इस वजह से शहरों की जनसँख्या बढ़ रही हैं। हर दस में से पांच युवा बेरोजगार हैं। 'कुटु' व 'सच्चर' कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार मुस्लिम समाज के आर्थिक व शैक्षणिक आकड़े चौकाने वाले थे। मुस्लिम समाज स्वरोजगार, कुटीर उद्योगों को अधिक महत्त्व देता है। जिससे शिक्षा व आर्थिक स्तर में सुधार हुआ है। लेकिन आज भी पढ़े–लिखे युवा नौकरी न मिलने पर बेरोजगारी की वजह से छोटे–मोटे कार्य करने पड़ते हैं। अनुकूल नौकरी न मिलने पर निचले स्तर

के काम करने पड़ते हैं या फिर काम करते नही, जिससे युवाओं के मानसिक स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। चौ. करीम हुसैन, पढ़े–लिखे आस मोहम्मद को नौकरी का लालच देकर चिलम भरवाता है। करीम हुसैन आस मोहम्मद से कहता है कि, "अच्छा बी.ए. कर राखी है ....ठीक है फटाफट चिलम ताजी कर ला।"[5] और से फिर कहता है, "लाला, ऐसो कर जब तलक ये माणस हींन् बैठा रहाँ, तू इन्ने हुक्का भर–भर के पिलाई जा ..... मैं फारम पे होके अभी आ रो हूँ ....।"[6] इसी दौरान आस मोहम्मद चिलम भरते–भरते जिल्लत महसूस करने लगा, आखिर नौकरी का सवाल था। लेकिन अंत में परेशान होकर वह घर चला जाता है और बेरोजगार ही रह जाता है।

समाज में बेरोजगारी, अराजकता, गरीबी, अशिक्षा सभी पहलु एक–दूसरे से जुड़े हैं। सरकारी योजनाओं की जानकारी न होना, घर में बहु–बेटियों को शिक्षा से वंचित रखना। सरकार द्वारा बहुत सी योजनाएं चलाई गई, जिनका फायदा उठा कर युवा स्वरोजगार अपना सकते हैं। जैसे – लघु, कुटीर उद्योग खोलने की अनुमति, ग्रांट की मंजूरी आदि का लाभ ले सकते हैं। जिससे आत्मगौरव भरा जीवन जी सकते है।

3. शिक्षा –

शिक्षा समाज के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, जिससे समाज व देश की उन्नति हो सकती है। सरकार द्वारा सभी को शिक्षा ग्रहण करने के समान अधिकार दिए हैं। अशिक्षा की वजह से समाज में बेरोजगारी, असभ्यता, चोरी, डकैती, असामाजिकता, अमानुषिकता, कुरीतियां, रूढ़िवादिता, बाह्य आडम्बर, असंस्कार, आदि में वृद्धि हुई है। शिक्षा के द्वारा इन सब पर नियंत्रण किया जा सकता हैं। शिक्षा ही मनुष्य को समाज में आदर, सम्मान दिलाती है। आज भी मुस्लिम समाज में लोग गरीबी की वजह से शिक्षा ग्रहण नहीं करते। राजेन्द्र यादव मुस्लिम महिलाओं की गरीबी पर विचार करते हुए कहते है कि, "मुस्लिम औरतों के पास आर्थिक संरचना नहीं हैं, शिक्षा का अभाव है, वे स्कूल तो जाती हैं पर चौथी–पाँचवी के बाद पढ़ाई छोड़ देती हैं। उनकी पढ़ाई छोड़ने का कारण यह नहीं है कि मुस्लिम औरतें पर्दे में रहती हैं, मुस्लिम औरतों के नहीं पढ़ने का मूल कारण गरीबी हैं, उनकी स्थिति अनुसूचित जाति की तरह हैं, जिस वजह से अनुसूचित जाति की औरतें नहीं पढ़ पातीं हैं, उसी वजह से मुस्लिम जाति की औरतें भी नहीं पढ़ पातीं, धर्म उतना बड़ा कारण नहीं हैं।"[7]

मुस्लिम समाज में अशिक्षा का कोहरा इतना घना फैला हुआ है कि उनको सही बातें तर्कहीन ही लगती हैं। शिक्षित न होने की वजह से धर्म के नाम पर अराजकता बढ़ती जा रही है। जब एक मासूम बच्चा 'हब्बी' मस्जिद में जाता है तो वहां पर पढ़े–लिखे लोगों की बात सुनकर वह सोचता हुआ घर आकर अपनी मां से आपसी वार्तालाप करते हुए कहता है, "नहीं अम्मा, यह बात नहीं है शहर के पढ़े–लिखे लोगों के बीच ही रहकर पता चला है कि हम पर कितने जुल्म हो रहे हैं।"[8] शिक्षा के द्वारा ही इन सब समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है, जिससे समाज में फैली अराजकता, अशिक्षा, अमानुषिकता, भेद–भाव, बेराजगारी, साम्प्रदायिकता आदि को मिटाया जा सकता है।

4. स्त्री जीवन –

स्त्री के माँ, बेटी, बहन, बुआ, चाची, नानी, दादी आदि न जाने कितने नाम हैं, जिनका एक ही रूप है स्त्री। उसको रिश्तों के अनुसार मान–सम्मान मिलता हैं। परिवार में सबसे अहमं भूमिका एक माँ की ही होती है जो अपने बच्चों का पालन–पोषण करती है। मुस्लिम समाज में सत्ताधारी पुरुष महिलाओं पर अत्याचार, जुल्म,

बच्चे पैदा करने पर पाबंधी न लगाकर, धार्मिक मान्यताओं को जबरदस्ती थोपना, पिता की सम्पति में अधिकार न देकर, दहेज, घरेलू हिंसा, खरीद–फरोक कर, तलाक, बालिकाओं की शादी, शिक्षा न देकर आदि शोषण लगातार करता आ रहा है। इन कानूनों ने महिलाओं की जिन्दगी नरक बना दी है। कृष्णा सोबती, अनामिका, मैत्रेयी पुष्पा के लेखन में भी स्त्री हर समाज के हाशिये पर रही है।

पुरुष प्रधान समाज स्त्री को अपनी सुविधानुसार प्रयोग करता है। स्त्री, समाज में विविध रिश्ते–नातों को निभाती हुई स्वयं का अस्तित्व ही भूल जाती है। पुरुष शादी इसलिए करता है कि घर में कोई काम करने वाला मजदूर आ सके। अगर किसी कारणवश स्त्री का देहांत हो जाता है तो पुरुष दूसरी शादी कर या खरीदकर ले आता हैं। इस समाज में हमेशा नारी की ही उपेक्षा हुई हैं, भोग–विलास की वस्तु माना हैं। आज भी महिलाएं अत्याचार, घरेलु हिंसा, शोषण, दहेज आदि समस्याओं से जूझ रही हैं। समाज में स्त्री को अनेक कार्य करने पड़ते हैं, काम बिगड़ जाए तो समाज के तानें सुनने पड़ते है। स्त्री का जीवन बच्चे न होने पर अधूरा व शून्य समझा जाता है और उसी को दोषी माना जाता है। जबकि स्त्री अपनी छोटी–छोटी खुशियों को परिवार में सहेजकर रखती है। समाज में स्त्री को पारिवारिक जिम्मेदारियों के साथ–साथ अनेक कार्य करने पड़ते है। लेखक विधवा असगरी के बारे में लिखते हैं, "असगरी के पास इसके अलावा कोई रास्ता भी नहीं था। उसमें इतनी ताकत तो बची है कि मेहनत–मजदूरी करके अपना पेट पाल ही सकती है। जो हो चुका उसे भूलना बेहतर है। जिसे उसकी चिंता नहीं, वह भला उसकी चिंता क्यों करें। यही सोचकर असगरी ने अपने मन को पत्थर बनाया और जिन्दगी की बाकी बची दौड़ में शामिल हो गई।"[9] इसके अलावा और कर भी क्या सकती थी?

पुरुषों द्वारा किए गए अत्याचार व गैर शिष्टाचार व्यवहार समाज की समस्या है। जब चांदमल ने 'पारों' को छेड़ा तो यह बात असगरी सहन न कर, नसीब खां को कहती है कि आज समाज में स्त्री की ईज्जत की रक्षा करना भी एक चुनौती बन गया है। 'पारो' अपनी सास असगरी को बताती है कि मेरे पिताजी भी मेरे साथ अशिष्ट व्यवहार करते थे, जो मैं यह सहन नही कर सकी। दूसरी ओर हसीना के ससुर द्वारा उसके साथ अशिष्ट व्यवहार करने की कोशिश की गई, तब हवेली की महिलाएं उसे चुप रहने के लिए कहती हैं।

तलाक व हलाला जैसे मामलों में अनेक स्त्रियाँ अकेले जीवन जीने पर मजबूर है। समाज में औरतों को जीने के लिए न कोई अधिकार है न कोई कानून/नियम है। शकीला, दीन मोहम्मद की मृत्यु के बाद अपनी बेटियों का हक मांगती हैं, तब हवेली के पुरुषों ने मेवात का कानून 'मेव कस्टमरी लॉ' के तहत बेटियों को जायदाद का हिस्सा देने से साफ मना कर दिया। इस बात को टालते हुए कहा जाता है कि, "हक तो तब दियो जाए जब कोई मना कर रो होए के तू मत बरते इन खेतन्ने। अरे, माज सु जो अच्छो लगे वाहे जोते–बोए, पर जहाँ तलक या हक–वक की बात है मेरे तो ई समझ सू बाहर है।"[10]

3. धार्मिक मान्यताएं –

भारत में विविध प्रकार की संस्कृति पाई जाती हैं। जिस प्रकार "कोस–कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी।" वाली लोक कहावत ठीक बैठती हैं। उसी प्रकार हर चार कोस पर संस्कृति व धार्मिक मान्यताएं भी बदल जाती है। मेवात में धार्मिक मान्यता के आधार पर मनीराम ने बेटे होने की खुशी प्रकट करने के लिए दादा खानू की मजार पर गलेप चढ़ाया, उसके बाद दादा खानू ने बच्चे को आशीर्वाद व दुआएँ दी। धार्मिक मान्यताएं लोगों को आपस में जोड़े रखती हैं। हमेशा ही हमारे बड़े–बुजुर्ग समझाते हैं कि समाज में मान्यताओं को बनाए

रखना जरुरी है। मुस्लिम समाज में अन्य वर्गों का आज भी सम्मान किया जाता है। जग्गा नथ्थू पंडित है, जो गाँव का रिकोर्ड रखने के लिए साल में एक–आध बार आता है, वह अपनी पौथी में वो सब नोट करता कि किसकी ब्याह, शादी, बच्चे, खरीद, बेच आदि यहाँ तक की उसको क्या खिलाया, पिलाया आदि सब लिख के ले जाता है। जग्गा नथ्थू का रिकॉर्ड आज भी मुस्लिम समाज में मान्य है। इस्लाम में पति व पत्नी आपस में दूर रहना चाहे तो तलाक, खुलअ दो मान्यताएं है। पति, पत्नी से दूर रहना चाहे तो 'तलाक' ले लेता है, अगर पत्नी, पति से दूर रहना चाहे तो 'खुलअ' ले लेती है। इसमें दोनों को बराबर व स्वतंत्र अधिकार हैं। लेकिन तलाक के बाद भी मुस्लिम महिला तभी विवाह कर सकती जब वो 'हलाला' जैसी शर्तों को माने। इस पर नसीबन, काकी कल्लो से कहती है कि, "जितनी जल्दी होए या ढेड हलाला सु तिहारो भी पीछो छूटे, और हम्भी चौन् सु रहं। मैं तो चाहू हूँ के नजराना जितनी जल्दी होए या कैद सू छूटे, और अपनी ईद या घर में आके मनाए... वैसे भी तीज–त्योहार अपणा घर में ही मनता हुआ अच्चा लगे हैं...।"[11] इस हलाला जैसी धार्मिक मान्यताओं की शिकार नजराना उसका जवाब उनकी ही भाषा में देती है।

निष्कर्ष –

समकालीन साहित्य में हाशिए के समाज के जरिये मध्यम वर्ग, वंचित वर्ग और हाशिये के समाज को रखा है। लेखकों ने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक या किसी अन्य रूप से वंचना व वर्जनाओं को आश्रय देने वाले समाज के रीति–रिवाज, कुरीतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, धार्मिक मान्यताओं आदि का सजीव चित्रण किया। समकालीन साहित्य में बिना किसी बौद्धिक आवरण के अपनी रचनाओं में ग्रामीण जीवन के लोकमानस की छवि, विडम्बना, त्रासदी, परिश्रम, सौन्दर्य, निराडम्बर आदि का यथार्थ चित्रण किया है। समाज के प्रति सुस्पष्टता व प्रतिबद्धता दिखाई देती है। इन्होंने समाज की अन्तवर्ती धाराओं के उद्‌गम तक पहुंचने का प्रयास किया है। इनकी रचनाएं सर्वसत्ता का प्रतिपादन, लोकभाषा, ग्रामीण जीवन शैली, लोकसंस्कृति, नैतिक संभावनाओं, परम्परा, लोकशील, विकास एवं लोकतंत्र को नई संभावनाओं के साथ जिजीविषा प्रदान करती हैं।

अशिक्षा और अज्ञानता के कारण ये गरीबी और अभावों में ही अपना जीवन यापन करते हैं। वे निरन्तर सामाजिक रूढ़ियो, अंधविश्वासों, कुरूतियों, धार्मिक मान्यताओं का शिकार होते रहते हैं। वर्तमान समय में स्त्री की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। सरकार द्वारा शिक्षा, धर्म, रोजगार, औद्योगिक, राजनीतिक व सामाजिक संस्थाओं में भी उनकी भूमिका स्वीकार्य है। महिलाओं के विकास के लिए सरकार ने स्वावलंबन योजना व महिला सशक्तिकरण योजना, नारी मुक्ति केंद्र, सभाओं एवं संस्थाओं आदि का निर्माण किया है। आज महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गई हैं। शिक्षित नारी घर, परिवार, समाज और देश को शिक्षित करती है। घर से लेकर देश के विकास तक महिलाओं की अहमं भूमिका हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. कुमार दीपक सं. चौबे देवेन्द्र हाशिये का वृतांत– आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा, 2018, पृष्ठ–59
2. कुमार दीपक सं. चौबे देवेन्द्र हाशिये का वृतांत– आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा, 2018, पृष्ठ–13
3. भगवानदास मोरवाल, काला पहाड़, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज,

नई दिल्ली– 110002, पहला संस्करण– 1999, पृ. –299
4. भगवानदास मोरवाल, बाबल तेरा देस में, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 02, पहला संस्करण–2004, पृ. 12
5. भगवानदास मोरवाल, काला पहाड़, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली– 110002, पहला संस्करण– 1999, पृष्ट –152
6. वही, पृ.– 152
7. राजेन्द्र यादव, हंस, अगस्त 2003, पृ.–15
8. भगवानदास मोरवाल– लक्ष्मण रेखा– राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017, पृ.–127
9. भगवानदास मोरवाल, बाबल तेरा देस में, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 02, पहला संस्करण–2004, पृष्ट 14
10. वही, पृ.–455
11. भगवानदास मोरवाल, हलाला, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली– 2016, पृष्ठ 16

Yogeshcil@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 23–30
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

मोटापा के प्रबंधन में योग–प्राणायाम–ध्यान एवं आहार का एक 'प्रयोगात्मक अध्ययन'

योगाचार्य राजकुमार भारती (पीएचडी स्कॉलर इन योग)
सहायक प्रोफेसर स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग,
देशभगत विश्वविद्यालय, मंडी गोबिंदगढ़ पंजाब।

परिचय (Introduction) –

मोटापा 21वीं सदीं की सबसे बड़ी स्वास्थ्य चुनौती के रूप में उभर कर आया है। आधुनिक जीवन शैली में गतिहीनता और गलत खान–पान ने मोटापे एक वैश्विक महामारी बना दिया है, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार शरीर में अत्यधिक वसा का संचय जो स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाले "मोटापा" कहलाता है। जंक फूड और मानसिक तनाव के कारण हार्मोनल असंतुलन जैसे इन्सुलिन रेजिस्टेंस और कॉर्टिसोल की वृद्धि हो जाता है जिससे मोटापा बढ़ जाता है।

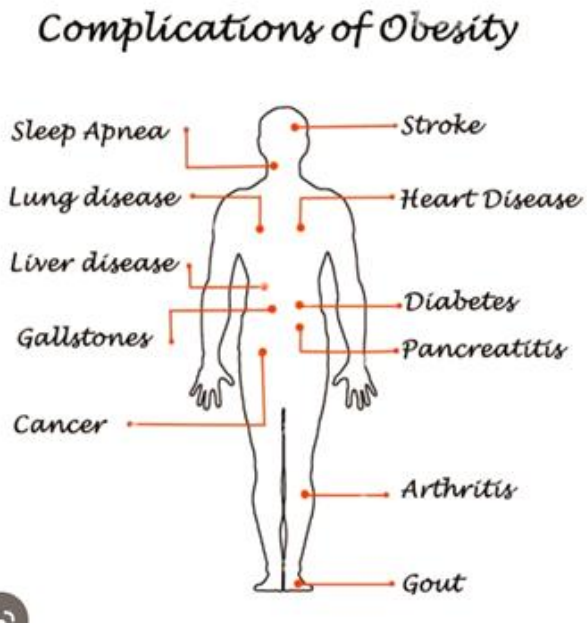

योग की भूमिका –

योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है बल्कि एक समग्र जीवन पद्धति है जो शारीरिक मानसिक और

आत्मिक संतुलन स्थापित करती है इससे केवल कैलरी वर्ण नहीं होता बल्कि हाइपोथैलेमस पिट्यूटरी एड्रेनल एक्सेस को संतुलित करने की यह प्रक्रिया है शोध से यह पता चला है कि योग क्रियाएं और नियंत्रित आहार मोटापे को वैज्ञानिक रूप से काम करने में सहायक है।

परिभाषा (Definition of obesity and Yoga) –

मोटापा इसे स्थूलता के रूप में जाना जाता है जब बॉडी मास इंडेक्स (बीएमआई) 25 से 29.9 तक होता है तब व्यक्ति ओवरवेट होता है और जब बॉडी मास इंडेक्स 30 से अधिक होता है तो उसे मोटापा की श्रेणी में रखा जाता है।

यौगिक दृष्टिकोण –

अन्नमय कोष अर्थात शरीर में असंतुलन और प्राणमय कोष में अवरोध ही मोटापा का मूल कारण है।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में संतुलित जीवन शैली का मूल मंत्र आहार विहार को मना है और कहा है :

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

अर्थात्, जो मनुष्य उचित आहार और उचित विहार (घूमना फिरना या मनोरंजन) करता है जो अपने सभी कर्मों में संतुलित चेष्टा प्रयास करता है और जिसका सोना जगना नियमित (ना बहुत अधिक ना बहुत कम) ऐसे व्यक्ति का योग सभी दुखों को नाश करने वाला बन जाता है।

युक्त आहार अर्थात् आहार का केवल खाने से नहीं बल्कि इंद्रियों द्वारा ग्रहण की जाने वाली हर चीज से है। भगवान श्री कृष्णा कहा है भोजन ना तो बहुत अधिक होना चाहिए ना ही बिल्कुल कम सात्विक और ताजा भोजन मन और शरीर को स्वस्थ रखता है। विहार जीवन में केवल काम ही नहीं बल्कि उचित मनोरंजन और विश्राम भी आवश्यक है। विहार का अर्थ है अपने जीवन शैली को इस तरह ढ़ालना जिससे शरीर और मन को शांति मिले, शरीर स्वस्थ रहे ना मोटा ना ज्यादा पतला।

युक्तचेष्टस्य कर्मसु (कर्मों में सही प्रयास) : अपने कर्तव्यों या कार्यों को करते समय अति से बचना चाहिए। न तो आलस्य करना चाहिए और न ही फल की चिंता में खुद को अत्यधिक तनाव देना चाहिए।

युक्तस्वप्नावबोधस्य (नियमित निद्रा) : पर्याप्त नींद और सही समय पर जागना मानसिक स्पष्टता के लिए अनिवार्य है। रात्रि को 10:00 बजे तक सो जाना और सवेरे 5.00 बजे तक जाग जाना सही दिनचर्या माना गया है, अतः स्वस्थ जीवन के लिए हमारा आहार बहुत ही आवश्यक है।

योग की परिभाषा :–

महर्षि पतंजलि के अनुसार **'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'** अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।

मोटापे के संदर्भ में योग चयापचय (Metabolism) को विनियमित करने और अंतःस्रावी ग्रंथियां (Endocronic Glands) को संतुलित करने की एक प्रक्रिया है।

शोध पद्धति (Research methodology) – इस अध्ययन में प्रयोगात्मक अनुसंधान (Experiment Research) अपनाई गई है।

प्रयोगात्मक अध्ययन का उद्देश्य (Objective of Study) –

इस अध्ययन का उद्देश्य यह जांचना है कि 90 दिन के नियमित योगासन, प्राणायाम, ध्यान और संतुलित

आहार से शरीर के वजन, BMI, कमर–कूल्हे के अनुपात (Waist-Hip Ratio) और वसा प्रतिशत में क्या परिवर्तन आता है।

प्रतिदर्श (Sample) –

30 से 50 वर्ष की आयु के 60 मोटे व्यक्तियों का चयन किया गया जिसका बीएमआई 35 से ज्यादा और कोई गंभीर हृदय रोग नहीं।

30 मोटे व्यक्तियों का प्रयोगात्मक समूह 30 नियंत्रण समूह। अवधि 90 दिन का नियमित सत्र।

हस्तक्षेप (Intervention) :–

प्रतिभागियों को प्रतिदिन 60 मिनट का योग अभ्यास कराया गया जिसमें आसन–प्राणायाम और ध्यान शामिल थे।

मापन उपकरण :–

बॉडी मास इंडेक्स (BMI), कमर कुल्हा अनुपात (WHR) और शरीर में वसा का प्रतिशत।

अभ्यास माड्यूल (Experiment Module) :–

अध्ययन में निम्नलिखित यौगिक क्रिया को शामिल किया गया।

षटकर्म – कुंजल क्रिया (पाचन शुद्धि हेतु) और कपालभाति (फैट दहन हेतु), कपालभाति में प्रति सेकंड एक झटके के साथ श्वास बाहर छोड़ना (5–10 मिनट)। यह पेट की 'विसेरल फैट' (Visceral Fat) को गलाने में सहायक है।

आसन :– सूक्ष्म व्यायाम, सूर्य नमस्कार 12 चक्र, ताड़ासन, त्रिकोणासन, पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन पादहस्तासन और धनुरासन।

प्राणायाम :– भस्त्रिकाः तीव्र गति से श्वास लेना और छोड़ना। यह शरीर में ऊष्मा पैदा कर वसा के ऑक्सीकरण (Oxidation) की प्रक्रिया को तेज करता है।

अग्निसार, सूर्य भेदी से चयापचय दर बढ़ाने हेतु नाड़ी शोधन एवं भ्रामरी प्राणायाम मानसिक शांति हेतु।

ध्यान (Meditation) : 15 मिनट का ओमकार ध्यान तनाव कम करने के लिए क्योंकि तनाव हार्मोन कॉर्टिसोल मोटापे का मुख्य कारण है। ध्यान प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स को सक्रिय करता है, जिससे निर्णय लेने की क्षमता और फोकस बढ़ता है, ध्यान से सेरोटोनिन और डोपामाइन जैसे 'खुशी के हार्मोन' बढ़ते है।

प्रमुख योगासनों का प्रयोगात्मक विवरण (Description of Key Asanas) :–

1. **सूर्य नमस्कार (The Sun Salutation) – 'सर्वांगीण व्यायाम'**

यह 12 स्थितियों का एक चक्र है जो पूरे शरीर के मेटाबॉलिज्म को सक्रिय करता है।

मोटापे पर प्रभाव : 12 चक्र सूर्य नमस्कार लगभग 160 कैलोरी बर्न करते हैं और थायराइड ग्रंथि को उत्तेजित करते हैं।

2. पश्चिमोत्तानासन (Seated Forward Bend) – उदर वसा नाशक

यह आसन सीधे तौर पर पेट के घेरे (Waist Circumference) को कम करने के लिए जाना जाता है। इस स्थिति में 30–60 सेकंड तक रुकें।

वैज्ञानिक लाभ : यह जठराग्नि (Digestive Fire) को तीव्र करता है और 'पेनक्रियाज' (Pancreas) की कार्यक्षमता बढ़ाता है।

3. त्रिकोणासन (Triangle Pose) – 'पार्श्व वसा (Side Fat) हेतु :

कमर के किनारों पर जमी चर्बी (Love Handles) को कम करने के लिए यह सबसे प्रभावी है।

वैज्ञानिक लाभ : यह शरीर के निचले हिस्से में रक्त संचार बढ़ाता है और 'हिप्स' व 'कमर' को सुडौल करता है।

भुजंगासन (Bhujangasana) : पेट की चर्बी कम करने और कमर दर्द में आराम के लिए।

धनुरासन (Dhanurasana) : यह पेट के अंगों को उत्तेजित करता है और पाचन सुधारता है।

पादहस्तासन (Padahastasana) : पेट की चर्बी कम करने में सहायक बनाता है।

यौगिक आहार योजना (Yogic Diet Plan)

मोटापा कम करने के लिए 'मित-आहार' (Moderate Diet) चार्ट :

समय आहार का प्रकार मुख्य तत्व

प्रातः (6:30 AM) डषापान और शोधन पेय गुनगुना नींबू–पानी या अफ्रेश एनर्जी ड्रिंक (Afresh Energy Drink), यह एक लो–कैलोरी (Low-Calorie) ड्रिंक है, जो वजन घटाने की यात्रा में ऊर्जा बनाए रखने में मदद करता है।

इसमें मौजूद ग्रीन टी और ऑरेंज पीको (Orange Pekoe) एक्स्ट्रेक्ट मेटाबॉलिक रेट को बढ़ाते हैं, जिससे कैलोरी तेजी से बर्न होती है।

नाश्ता (8:30 AM) अंकुरित मूंग, ओट्स, दलिया या हाई प्रोटीन और उच्च फाइबर न्यूट्रिशन शेक (Nutritional Shake) यह शेक भोजन का एक प्रतिस्थापन (Meal Replacement) है, जो वजन कम करने के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है बिना अधिक कैलोरी के, यह भोजन की तुलना में बहुत कम कैलोरी प्रदान करता है, जिससे वजन घटाने के लिए जरूरी 'कैलोरी की कमी' (Calorie Deficit) बनी रहती है। इसमें प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और खनिज होते हैं जो मांसपेशियों को बनाए रखने (Muscle Maintenance) और भूख को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

उपयोग : इसे नाश्ते या रात के खाने (Dinner) की जगह लिया जाता है।

दोपहर का भोजन (1:00 PM) खूब सारा सलाद और संतुलित आहार मिस्सी रोटी (जौ–चना), हरी सब्जियाँ और दाल।

दोपहर (3.30 PM) मौसमी फल।

शाम का नाश्ता (4:30 PM) हल्का पेय अफ्रेश एनर्जी ड्रिंक या ग्रीन टी और भुने हुए मखाने।

रात्रि का भोजन (7:30 PM) हाई प्रोटीन और उच्च फाइबर न्यूट्रिशन शेक या हल्का और सुपाच्य सुपाच्य मूंग दाल खिचड़ी लौकी/तोरई की सब्जी, मूंग दाल का सूप (सोने से 3 घंटे पहले)।

क्या न खाएं : प्रोसेस्ड फूड, चीनी, मैदा, फास्ट फूड और ज्यादा तला–भुना खाना एवं मासांहार न खाये। मोटापा कम करने का अर्थ भूखा रहना नहीं, बल्कि सही समय पर सही भोजन करना और शरीर को यौगिक कार्य

द्वारा ऊर्जावान बनाना है। वजन घटाने में 80% खान–पान का (रोल डाइट) और 20% रोल एक्सरसाइज का होता है। हम जो खाते हैं, वह मेटाबॉलिज्म और कैलोरी कंट्रोल के लिए सबसे महत्वपूर्ण है, जबकि एक्सरसाइज शरीर को शेप देने, मांसपेशियां (Muscles) मजबूत बनाने और वजन को लंबे समय तक नियंत्रित रखने में मदद करती है। हमें पोषक तत्वों से भरपूर, कम कैलोरी वाली चीजें (हरी सब्जियां, फाइबर, प्रोटीन) खानी चाहिए। मोटापा कम करने के लिए सही मात्रा में पानी (20 kg वजन पर 1 Litre) भी पीना चाहिए।

प्रयोगात्मक अभ्यास तालिका (Yoga Practice Module)

अभ्यास का प्रकार	विशिष्ट क्रियाएँ समय / आवृत्ति	लाभ (मोटापे के संदर्भ में)
षट्कर्म	कपालभाति, अग्निसार 5–10 मिनट	जठराग्नि प्रदीप्त करना और पेट की चर्बी घटाना।
गतिशील अभ्यास	सूर्य नमस्कार 5 से 12 चक्र	पूरे शरीर का मेटाबॉलिज्म बढ़ाना और कैलोरी बर्न करना।

खड़े होकर आसन ताड़ासन, त्रिकोणासन, पादहस्तासन 30 सेकंड (प्रत्येक) कमर की चर्बी कम करने (Side fat) और रीढ़ की हड्डी के लचीलेपन हेतु।

बैठकर आसन पश्चिमोत्तानासन, अर्ध–मत्स्येंद्रासन 1 मिनट (प्रत्येक) पाचन अंगों की मालिश और इंसुलिन संवेदनशीलता में सुधार।

लेटकर आसन	धनुरासन, नौकासन, भुजंगासन 30 सेकंड (3 बार)	पेट की मांसपेशियों (Core) को मजबूत करना।
प्राणायाम	भस्त्रिका, सूर्यभेदी, नाड़ीशोधन और भ्रामरी	10–15 मिनट ऑक्सीकरण (Oxidation) बढ़ाना और तनाव कम करना।

सांख्यिकीय डेटा विश्लेषण (Statistical Data Analysis)

अध्ययन के 90 दिनों बाद प्राप्त औसत परिणाम :

मापदंड (Parameters)	पूर्व–परीक्षण (Pre-Test)	पश्चात–परीक्षण (Post-Test)	कुल सुधार
औसत वजन (Kg)	88-5 kg -	80-5 kg -	8 kg ?
BMI (Score)	35.5 (Obese)	27.2 (Overweight)	8.3 % ?
कमर का घेरा (Inches)	40.5 inch	35.2 inch	5.3 ?

चर्चा (Discussion) :

यहाँ शोध के परिणामों को दर्शाने के लिए तीन मुख्य ग्राफ का विवरण दिया गया है :

ग्राफ 1 : BMI में क्रमिक गिरावट (Line Graph)

व्याख्या : प्रयोगात्मक समूह का औसत BMI 35.5 से घटकर 90 दिनों में 27.2 पर आ गया।

ग्राफ 2 : वसा प्रतिशत बनाम मांसपेशी द्रव्यमान (Bar Chart)

व्याख्या : योग अभ्यास से 'बॉडी फैट' में 5.3% की कमी आई, जबकि 'लीन मसल मास' स्थिर रहा या बढ़ा।

ग्राफ 3 : तनाव स्तर (ब्वतजपेवस) में कमी (Pie Chart/Area Chart)

व्याख्या : ध्यान (Meditation) के कारण 70% प्रतिभागियों ने भोजन की लालसा (Cravings) में कमी अनुभव की।

निष्कर्ष (Conclusion) :

प्रस्तुत प्रयोगात्मक अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मोटापा केवल कैलोरी के गणित का खेल नहीं है, बल्कि यह शरीर के सूक्ष्म तंत्र (Endocrine System) और मानसिक स्थिति का प्रतिबिंब है। 90 दिनों के निरंतर यौगिक हस्तक्षेप (Yoga Intervention) के बाद निम्नलिखित वैज्ञानिक तथ्य स्पष्ट हुए हैं :

चयापचय दर (Metabolic Rate) में वृद्धि : सूर्य नमस्कार और कपालभाति जैसी क्रियाओं ने प्रतिभागियों के 'बेसल मेटाबॉलिक रेट' (BMR) में औसतन 12–15% की वृद्धि की, जिससे आराम की स्थिति में भी शरीर अधिक ऊर्जा (कैलोरी) खर्च करने में सक्षम हुआ।

हार्मोनल संतुलन : प्राणायाम और ध्यान के नियमित अभ्यास से कोर्टिसोल (Cortisol– तनाव हार्मोन) के स्तर में भारी गिरावट देखी गई। यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध है कि कम कोर्टिसोल स्तर 'पेट की चर्बी ('एब्डोमिनल फैट') को कम करने में प्राथमिक भूमिका निभाता है।

व्यवहारगत परिवर्तन : 'मित–आहार' और सजगता (Mindfulness) के कारण प्रतिभागियों की 'इमोशनल ईटिंग' की प्रवृत्ति समाप्त हुई। योग ने उनके मस्तिष्क के 'तृप्ति केंद्र' (Satiety Center) को पुनर्गठित किया।

स्थायित्व (Sustainability) : जिम या अन्य भारी व्यायामों की तुलना में, योग जोड़ों पर दबाव डाले बिना वजन कम करता है, जिससे इसके दीर्घकालिक अभ्यास में निरंतरता बनी रहती है और वजन पुनः बढ़ने (Yo-Yo Effect) की संभावना न्यूनतम हो जाती है।

यह शोध सिद्ध करता है कि योग. प्राणायाम. ध्यान. सात्विक आहार का एकीकृत मॉडल मोटापे के प्रबंधन हेतु एक पूर्णतः वैज्ञानिक, सुरक्षित और किफायती 'जीवनशैली औषधि' (LifestyleMedicine) है।

मुख्य शब्द (Keywords) : मोटापा (Obesity), योग (Yoga), BMI, प्राणायाम, सात्विक आहार, मेटाबॉलिज्म।

आभार (Acknowledgement) :-

मैं इस शोध कार्य 'मोटापे के प्रबंधन में योग, प्राणायाम, ध्यान एवं आहार का प्रयोगात्मक अध्ययन' को सफलतापूर्वक पूर्ण करने के लिए उन सभी व्यक्तियों और संस्थाओं का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मेरा सहयोग किया।

संदर्भ सूची (Bibliography/References) :-

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) : 'मोटापा और अत्यधिक वजन पर वैश्विक रिपोर्ट,' (2022)। आधिकारिक वेबसाइट से प्राप्त डेटा।
2. स्वामी रामदेव : 'योग साधना एवं योग चिकित्सा रहस्य,' दिव्य प्रकाशन, पतंजलि योगपीठ, हरिद्वार। (आसनों और प्राणायाम के वैज्ञानिक लाभ हेतु)।
3. बी.के.एस. अयंगर : 'योग दीपिका (Light on Yoga),' ऑरिअंट ब्लैकस्वान प्रकाशन। (योगिक मुद्राओं के सटीक विवरण हेतु)।

4. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS–5) : भारत सरकार की रिपोर्ट (2019–21), 'भारत में बढ़ते मोटापे और जीवनशैली रोगों के आँकड़े।'
5. डॉ. लक्ष्मीकांत शर्मा : 'आहार विज्ञान और पोषण', राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी। (संतुलित डाइट चार्ट और कैलोरी गणना हेतु)।
6. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ योग (IJOY) : 'मोटापा कम करने में सूर्य नमस्कार और कपालभाति का प्रभाव – एक क्लिनिकल अध्ययन', (विभिन्न शोध पत्रों का सारांश)।
7. आयुष मंत्रालय (Ministry of AYUSH) : 'योग प्रोटोकॉल फॉर'।
8. महर्षि पतंजलि : योग सूत्र (साधन पाद और विभूति पाद) – योग के मौलिक सिद्धांतों हैं।
9. स्वामी स्वात्माराम : हठयोग प्रदीपिका – षट्कर्म और आसनों के मोटापे पर प्रभाव के वर्णन हेतु।
10. सरस्वती, स्वामी सत्यानंद (2005) : आसन प्राणायाम मुद्रा बंध। योग प्रकाशन ट्रस्ट।
11. गोयल, एम. और अन्य (2014) : 'मानसिक तनाव और कल्याण के लिए ध्यान कार्यक्रम।'
12. श्रीमद्भगवद्गीता : अध्याय 6, श्लोक 17 (युक्ताहारविहारस्य...) – संतुलित आहार और विहार के महत्व हेतु।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 31-38
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

स्वतंत्रता आंदोलन एवं साहित्यिक पत्रिकाएं

डॉ. मनीष काले, अतिथि व्याख्याता,
डॉ. सोनाली नरगुन्दे, विभागाध्यक्ष,
जनसंचार एंव पत्रकारिता अध्ययनशाला, देवी अहिल्या यूनिवर्सिटी, इंदौर।

सारांश :

चेतना ही किसी के जीवित होने का प्रमाण है और यही अस्तित्व बोध भी है। जो जीवित है वहीं चौतन्य भी है। बात जब राष्ट्र की हो रही हो तो यह और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है। राष्ट्र की नसों में यदि चेतना है तो वह जीवित है। राष्ट्र एक ऐसा पक्ष जो निर्जीव होकर भी सजीव है और वह इसका अहसास भी कराता है। राष्ट्र की चैतन्यता से ही जुड़ा है, उसकी राष्ट्रीय चेतना का भाव, जो उसे चैतन्य बनाए रखता है। यह एक सामूहिक भाव है, जो राष्ट्र की रगो में बहता रहता है। लोगों के मन में यदि यह भाव जगा हुआ रहता है तो वह राष्ट्र अमर रहता है। भारत ने यह साबित कर दिया है कि राष्ट्रीयता का भाव ही इसे कभी मरने नहीं देगा। राष्ट्रीय चेतना के भाव ने ही गुलामी से भारत को आजाद कराया और यह आज भी कायम है। यही कारण है कि आज भी हम विश्व पटल पर शिखर पर विराजित है। भारतीयों के मन में राष्ट्रीयता का भाव जागृत करने और उसे बनाये रखने में कई पक्षों की महती भूमिका है, लेकिन सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका हिंदी पत्रकारिता की रही। हिंदी पत्रकारिता के विविभ आयामों में से साहित्यिक पत्रकारिता ने इस भाव को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। साहित्यिक पत्रकारिता ही थी जिसने लोगों के मन में देश प्रेम जागृत किया और अंग्रेजों के खिलाफ खड़े होने की हिम्मत भारतीयों में जगायी। गुलामी की जीवन जी रहे भारतीयों को एक जन आंदोलन में बदलकर रखने का श्रेय यदि किसी को जाता है तो वह साहित्यिक पत्रकारिता ही है।

बीज शब्द : स्वतंत्रता, साहित्यिक पत्रिकाएं, जागृति।

प्रस्तावना :

हिंदी पत्रकारिता का श्रीगणेश वैसे तो सामाजिक बुराईयों के खिलाफ आवाज बुलंद करने और हिंदी भाषा को समृद्ध करने के उद्देश के साथ हुआ लेकिन साहित्यिक पत्रकारिता ने इसमें देश भक्ति का पूट डाला और यह शब्द आंदोलन बनता चला गया। साहित्यिक पत्रकारिता में भी साहित्यिक पत्रिकाओं की भूमिका को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। वैसे तो अधिकांश पत्रिकाओं ने आजादी की अलख जगाने का काम किया, लेकिन कुछ पत्रिकाओं का तो ध्येय ही आजादी था। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की विफलता ने साहित्यिक

पत्रिकाओं की भी धार तेज को भी तेज कर दिया। इसके बाद साहित्यिक पत्रिकाओं के केंद्र में साहित्य के माध्यम से आजादी दिलाना ही ध्येय हो गया था। कुछ ऐसी हिंदी पत्रिकाएं भी है, जिन्होंने आजादी के लिये ही पूरा समय लगाया लेकिन वे गुमनामी के अंधेरे में कही खो गयी। उनका योगदाग महत्वपूर्ण था, लेकिन उनके बारे में कम ही जानकारी भारतीयों को है। प्रस्तुत शोध पत्र में ऐसी ही कुछ साहित्यिक हिंदी पत्रिकाओं का जिक्र किया जा रहा है। ये पत्रिकाएं आजादी की जंग में मिल का पत्थर साबित हुयी, लेकिन इनको पहचान नहीं मिली। कुछ पत्रिकाएं तो ऐसी भी थी जो आजादी के लिये ही आरंभ हुयी और इसके लिये ही खत्म हो गयी। इन पत्रिकाओं की भाषा शैली की बात करें या उनके मुद्दों को या फिर प्रस्तुति की, हर मोर्चे पर ये अंग्रेजों को चुनौती दे रही थी। इन पत्रिकाओं का जिक्र कर हम आजादी की जंग में अपनी कुर्बानी देने वाली साहित्यिक पत्रिकाओं को याद कर नमन करते है।

हिंदी प्रदीप, इसका प्रकाशन 1877 में इलाहबाद से हुआ था। हिंदी भाषा के प्रसार के लिये इसका प्रकाशन आरंभ किया गया था, लेकिन यह पत्र पूरी तरह राष्ट्रीयता के रंग में रंगा हुआ था। भारतेंद्रु हरिशचंद्र की भूमिका महत्वपूर्ण थी। संपादक बालकृष्ण भट्ट थे। इसमें विचारोत्तेजक लेख और आलोचनात्मक टिप्पणियाँ छपती थीं। 'हिंदी प्रदीप' हिंदी का ऐसा पहला पत्र है, जिसे एक राष्ट्रीय कविता छापने के कारण तीन हजार रूपये की जमानत न देने पर प्रकाशन बंद कर देना पड़ा। राष्ट्रीय कविता छापने पर 'हिंदी प्रदीप' से 3000 रूपये की जमानत माँगी गई जो दे पाना संभव नहीं था। अन्ततः 1908 में इसे बंद करना पड़ा। भारतीय प्रेस (अपराध उत्तेजना) अधिनियम के कारण इस पत्र को बंद करना पड़ा। 'हिंदी प्रदीप' के बंद होने का कारण माधव शुक्ल की कविता 'बम क्या है? बनी थी। वह कविता थी–

''कुछ डरो न केवल इसमें बुद्धि भरम है।
सोचो यह क्या है जो कहलाता बम है।
यह नहीं स्वदेशी आंदोलन का फल है।
नहीं बायकाट अथवा स्वराज्य की कल है।।
जब-जब नृप अत्याचार महा करते है।
और प्रजा दुखी चिल्लाते ही रहते हैं।
नहीं दीनों की जब कहीं सुनाई होती।
तब इतिहासों की बात सत्य ही होती।।
माधव कहता, यह किसका बुरा करम है।
सोचो यह क्या है जो कहलाता बम है।।''

सार सुधानिधि पत्रिका की पहचान ही अंग्रेजों के खिलाफ खुलकर जंग लड़ने के रूप में होती है। 13 जनवरी 1879 को इसका प्रकाशन कोलकाता से आरंभ हुआ। सदानंद मिश्र इसके संपादक थे और दुर्गाप्रसाद मिश्र प्रकाशक थे। यह एक साप्ताहिक पत्रिका था, लेकिन इसने लोगों को जागृत करने के लिये अंग्रेजों के खिलाफ जमकर लिखा। इसकी भाषा इतनी तेज हुआ करती थी कि वह लोगों के दिलो–दिमाग पर सीधे असर

डालती थी। निर्भिक और स्वतंत्र पत्रकारिता के लिये इसका नाम हमेशा पहचाना जाएगा। 'यमलोक की यात्रा' और 'मार्जार मूषक' जैसे लेखों में अंग्रेजों के खिलाफ खुलकर लिखा गया। लेखों से लेकर संपादकीय तक इसमें तीखी होती थी। एक उदाहरण है–

"भीतर भीतर सब रस चूसै, बाहर से तनम न धन मूसै।।
जहिर बातन में अति तेज, क्यों सखि साजन? नहिं अंग्रेज।।"

उग्र टिप्पणियों, सरकार की नाराजगी तथा आर्थिक कठिनाई के कारण 1890 में 'सार सुधानिधि' का प्रकाशन बंद हो गया।

कोलकाता से 'उचितवक्ता' का प्रकाशन 1880 में आरंभ किया। सम्पादक दुर्गाप्रसाद मिश्र थे। यह साप्ताहिक पत्र था। इसकी टिप्पणियों में एक अलग ही तरह का तेज था। अंग्रेजों के खिलाफ पत्र ने खुलकर प्रहार किये। इसकी भाषा भी तेज थी। मुख्यतः यह राजनीतिक और सामाजिक चेतना वाला पत्र था। 'उचितवक्ता' फरवरी 1887 तक लगातार निकलता रहा, लेकिन इसके बाद कुछ समय के लिये बंद होकर फिर आरंभ हुआ लेकिन ज्यादा समय तक लगातार प्रकाशित नहीं हो सका।

प्रयास से पंडित सुन्दरलाल ने हिंदी पाक्षिक 'कर्मयोगी' का प्रकाशन सितम्बर 1909 में किया। स्वराज्य, राष्ट्रवाद, स्वदेशी, बहिष्कार आन्दोलन, तत्कालीन दशा इसके मुख्य विषय थे। भारत की प्राचीन महत्ता पर भी मुख्य फोकस था। पांच महीने में ही यह पाक्षिक से साप्ताहिक समाचार पत्र हो गया था। कर्मयोगी की लेखनी से घबराए अंग्रेजों ने प्रबंधन से तीन हजार की जमानत मांगी, जो प्रबंधन नहीं दे सका और इसका प्रकाशन बंद हो गया। बंद होने के समय इसकी प्रचार संख्या करीब 10,000 थी। 1938 को लखनऊ से 'कर्मयोगी' साप्ताहिक का प्रकाशन फिर से प्रांरभ हुआ। इसके संपादक चाद थे। छह अंक बाद ही मुद्रक ने इसकी लेखनी के तेवर देखकर इसको छापने से मना कर दिया और इसे फिर से बंद का सामना करना पडा। कर्मयोगी की यात्रा यही खत्म नहीं हुई। 1939 में यह इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। एक कंपनी ने इसके प्रकाशन का जिम्मा लिया, जिसका नाम कर्मयोगी प्रेस लिमिटेड था।

मदनमोहन मालवीय ने हिंदी मासिक पत्रिका 'मर्यादा' का प्रकाशन इलाहाबाद से किया। 1910 नवंबर को आरंभ हुई इस पत्रिका के संपादक लक्ष्मीधन वाजपेयी थे। मर्यादा में राष्ट्रीयता को फोकस किया जाता था। करीब 10 सालों तक इसका प्रकाशन प्रयाग से होता था, लेकिन परिस्थिति कुछ ऐसी बनी की इसका प्रकाशन का जिम्मा ज्ञानमण्डल प्रेस को दे दिया गया। सम्पूर्णानंद को इसका संपादकीय जिम्मा सौंपा गया। सम्पूर्णानंद के जेल जाने पर कुछ समय के लिय प्रेमचंद्र ने भी इस पत्रिका का संपादन किया। मर्यादा के विशेष अंक काफी पसंद किये जाते थे। अलमोड़ा से हिंदी साप्ताहिक 'शक्ति' का प्रकाशन 1871 में किया गया। इसमें अंग्रेजों की नीतियों का खुलकर विरोध किया जाता था और राष्ट्रीय आन्दोलन का समर्थन। इसी के चलते इसका प्रकाशन बंद करना पड़ा था।

गोरखपुर से 1914 में हिंदी साप्ताहिक 'स्वदेशी' का प्रकाशन हुआ। दशरथप्रसाद द्विवेदी इसके संपादक थे। बसंत पंचमी को इसका प्रकाशन आरंभ होना था, लेकिन जिला दण्डाधिकारी ने इंडियन प्रेस एक्ट के तहत

प्रकाशन के पहले ही 500 रूपये की जमानत मांग ली। जमानत देकर 6 अप्रैल को इसका प्रकाशन आरंभ किया गया। किसी भी तरह का कोई दुष्प्रचार न हो इसके लिये पहले ही अंक में प्रबंधक ने कुछ सामग्री का प्रकाशन किया। अपना उद्देश्य स्पष्ट करते हुए पहले ही अंक में लिखा गया –''स्वदेश अपने देश को समृद्धशाली बनाने के लिए अपने सामने क्या सिद्धांत रखेगा– यह बात तो पाठक आगे चलकर इसी अंक में ही पढ़ेंगे, परन्तु संक्षेप में यह कह देना अनुचित न होगा कि स्वदेश के संचालक स्वदेश को एक सर्वप्रिय पत्र बनाना चाहते हैं। स्वदेश की नीति रूपी (भीत) दीवार सत्य और न्याय की नींव पर खड़ी होगी। यदि हमारे देशवासियों में से कुछ अथवा अधिकांश लोग अभी इस योग्य नहीं है कि वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें तो स्वदेश का प्रयत्न होगा कि वे इस योग्य बनें। यदि हमारे अधिकारियों में से कुछ अथवा अधिकांश अधिकारी (हाकिम) समय मनमाने ढंग से हुकूमत करते हैं तो उनके लिए भी 'स्वदेश' का यह प्रयत्न होगा कि वे ऐसा न करें। परमात्मा उन्हें सुबुद्धि दे।

महिलाओं पर केंद्रित पत्रिका का प्रकाशन नवंबर 1922 में प्रयाग से आरंभ हुआ, जिसका नाम 'चांद' था। रामरखसिंह सहगल इसके प्रकाशक थे। इस पत्रिका के आरंभिक दौर में महिलाओं की उपयोगी सामग्री का ही प्रकाशन किया गया, लेकिन समय के साथ इसमें बदलाव आया और कुछ ही समय में यह उन सभी मुद्दों को उठाने लगी जिनका संबंध समाज से था। यह सचित्र पत्रिका थी। समकालीन पत्रिकाओं में इसकी प्रचार संख्या सर्वाधिक 15 हजार से अधिक थी। चण्डीप्रसाद हृदयेश, नंदकिशोर तिवारी जैसे दिग्गज लोग इससे जुडे रहे। पत्रिका की पहचान उसके विशेषांकों से बनी, जो पाठकों में पसंद किये जाते थे।

इस अंक में भारत की आजादी के लिये लडने वाले क्रांतिकारियों और शहीदों की गाथाओं को वीर रस के माध्यम से पेश किया गया था। फाँसी की सजा का ऐसा वर्णन किया गया कि पडकर लोगों के रोंगटे खडे हो गये। विशाल भारत ने इस अंक पर लिखा– 'चांद' का फाँसी अंक अत्यंत भयंकर है। सवा तीन सौ पृष्ठ के इस विशेषांक की छपाई में कई सहस्त्र रूपये व्यय हुए हैं। अंक में पूरे एक सौ चित्र हैं– 9 तिरंगे, 7 आर्ट पेपर पर रंगीन और 84 सादे। लेखों में पं. पद्मसिंह शर्मा, आचार्य रामदेव जी, ख्वाजा हसन निजामी तथा श्री सुन्दरलाल जी के लेख पठनीय हैं ही। पर सबसे महत्वपूर्ण भाग विप्लव यज्ञ की आहुतियाँ है। इस अंक के संपादक आचार्य चतुरसेन शास्त्री तथा प्रकाशक श्रीयुत सहगलजी बधाई के पात्र हैं। इसके पूर्व शिशु अंक, विधवा अंक, 'प्रवासी अंक' और 'अबलाओं के इंसाफ' अंक निकल चुके हैं, जिनमें से अंतिम को विशाल भारत के संपादक एक पापमय कृत्य समझते हैं।''

चांद अंक को लेकर सरकार नाराज थी और प्रबंधन पर लगातार प्रहार किये गए। अंक जब्ती के साथ ही सरकार ने कई तरह से प्रबंधन को घेरने की योजना पर काम आरंभ किया। 'आर्यमित्र' ने 'चांद पर संकट' शीर्षक से लिखा– ''प्रयाग से प्रकाशित होने वाला सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'चांद' कुछ दिनों से सरकार का कोप–भजन बना हुआ है। पहले उसका 'फांसी अंक' जब्त किया गया, फिर 'चांद' कार्यालय द्वारा प्रकाशित 'भारत में अंग्रेजी राज' जैसी अनमोल पुस्तक की बारी आई। इसके अनन्तर युक्त प्रान्त सरकार ने 'चांद' का नाम स्कूल–कॉलिजों के लिए स्वीकृत पत्रों की सूची में से काटा और अब सी.पी. सरकार ने भी अपनी शिक्षण–संस्थाओं से इसका बहिष्कार कर दिया। सरकार की इस कोप दृष्टि के कारण 'चांद' को हजारों रूपयों की आर्थिक हानि

उठानी पड़ी। परन्तु यह बात अब तक नहीं मालूम हुई कि 'चांद' का अपराध क्या है, जिसके कारण उसे इस प्रकार सरकार के क्रोध का लक्ष्य बनना पड़ा है। अगर सरकार की दृष्टि में उसका फाँसी अंक आपत्तिजनक था तो वह जब्त कर लिया गया और वह मामला वहीं खत्म हो जाना चाहिए था। परन्तु नहीं, सरकार तो चाहती है कि उसकी शिक्षा–संस्थाओं में उसका प्रवेश ही न हो। हम तो देखते हैं कि 'चांद' के संचालक और संपादक महाशय ने भारी आर्थिक हानि उठा कर भी 'चांद' को बहुत उपयोगी बना दिया है। विशेषांक निकालने में तो उसने कमाल किया है। सरकार 'चांद' के संबंध में भले ही चाहे जो कुछ करे, परन्तु 'चांद' के प्रेमियों का कर्तव्य है कि वह उसके प्रचार में बराबर सहायक बने रहे और उसे ग्राहकों की कमी के कारण आर्थिक कष्ट न उठाने दें।''

दिल्ली से 14 अप्रैल 1923 को 'अर्जुन' का प्रकाशन हुआ, जिसे इन्द्र विद्यावाचस्पति ने निकला। सद्धर्म प्रचारक प्रेस से इसका प्रकाशन होता था। इसका ध्येय वाक्य था– ''**न दैन्यं, न पलायनम्।**'' कुछ ही समय में इसे आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पडा और यह साप्ताहिक हो गया। इसकी सामग्री गंभीर और तीखी हुआ करती थी। आर्य समाज की विचारधारा से यह पत्र प्रभावित था। तीखे लेखों के कारण ही इसके संपादक इन्द्र विद्यावाचस्पति पर मुकदमा चला और उन्हें साढ़े तीन साल की सख्त कैद और 1500 रूपये जुर्माना हो गया। इन्द्रजी को सजा पर मनोरमा ने लिखा– ''आखिर अर्जुन के संपादक या सहकारी कोई खूनी या हत्यारे तो थे नहीं और ऐसे जुर्मो में साधारणतः अपील के आखिरी फैसलों तक बराबर जमानत मिला करती है। परन्तु इस मुकदमे में सजा भी असाधारण देखने में आई और जमानत की अस्वीकृति भी एक असाधारण ही बात है।'' 1935 में सरकार ने 'अर्जुन' से 6000 रूपये की जमानत माँगी। उसी के बाद पत्र का नाम बदलकर 'वीर अर्जुन' कर दिया गया। कालान्तर में 'वीर अर्जुन' दैनिक पत्र हुआ। इसी साल सिद्धनाथ माधव आगरकर ने खंडवा से हिंदी साप्ताहिक 'मध्यभारत' का प्रकाशन किया। यह राजनीति प्रधान समाचारपत्र था। सरकार के खिलाफ इस पत्र में जमकर लिखा गया और अंग्रेजी हुकूमत की जन विरोधी नीतियों का भी विरोध किया गया। इसी के चलते 10 फरवरी 1923 को होलकर रियासत' में 'मध्यभारत' का प्रवेश, पढ़ना और पाप में रखना प्रतिबंधित कर दिया गया।

आगरा से एक जून 1925 को एक साप्ताहिक पत्र आरंभ हुआ, जिसका नाम था 'सैनिक'। श्रीकृष्णदत्त पालीवाल इसके संपादक और संस्थापक दोनों थे। श्री पालीवाल को गणेशशंकर विद्यार्थी से पत्रकारिता की शिक्षा प्राप्त हुई थी, इसलिये सैनिक की लेखनी पर भी विद्यार्थी का प्रभाव था। पालीवाल ने प्रताप और प्रभा में भी अपनी सेवाएं दी थी और यही से उनकी पहचान भी बनी। इसके शीर्षक में ध्वज लिए हुए राष्ट्रीय कार्यकर्ता का चित्र और ध्वज पर वंदे मातरम् लिखा होता था। ये दोनों इसकी पहचान थे। सैनिक के पहले संपादकीय ने ही उसके उद्देश्य को स्पष्ट कर दिया था। संपादकीय 'लड़ाई के मैदान में' शीर्षक से लिखा गया था, जिसमें लिखा गया था– ''देशवासी अहिंसात्मक सत्याग्रह संग्राम की सन्निहित शक्तियों और महती संभावनाओं को समझें। वे यह समझें कि देशव्यापी बेबसी और बेकसी के विरूद्ध, अज्ञान और अंध विश्वास के विरूद्ध, दीनता और दासता के विरूद्ध निरंतर, हर समय, हर घड़ी, हर जगह युद्ध करते–करते अपने प्राण त्याग देना मनुष्य जीवन की सर्वेश्रेष्ठ, सर्वोत्तम, सर्वोच्च और सर्वोपरि महत्वाकांक्षा है। बस एक ही अभिलाषा है। परमपिता ऐसी कृपा करे कि सैनिक

जब तक जिये, देश के लिये जिये और जिस दिन मरे देश के लिये मरे। जीवन, धन, सुख सब कुछ जाये पर वह आदर्श भ्रष्ट न होने पाये।''

सैनिक के प्रथम अग्रलेख में लिखा गया– 'सैनिक' क्रांति का सैनिक है। उसका अटल विश्वास है कि हमारे मन में, राजनीतिक जगत में ही नहीं, सभी क्षेत्रों में, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में भी, पूर्ण क्रांति की आवश्यकता है। उसकी कोशिश होगी कि वह राजाओं के महलों से लेकर गरीबों की झोपड़ी तक सभी जगह क्रांति का संजीवन संदेश सुनाए। उसकी कोशिश होगी कि वह घर–घर आजादी का अलख जगाये। सार्वजनिक मामलों में सार्वजनिक हित के लिए वह बेखौफ होकर अपनी राय देगा। दुनिया की कोई भी ताकत उसे सच्ची राय जाहिर करने से नहीं रोक सकेगी।''

अग्रलेख की भाषा भी तीखी हुआ करती थी। 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध के समय अग्रलेख लिखा गया– ''अब न चूकि चौहान''। इसमें देशवासियों का आह्वान किया गया था कि वे महायुद्ध के अवसर का उपयोग करें, देश को आजाद कराने से नहीं चूकें। सैनिक ने दूसरा लेख प्रकाशित किया– ''न एक पाई न एक भाई।'' इसमें स्पष्ट कहा गया कि युद्ध में मदद के लिए न तो एक पैसा दिया जाय और न सेना में एक भी भाई को जाने दिया जाए। बल्कि अपनी आजादी के लिये प्रयत्न किया जाए। 16 अप्रैल 1940 को दैनिक 'सैनिक' में एक लेख प्रकाशित हुआ– ''युद्ध की लपटें।'' इस पर आपत्ति करते हुए 'सैनिक' के संपादक जीवाराम पालीवाल को 'भारतरक्षा कानून' में निरूद्ध कर दिया गया। तदनन्तर श्रीपतिलाल दुबे संपादक हुए। उन्हें भी गिरूतार कर लिए जाने पर देवेन्द्र वर्मा संपादक बने। पालीवाल और दुबे को लम्बी सजा हुई।

हिंदी मासिक पत्रिका 'त्यागभूमि' का प्रकाशन अजमेर से हुआ। सस्ता साहित्य मंडल द्वारा इसका प्रकाशन किया गया। हरिभाऊ उपाध्याय इसके संपादक थे। सरकार ने अपने विरोध को लेकर इसे बंद करने का आदेश दिया। इसके अंतिम अंक के अग्रलेख में संपादक ने लिखा– ''नहीं कह सकते कि वह सु दिन कब होगा जब हम विजय प्राप्त कर लेंगे, परन्तु हम बढ़ उसी तरू रहे हैं, इसमें सन्देह नहीं। संसार का सर्वश्रेष्ठ महापुरूष महात्मा गांधी इस समय हमारा मंत्रदाता है, कर्मण्य और वीर युवक जवाहर हमारा अगुआ और सत्य–अहिंसा के ईश्वरीय अस्त्र हमारे मददगार। ईश्वर का वरदहस्त हमारे सिर पर है, संसार की पवित्र आत्माएं हमें प्रेरणा कर रही हैं और अपना शुभ उद्देश्य हमारे साथ है। भारत के नर–नारी, बूढ़े, जवान और बच्चे तक अपने रक्त और हड्डियों से स्वाधीनता के मंदिर का निर्माण करने के लिए जूझ पड़े हैं।''

हिंदी मासिक पत्रिका 'युवक' का प्रकाशन पटना से जनवरी 1923 में हुआ, जिसके संपादक रामवृक्ष बेनीपुरी थे। स्वतंत्रता सेनानियों, क्रांतिकारियों औरदेश के लिये सेवा करने वालों की गौरवगाथाओं का प्रकाशन इसमें प्रमुखता से किया जाता था। इसके बारे में विशाल भारत ने लिखा– ''युवक आन्दोलन भारत में जोर पकड़ रहा है। इसके लेखों में जोश, जिन्दादिली, अल्हड़पन और स्पष्टवादिता है।'' युवक ने सरकार के खिलाफ खुलकर लिखा और कई बार इसका खामियाजा भी भुगता। सरकार की आलोचना करने पर संपादक को जेल जाना पडा और युवक का प्रकाशन बंद हो गया। संपादक बेनीपुरी जब जेल से लौटे तो युवक को फिर से आरंभ किया गया लेकिन इसके तेवर कम नहीं हुए। 'इन्कलाब जिन्दाबाद' नाम से संपादक का एक लेख इसमें

प्रकाशित हुआ, जिस पर पत्र को सरकार ने जब्त कर लिया। यह लेख सरदार भगत सिंह, राजगुरू और सुखदेव को फाँसी की सजा को लेकर था। मुकदमा चला और अदालत ने भी संपादक को जेल की सजा सुना दी।

कानपुर से राजाराम शास्त्री के संपादन में मासिक पत्रिका 'क्रांति' का प्रकाशन हुआ। आजादी के लिये ही पत्रिका ने अपनी कलम चलायी। नेषनल प्रेस इसका प्रकाशक था। प्रथम पेज पर ही लिखा जाता था – ''क्रांति ही आजादी का सच्चा मार्ग है।'' इसके कई अंकों पर सरकार ने प्रतिबंध लगाया। इसकी हर रचना से आजादी की बात निकलकर आती थी। कोलकातां से कृषक प्रजा पार्टी का मुखपत्र 'कृषक' निकला। किसानों के हित और जागृति की बात इसमें की जाती थी।

लखनऊ से मासिक 'राष्ट्रधर्म' आरंभ हुआ, जिसके संपादक राजीवनलोचन अग्निहोत्री और अटलबिहारी वाजपेयी थे। वाजपेयी बाद में भारत के प्रधानमंत्री बने। यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विचारधारा का पत्र था। गांधीजी की हत्या के बाद संघ पर प्रतिबंध लगा जिसके कारण 'राष्ट्रधर्म' बंद हो गया। कुछ समय बाद न्यायालय के आदेश पर यह फिर से प्रकाशित हुआ जो 1964 तक प्रकाशित हुआ।

कोलकाता से 1926 सचित्र पत्रिका 'हिंदू पंच' का प्रकाशन हुआ, जिसके संपादक प्रद्युम कृष्ण कौल थे। हिंदू पंच अपने विशेषांकों के कारण पाठकों में ख्यात था। सरकार को भी इसके कई अंकों ने झटका दिया जिसमें बलिदान अंक प्रमुख था। सरकार ने इस अंक को जब्त कर लिया था। सरकार ने इस अंक को राजद्रोह माना और संपादक और प्रकाशन को निशाना बनाया। संपादक ईश्वरी प्रसार शर्मा को छह महीने और प्रकाशन मुकुन्दलाल वर्मा को चार महीने की जेल हुई। जज ने दोनों को माफी मांगने को बात कही, लेकिन दोनों ने ही इसे अस्वीकार कर दिया और जेल जाने का निर्णय लिया। 'हिंदू पंच' पर जुर्माना एवं मुकदमे पर 'कर्मवीर' ने ''हिंदू पंच पर प्रहार'' शीर्षक से लिखा–हाल ही में पत्र के संपादक, मुद्रक और चित्रकार पर, 'हिंदू हृदय' और 'मुस्लिम मनोभाव' नामक दो कार्टून निकालने पर क्रमषः तीन सौ रूपये, दो सौ रूपये, 50 रूपये इस प्रकार कुल 600 रूपये जुर्माना ठुक चुका है। गत 16 फरवरी की शाम को 'पंच' के कार्यालय पर फिर पुलिस का धावा हुआ और पुलिस 'पंच' के 28 वें अंक की कुल कापियाँ, ग्राहक रजिस्टर, कुल प्रूफ और लिखी कापी उठा ले गई। संपादक पं. ईश्वरी प्रसाद शर्मा औरप्रकाशक बाबू मुकुन्दलाल वर्मा के नाम गिरफ्तारी वारंट थे, किन्तु ढाई–ढाई सौ रूपये की व्यक्तिगत् जमानतों पर उसी समय छोड़ दिए गए। आगामी 28 फरवरी को मामले की पेशी है। 'पंच' के 28वें अंक में बलिदान शीर्षक एक नाटक छपने के कारण 153(ए) धारा लगाकर यह मामला चलाया गया है। 'हिंदू पंच' हिंदू हितों की रक्षा से कभी मूँह न मोड़ेगा, चाहे उसे कितने ही कष्ट क्यों न उठाने पड़े। हिंदू भाइयों को हिंदू पंच की सहायता के लिये सदा तैयार रहना चाहिए।''

लखनऊ से 1938 में मासिक पत्रिका 'विप्लव' का प्रकाशन यषपाल ने किया। पत्रिका ने स्वतंत्रता के लिये लडाई लडी और लोगों में जागृति लाने का काम किया। इसी कारण इसके प्रबंधन को सरकार की पाबंदियों का सामना करना पडा। सेनानियों को लेकर इसने जमकर लिखा। इसका चंद्रशेखर आजाद अंक चर्चित रहा। इसकी लेखनी को रोकने के लिये सरकार ने प्रबंधन ने 1940 में 12 हजार रूपये की जमानत मांगी गई, जिसे प्रबंधन ने नकार दिया। इसी कारण इसका प्रकाशन बंद हुआ। इलाहाबाद से 1939 में साप्ताहिक 'नया हिन्दुस्तान' को

शिवदानसिंह चौहान और सज्जाद जाहीर ने आंरभ किया। इसमें अंग्रेजी हुकूमत के विरोध में स्वर उठाये जाते थे, जिस कारण हुकूमत की पाबंदी का सामना प्रबंधन को करना पडा। सरकार ने इसके कई अंकों को प्रतिबंधित किया। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं पर लेख प्रकाशित किये जाते थे।

पटना से 1942 में साप्ताहिक 'हुंकार' का प्रकाशन हुआ। इसके प्रकाशक यमुना कार्यी थे। हुंकार की लेखनी में तेज था, जिसके कारण सरकार के विरोध का सामना करना पडा। इसकी लेखनी खडी थी, जिसकी बानगी इस प्रकार है– ''हम पूछना चाहते हैं कि यदि सम्राट के विरूद्ध अपराध है, यदि शासक के विरूद्ध शासित का हथियार उठाना अपराध है तो फिर विदेशी दासता और गुलामी से मुक्ति का दूसरा रास्ता ही कौन है? क्या उनकी दृष्टि में हाथ पसारने से ही आजादी मिलती है। जहाँ तक आजाद हिन्द फौज के उपर्युक्त अफसरों के लड़ने का प्रश्न है, अहिंसावादी उनसे मतभेद रख सकते हैं। पर जो स्वयं हिंसा में विश्वास करने वाला है, वह क्यों कर उन्हें दोषी ठहराए।''

निष्कर्ष :

गुलामी के दौर में जब अंग्रेजों के सामने अच्छे शासकों ने घुटने टेक दिये थे, तब हिंदी साहित्यिक पत्रिकाओं ने अपनी भूमिका को तय करते हुए शब्द आंदोलन की नींव रखी और देश को आजादी दिलाने में महती भूमिका निभायी। यह कहना भी गलत नहीं होता कि यदि साहित्य और समाज के बीच में यदि आजादी नहीं आती तो शायद हमें इतनी जल्दी आजादी नहीं मिलती।

Manish1kale@gmail.com 9826380480

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 39–50
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

शैलेश मटियानी के उपन्यास 'कोई अजनबी नहीं' की समीक्षा (संचारी भावों के परिप्रेक्ष्य में)

डॉ. दीपशिखा
जगत गुरू नानक देव पंजाब स्टेट ओपन विश्वविद्यालय, पटियाला।

भाव के बिना रस की ओर 'रस' निष्पत्ति के अभाव में भाव के अस्तित्व की कल्पना ही असम्भव है।[1] भारतीय काव्यशास्त्र में रस को सर्वोपरि मानते हुए कहा गया है कि रस से युक्त वाक्य ही 'काव्य' है– वाक्यं रसात्मकं काव्यम्। अर्थात् किसी भी कथन, प्रसंग तथा वाक्य (शब्दार्थ का समूह) आदि में रसाभिव्यक्ति उसे एक सर्वश्रेष्ठ 'काव्य' की संज्ञा प्रदान करती है। 'काव्य' के अन्तर्गत हम केवल पद्य साहित्य को स्वीकार न करते हुए इस बात समर्थन करेंगे कि जहां शब्द अपने अर्थ को तथा अर्थ अपने शब्द को पूर्ण करता है, अर्थात् दोनों का सामंजस्य है, वहीं सर्वोत्तम काव्य अर्थात् साहित्य के रूप में स्वीकार्य है और वह किसी भी विधा कहानी, उपन्यास, नाटक आदि में हो सकता है। अतः शब्दार्थ के उचित समन्वय होने पर साहित्य में रस और उसके पूरक भावों की उपस्थिति अवश्य होगी। अग्निपुराण में रस और भाव की पूरकता को व्यंजित करते हुए कहा गया है–

न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः।

भावयन्ति रसाननेभिर्भाव्यन्ते च रसा इति।।[2]

अर्थात् भाव से रहित रस नहीं होता एवं रस से रहित भाव नहीं होता। भावों द्वारा ही रस की भावना (अभिव्यक्ति) होती है अर्थात् रस भावों द्वारा ही भावित होते हैं। इन भाव आदि के संयोग से उत्पन्न रस की निष्पत्ति को दर्शाता यह सूत्र–

---

1 न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः।
परस्परकृता सिद्धिस्तयोरभिनये भवेत्।। नाट्शास्त्र, 6.36

2 अग्निपुराण, 339.12

विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः।।[3]

अर्थात् जहां विभाव, अनुभाव एवं व्यभिचारी भाव जिन्हें संचारी भाव भी कहा जाता है, तीनों का संयोग किसी भी स्थिति, प्रसंग, वाक्य में होता है, तो विभावादि से निष्पन्न श्रृंगार, करुण, वीर, अद्भुत आदि रस सहृदय अर्थात् पाठक, श्रोता या दर्शक को रस की अनुभूति करवाते हैं। यह सत्य कि विभाव आदि के संयोग के बिना रस की निष्पत्ति सम्भव नहीं है किन्तु इस तथ्य को भी हम अस्वीकार नहीं कर सकते कि रस की निष्पत्ति के अभाव में भी भावों का पृथक् अस्तित्व है, यद्यपि वे स्थायी भाव हैं, सात्विक भाव हैं या संचारी भाव। जब परिस्थितियों आदि के अनुरूप मानव हृदय में इन भावों की स्थिति होती है, तो वह अवस्था साहित्यकार, पाठक, श्रोता तथा दर्शक की मानसिक स्थिति के साथ–साथ उसके क्रियात्मकता को भी प्रकट करती है। अतः भाव जो रस सिद्धान्त का मूलाधार है, की उत्पत्ति भू धातु से अच् तथा णिच् प्रत्यय करने पर होती है। जिसका अर्थ है भवति इति भावः अर्थात् जो होता है, वह भाव है। दूसरे भावयति इति भावः जो भावना करवाता है, वह भाव है।

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ[4] में 'भाव' शब्द के अनेक अर्थ यथा– अस्तित्व विद्यमानता, अवस्था, दशा, हालत, ढंग, रीति, प्रेम, अनुराग, विचार, अभिप्राय, भावना, आत्मा, मन, वस्तु, हाव–भाव, आचरण, उत्पत्ति, प्रेमोद्योतक हाव–भाव आदि के आधार पर भावों जिसके अन्तर्गत स्थायी, सात्विक एवं व्यभिचारी भावों की गणना की जाती है, में से केवल व्यभिचारी भावों के परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत उपन्यास जो शैलेश मटियानी द्वारा रचित है, का विवेचन किया गया है। भारतीय काव्यशास्त्र में मुख्यतः 33 संचारी या व्यभिचारी भाव माने गए हैं तथापि इसकी संख्या सम्बन्धी दीर्घ काव्यशास्त्रीय परम्परा प्राप्त होती है। भरतमुनि से लेकर शारदातनय तक के संस्कृत आचार्यों एवं केशवदास से लेकर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. नगेन्द्र तक की परम्परा में संचारी भावों की संख्या एवं उसकी उत्पत्ति सम्बन्धी निज विचार एवं मत प्राप्त होते हैं, और ईर्ष्या, शम, स्नेह, दम्भ, उद्वेग, क्षुधा आदि को संचारी भाव मानते हुए इनकी संख्या 49 तक मानी गई है। किन्तु मूलतः निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार, गर्व, मरण, आलस्य, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, औत्सुक्य, उन्माद, शंका, स्मृति, मति, व्याधि, त्रास, व्रीड़ा, हर्ष, असूया, विषाद, धृति, चपलता, ग्लानि, चिंता तथा

---

[3] नाट्यशास्त्र, 6. 31

[4] संस्कृतशब्दार्थ कौस्तुभ

वितर्क ये 33 संचारी भाव ही मान्य हैं।[5] रीतिकालीन आचार्य कवि देव ने 'छल' नामक एक अन्य संचारीभाव मानते हुए इनकी संख्या 34 तक मानी है।

काव्यशास्त्रीय परम्परा में संचारी भावों का स्वभाव अस्थिर माना गया है, क्योंकि यह हृदय में कुछ क्षण के लिए उत्पन्न होते हैं और अपना कार्य समाप्त करके तिरोहित हो जाते हैं। जल के बुदबुदे के समान क्षण में उत्पन्न और नष्ट होना इनका स्वभाव है, इसी कारण इन्हें संचारी भाव कहा जाता है। यह ऐसी संचरणशील तथा अस्थिर मनोवृत्ति होती है, जो स्थायीभाव की उपकारक बनती हैं। परिस्थितियों के अनुरूप यह मानवीय मन में उत्पन्न होकर रस की परिपुष्टि तो करते ही हैं साथ ही कभी कभी स्वयं ही अपना पृथक अस्तित्व स्थापित कर जाते हैं। सर्वप्रथम आचार्य भरतमुनि ने वि+अभि+चर्+इन व्युत्पत्ति के आधार पर व्यभिचारी शब्द की व्याख्या करते हुए कहा है कि जो विविध आभिमुख्य से (भावों को) रसों पर ले आते है अर्थात् विविध प्रकार के रसों की ओर उनमुख होकर संचरण करने के कारण इन्हें संचारीभाव कहा जाता है।[6] यह मन की अस्थिर रहने वाली वृत्तियाँ हैं तथा विभाव, अनुभाव की अपेक्षा से विभिन्न रसों में अनुकूल होकर विचरण करते हैं अर्थात् प्रत्येक रस को पुष्ट करने वाले व्यभिचारी भाव अलग–अलग हैं। जब परिस्थितियों के अनुरूप इनका संचरण होता है तभी वीर, करुण, हास्य, भयानक आदि रस सिद्ध होता है।

रस के परिपोषक संचारी भावों की अभिव्यंजना संस्कृत, हिन्दी पंजाबी आदि सभी भाषाओं में रचित साहित्य में प्राप्त होती है किन्तु यदि रस से पृथक् संचारी भावों की सत्ता की चर्चा करे तो भावध्वनि के रूप में इनका अस्तित्व साहित्यक्षेत्र में स्वीकार्य है। साहित्य में जब शब्द स्वयं को तथा अपने अर्थ को गौण करके अन्य अभीष्ट अर्थ की व्यंजना करवाने में सहायक होता है वहां ध्वनि होती है। मुख्यतः ध्वनि के अविवक्षितवाच्य और विवक्षितान्यपरवाच्य दो भेद माने गए हैं। पुनः इनके उपभेदों के अन्तर्गत अविवक्षितवाच्य ध्वनि के अर्थान्तरसंक्रमित एवं अत्यन्ततिरस्कृत वाच्य ध्वनि तथा विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि के संलक्ष्यक्रमव्यंग्य तथा असंलक्ष्यक्रमव्यंग्य ध्वनि मानी गई है। असलंक्ष्यक्रमव्यंग्यध्वनि जिसमें वाच्य एवं व्यंग्य अर्थ का क्रम लक्षित नहीं होता, के पुनः आठ भेद रस, भाव, रसाभास, भावाभास, भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता, भावशान्ति स्वीकार्य हुए हैं। इनमें से प्रथम भेद रसध्वनि वहां होती हैं जहां विभावानुभाव्यभिचारी के संयोग से रस रूप में व्यंग्यार्थ व्यंजित होता

---

5 साहित्यदर्पण, 3. 141

6 उच्यते वि अभि इत्येतावुपसर्गो। चर इति गत्यर्थो धातुः विविधाभिमुख्येने रसेषु चरंतीति व्यभिचारिणः। वागंगत्सत्त्वोपेता प्रयोग रसान्नयंतीति व्यभिचारिणः।। नाट्यशास्त्र, 7.27

है वहां रसध्वनि होती हैं। किन्तु जहां विभावादि के पूर्ण निर्वाह के अभाव में रस का प्रवाह दब जाता है, किन्तु ग्लानि, शंका, अमर्ष आदि कोई संचारी भाव प्रबल होकर व्यंजित होता है, तो वहां भाव ध्वनि अर्थात् रांचारीभाव ध्वनि का अरितत्व होता है। प्रत्येक राहित्यकार, लेखक, कवि अपने राहित्य में भावों को प्रमुख स्थान देता है क्योंकि भावों की अभिव्यंजना द्वारा ही पात्र एवं लेखक की मानसिकता को समझा जा सकता है।

भारतीय साहित्य परम्परा में निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार, गर्व, मरण, आलस्य, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, औत्सुक्य, उन्माद, शंका, स्मृति, मति, व्याधि, संत्रास, व्रीडा, हर्ष, असूया, विषाद, धृति, चपलता, ग्लानि, चिन्ता तथा वितर्क तेंतीस संचारी भाव माने गए हैं–

निर्वेदावेगदैन्यश्रममदजडता औग्रयमोहौ विबोधः।
स्वप्नापस्मारगर्वा मरणमलसतामर्षनिद्रावहित्थाः।।
औत्सुक्योन्मादशंकाः स्मृतिमतिसहिता व्याधिसत्रासलज्जा।
हर्षासूयविषादाः सवृतिचपलता ग्लानिचिन्तावितर्काः।।[7]

इन तैतींस संचारी भावों[8] के अतिरिक्त और भी संचारी हो सकते हैं। रीतिकालीन आचार्य और कवि देव ने इनमें 'छल' नामक एक और संचारी जोड़ कर इनकी संख्या 34 तक पहुँचा दी थी।

हिन्दी साहित्यिक जगत् में शैलेश मटियानी जी का वर्चस्व एक ऐसे लेखक एवं कवि के रूप गें प्रतिष्ठित हैं, जो वर्तगान रागय के कटु यथार्थ रो तो पूर्णतः परिचित ही हैं, राथ ही इरा यथार्थ को कैसे बदला जा सकता है और समाज में नैतिकता एवं मानवता का पुनः स्रोत कैसे प्रवाहित किया जा सकता है, इस समाधान को भी अपने कथ्य का विषय बनाया है। जसे उनके उदात दृष्टिकोण का भी परिचय देता है। शैलेश मटियानी एक ऐसे साहित्यकार हैं जिन्होंने साहित्य की प्रत्येक विधा, कहानी, उपन्यास, एकांकी, निबन्ध एवं काव्य का सृजन करते हुए मानव जीवन एवं उसके मानसिक भाव–बोध का सशक्त चित्रण किया है। सर्वविदित है कि साहित्य में जहां लेखक की प्रतिभा, उसके कथ्य, उसकी वैचारिकता, उसकी कल्पना एवं यथार्थ का समन्वय होता है, वहीं मुख्यतः सामाजिक जीवन प्रतिबिम्बित होता है या कह सकते हैं, सामाजिक अनुभव साहित्यिक सृजना

---

[7] सा. द., 3.141

[8] सा.द., 3. 142–171

का मूल होते हैं क्योंकि लेखक भी उसी समाज का सदस्य होता है, जिस समाज का चित्रण वह साहित्य में करता है। साहित्यकार के विचार एवं भावनाएँ उसके जीवन का अनुभव होती हैं, जिन्हें वह पात्रों के माध्यम उसी प्रकार से व्यक्त करता है। एक साहित्यकार ही मानव तथा उसकी परिस्थितियों, उसके जीवन, उसकी भावनाओं, उसके वैचारिक दृष्टिकोण, उसके आध्यात्मिक एवं पथार्थवादी परिदृश्य का सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अत्यधिक स्पष्ट एवं पूर्णता से अवलोकन करता है तदनन्तर उस परिदृश्य, परिवेश को निज सृजना द्वारा साहित्य की किसी भी विधा में प्रस्तुत करके हमें/पाठक वर्ग को सजग करता है, चेतनशील बनाता है कि समाज और मानवता के प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है और इस दायित्व को निभाना ही हमारा मूल धर्म है। इसी भावना को आधार बनाकर साहित्यकार शैलेश मटियानी जी ने अपने साहित्य में मानव मन की विशेषतः नारी की मानसिकता का अति सशक्त चित्रण किया है। लेखक ने अपने उपन्यासों में नारी के विविध रूपों यथा– पत्नी, प्रेमिका, विधवा, वेश्या, अबला के साथ–साथ उसके विद्रोही एवं संघर्षमय स्वरूप का चित्रण किया है। 'हौलदार', 'विट्ठीरसैन', 'भागे हुए लोग' तथा 'कोई अजनबी नहीं' आदि उपन्यासों की नारी पात्र लछमा, बचुल, पार्वती तथा रामप्यारी में भारतीय नारी के आदर्श चरित्र के साथ–साथ विद्रोही एवं परिस्थितियों के समक्ष न झुकने वाली नारियों के साथ साधारणीकरण होता है। लेखक ने परिस्थितियों के अनुरूप पात्रों में भावों का संवरण करवाया है, जो मानव की यथार्थ मानसिकता से हमारा परिचय करवाते हैं।

उपन्यास में बस स्टैंड पर खड़ी रामप्यारी जो गाँव में भी अपनी कद्दावर देह के कारण उसे लोगों के अनेक व्यंग्यों एवं कटाक्षों को सहन करती रही है, वहीं आज दिल्ली शहर में लोगों की ओर पीठ करके खड़ी होने के बाद भी वह अपनी पीठ पर तमाशाई मर्दों की हथेलियाँ, आंखें, पलकें और मूछें बड़ी देर तक हिलती महसूस कर रही हैं किन्तु वह विवश है, इन्हें कुछ भी कहने के लिए। पीठ पर ठंड बर्दाशत की जा सकती है, लू बर्दाशत की जा सकती है, कंटीले पत्ते और रेंगते हुए कनखजूरे बर्दाशत किए जा सकते हैं, क्योंकि केवल देह ही इनकी चूभन को अनुभव करेगी[9] किन्तु पुरुषों की तमाशाई दृष्टि अन्तर्मन को चुभती है, जिसे रोक पाना रामप्यारी के लिए सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में रामप्यारी के मन में विषाद[10] संचारी भाव की प्रबलता उसकी विवश स्थिति अर्थात् कुछ न कर पाने की असमर्थता को व्यंजित करती है। पुरुषार्थ हीनता का यह भाव रामप्यारी को

---

9 शैलेश मटियानी, कोई अजनबी नहीं, पृ. 8–9

10 उपायों के अभाव के कारण पुरुषार्थ हीनता का नाम विषाद है, साहित्यदर्पण, 3.167

मानसिक संताप रूप से संतप्त कर रहा है, जिस कारण वह शारीरिक रूप से जड़ अवस्था[11] में खड़ी हुई गाँव और शहर में एक समान पुरुष मानसिकता को अनुभव कर रही है और स्वयं को इन अनुभूतियों के घिरा हुआ महसूस करती है।

उपन्यास में हरभजन चौधरी जिसकी आयु पैंतालीस–छियालिस वर्ष है वह स्त्री को निरन्तर उपभोग की वस्तु समझकर बार बार विवाह करवाता है। नई पत्नी लेकर आता है और पुरानी छोड़ देता है। हरभजन की इस प्रवृत्ति को जानते हुए भी प्रस्तुत उपन्यास की नायिका या मुख्य प्रात्र रामप्यारी अपने अभावग्रस्त एवं अंधकारमय वर्तमान को समझते हुए विवश होकर उसके साथ रहने लगती है।[12] यद्यपि वह भविष्य के इस कटु परिणाम से पूर्णतः परिचित है कि चौधरी भविष्य में उसे कभी छोड़ सकता है। रामप्यारी के इस व्यवहार में हमें उसके अन्तर्मन में संचरित करते मति[13] और विषाद संचारी भावों का आवागमन दिखाई देता है, साथ ही नारी की उस मानसिकता का बोध होता है जो पुरुष रागाज के रागक्ष विवश हो जाती है।

सम्पूर्ण उपन्यास में हमें स्मृति[14] संचार भाव रामप्यारी के मन में उदित होता परिलक्षित होता है। उपन्यास के प्रारम्भ में ही वह कस्बे तथा शहर की अनुभूतियों एवं परिदृश्य की तुलना करती है। ''एक स्थान पर मजदूरी करते समय जब सभी मजदूर–मजदूरिनों को रोटियाँ निकालते देखकर, रामप्यारी को याद आया कि कल रात स्टेशन में ही पूड़ियाँ खायी थी, तब से कुछ नहीं मिला है।''[15]

रामप्यारी कस्बे से शहर में इसलिए आती है कि ताकि वहां उसके कद्दावर जिस्म की अपेक्षा उसके औरत जात होने के बोध को समझ सके। किन्तु वह महसूस कर रही है कि ''उसकी देह के कारण शारीरिक आकार से तो हर आदमी पहचान सकता है, मगर भीड़ में खोई हुई छोटी बच्ची जैरी उराकी आत्गा को–उराके औरत जात होने के उरा बोध को अर्थात् उराके नारीत्व को–कोई

---

11 प्रिय और अप्रिय के दर्शन और श्रवण से किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना 'जड़ता' है। कर्त्तव्य–विमूढ़ता यह भौतिक तो होती ही है, किंतु मानसिक स्थिति से ही व्यक्ति में ऐसी दशा आती है। सा.द. 3. 148

12 कोई अजनबी नहीं, पृ. 68

13 नीति–मार्ग के अनुसरण आदि से वस्तुतत्व के निर्धारण अर्थात् बात की तह तक पहुँचने का नाम मति है, सा.द., 3.163

14 सदृशज्ञानचिन्ताद्यैभ्रूसमुन्नयनदिकृत। स्मृतिः पूर्वानुभूतार्थविपयज्ञानमुच्यते।। अर्थात् सदृश वस्तु के अवलोकन तथा चिन्तन आदि के पूर्वानुभूत वस्तु के स्मरण को स्मृति कहते हैं। सा.द.,3. 162

15 कोई अजनबी नहीं, पृ. 40

नहीं पहचान पाता है। जो इतने बड़े शहर में एकदम बेसहारा होने पर इसलिए नहीं रो पाती क्योंकि उसे गाँव के बिरखा चौधरी की यह कही हुई बात हमेशा याद रहती है कि तेरा रोना किसी को समझ नहीं आयेगा। इसलिए रामप्यारी, यो हिया तोड़ के न रोया कर औरों के सामने बेटी!..आँसू बहाते कौन देखता है?''[16]

उक्त विवरण जहां रामप्यारी की विषादमयी स्थिति की व्यंजना करवा रहा है, वहीं आगे के प्ररांग गें रागप्यारी के ब्यवहार गें हगें राशक्त नारी के दर्शन होते हैं, जो परिरिथतियों के अनुरूप निर्णय लेने और विद्रोह करने में सक्षम है। जब मातादीन चौधरी कमरे में अपने पाँच साथियों के साथ रामप्यारी को सोने के लिए कहता है तो रामप्यारी उसका विरोध करके उसके मुँह पर थूक और तमाचा मार कर बाहर निकल जाती है। मातादीन के अभिप्राय को समझ कर वह कहती है, ''तुम–जैसे मर्दों की जात तो चोट्टी औरत जात का हिया नहीं देख कसती न भड़ैंत? काहे को ले आये तुम हमे यहां, ये ही कुत्ते लोग के साथ सुलाने को? त्थू।'' रामप्यारी के इस व्यवहार के बाद भी मातादीन उसका हाथ पकड़ता तो रामप्यारी अँधेरे में ही बायें हाथ से एक तमाचा मातादीन के मुँह पर जड़ दिया–''चुप चोट्टे!''[17] यहां रामप्यारी के व्यवहार में अमर्ष एवं उग्रता[18] भावों की सन्धि रामप्यारी की दृढ़ साहसी मानसिकता की अभिव्यंजक है।

मानव मन, उसकी मानसिकता है कि वह प्रत्येक विषादग्रस्त एवं कठिन परिस्थितियों में भी कहीं न कहीं मन बहलाने का अवसर तलाश लेता है जो उसे मानसिक सुकून शान्ति तो देता ही है साथ ही शारीरिक थकावट को भी कुछ क्षण के लिए भूल जाता है। प्रस्तुत उपन्यास की तत्कालीन परिदृश्य में हम पाते हैं कि श्रमिक वर्ग का नेता हरभजन चौधरी दिन भर कठिन परिश्रम करता है किन्तु रात में मन को शान्ति एवं सुकून देने के लिए वह श्रमिकों के मध्य कवित्त गाते हुए अवसादित वातावरण को खुशगुमा बना देता है– पिया मोरे संदेश भिजावै, नैना तो तरसें– ऐं–ऐं सासू बैठी दरवज्जे पे, निकलूँ ना डर से... नैणा तो तरसे।[19]

---

16 वही. 12

17 कोई अजनबी नहीं, पृ. 16–18

18 किसी के द्वरा किए गए अपराध अनाचार, निन्दा, अवज्ञा, अपमान आदि से उत्पन्न जो प्रचण्डता आती है, क्रोध उत्पन्न होता है उसे उग्रता तथा अमर्ष संचारी भावों का उदित होना कहते हैं, सा.द., 3. 149, 156

19 कोई अजनबी नहीं, पृ. 40

जगदीश गुप्त अनुसार , 'भाव' जीवन के अन्तरंग सत्य की गरिमा है, यह व्यक्ति के अस्तित्व विशिष्ट रूप नहीं, अपितु स्वयं अस्तित्व हैं। बाह्य जगत के सम्पर्क से प्रेरित होकर जब इनकी अभिव्यंजना होती है, तब ऐसा अनुभव होता है कि जैसे अपने ही अन्तर्गन में निहित किसी सत्य से साक्षात्कार हो रहा हो, यद्यपि यह सत्य ज्ञान के धरातल पर पूर्व परिचित ही क्यों न हो। भावों का स्वीकार करना ही यथार्थ को मानवीय रूप में स्वीकार करना है।[20]

ज्ञातव्य है कि इन संचारी भावों के उत्पादक स्थायी आदि भाव ही होते हैं, जो सहृदय के हृदय में स्थायी रूप से विद्यमान होते हैं। उदाहरणतः भय स्थायी भाव मानवीय मन और चेतना में पहले से विद्यमान है, परिस्थितियों के अनुरूप भयानक दृश्य देखने पर यह उद्दीप्त हो उठता है, तथा इसके सहकारी संत्रास आदि संचारी भाव मन में जागृत हो उठते हैं किन्तु दूसरे ही क्षण किसी भी कारणवश भयानक स्थिति का तिरोभाव हो जाता है, तो ऐसी स्थिति में त्रास संचारी भाव जो प्रबल होकर आश्रय की मानसिकता को व्यंजित करता है, वहां रस उत्पत्ति की स्थिति नहीं होती, अपितु भावों का ही प्राधान्य दृष्टिगत हो रहा है।

संचारी भावों के लिए सदैव मूर्त्त विभावों की आवश्यकता नहीं होती। वे अमूर्त्त विभावों से, बाह्य रूप में उद्दीपनों से, गुण, कर्म, परिस्थिति आदि से उत्पन्न होते हैं एवं स्वयं आश्रय के आन्तरकारणों से भी इनकी अभिव्यंजना होती है। वे सूक्ष्म, तरल, चटुल और क्षणभंगुर मानसिक स्थितियाँ हैं।... ये भाव मन के विविध कर्मों, अवस्थाओं, चैतसिक धर्मों एवं बुद्धि के व्यापारों को लक्षित कराते हैं। मन की व्याकुल अवस्था में उनकी शारीरिकता भी परिलक्षित होती है।[21]

उपन्यास में हमें रामप्यारी की अवचेतन मन की इच्छा जो मूलतः स्वगत कथन रूप में अभिव्यक्त हुई है, कि इच्छा है कि हरभजन उस पर पूर्ण अधिकार रखे और उसके अन्दर का नारीत्व भाव उस पुरुष को देखना चाहता है जो पुरुषत्व दिखाते हुए उसका पौंठा मरोड़ उसे अपने समीप बिठाए। जो यों रिरियाता नहीं सुनाई दे, कि 'यह हथिनी तो मुझ से ना सँभलेगी।' यद्यपि वह हरभजन की इस आदत को जानती है कि वह नारी को केवल उपभोग की वस्तु मानता है।

उपन्यास का प्रत्येक पृष्ठ और प्रसंग भावों की अभिव्यंजना का दर्पण है। लेखक द्वारा मानवीय भावों का इतना सजीव एवं सशक्त वर्णन किया गया है कि पाठक का पात्र के साथ सहज

---

20 जगदीश गुप्त : नयी कविता स्वरूप एवं समस्याएँ, पृ. 335–337

21 डॉ. रघुवीर शरण :संचारी भावों का शास्त्रीय अध्ययन, पृ. 114

ही साधारणीकरण स्थापित हो जाता है क्योंकि उपन्यास में वर्णित रामप्यारी की दयनीय दशा किसी न किसी तरह समाज के पात्रों से समानता रखती है। यथा– ''जब रामप्यारी का टीन का वह सन्दूक जिसे वह मातादीन सिंह की कोठरी में छोड़ आयी थी, उसमें पहनने के लिए कुछ कपड़े और पैसे थे। यदि वह इस वक्त उसके पास होता तो उसके कितने काम आते। मगर रामप्यारी उसे नहीं ला पाती तब वह सोचती है, कि मजदूरी मिल गयी है, मगर रहने को जगह नहीं, खाने को कुछ नहीं। बदलने को एक धोती–कुरती तक नहीं। ... इतनी दयनीय रिथति को जिन्दगी गें पहले कभी नहीं आयी थी।''[22] रामप्यारी की यह सोच केवल स्वयं उसे ही उसकी दैन्य स्थिति का बोध नहीं करवाती, अपितु पाठक भी उसकी दयनीय स्थिति को अनुभव कर रहा है, जो दैन्य संचारी भाव[23] के पोषण का अभिव्यंजक है।

सम्पूर्ण उपन्यास में जो स्पष्टत. उभर कर सामने आता है, वह है रामप्यारी की मानसिकता की ओर ध्यान न देकर लोगों का उराके शारीरिक आकार को देखना और व्यंग्य करना। पात्रों का यह व्यवहार रामप्यारी को अनुभव करवाता है कि कोई भी व्यक्ति उसके लिए अजनबी नहीं है क्योंकि उसके दैहिक स्वरूप के प्रति सभी की मानसिकता समान ही है। उपन्यास में रामप्यारी को स्वयं से प्रश्नोत्तर करते चित्रित किया गया है, जो उसके मन में उत्पन्न संचारी भावों को पोषित करते हुए उसकी मानसिक स्थिति को व्यंजित करते हैं। एक स्थान पर ''जब रामप्यारी एक बुढ़िया को अपनी दो पोतियों को रोटी चूर–चूर कर खिलाते देखती है तो उसे याद आया, कि दोपहर–बाद उसके बच्चों ने कुछ भी नहीं खाया पिया। सुक्खू और बेलिया को अपने बच्चों के रूप में महसूस करते हुए, रामप्यारी को एक आन्तरिक–सुख का बोध हुआ।''[24]

जो रामप्यारी के नारीत्व एवं ममत्व भाव का परिचायक है तथा रामप्यारी के मन में विचरण करते 'हर्ष', 'आवेग' तथा 'मति' संचारी भाव का पोषक है। '' आवेग में सभी प्रकार के सात्विक भाव देखने में आते हैं, और राग तथा विद्वेष, उपगमन एवं प्रतिगमन आदि सभी प्रकार की क्रियाएँ होती हैं। वास्तव में यह परिवेश एवं परिस्थितियों से सामंजस्य करने की प्रथम अवस्था का मनोवेग है।''[25]

---

22 कोई अजनबी नहीं, पृ. 40

23 दौर्गत्याद्यैरनौजस्यं दैन्यं मलिनतादिकृत।। सा.द., 3. 145

24 कोई अजनबी नहीं, पृ. 97

25 डॉ. रघुवीर शरण :संचारी भावों का शास्त्रीय अध्ययन, पृ. 321

इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता है, रामप्यारी का अपनी मानसिकता दूसरों की मानसिकता से तुलना करना, मूल्यांकन करना और स्वयं पर कभी गर्व तो कभी व्रीडा अनुभव करना और कभी अपने अकेलेपन के बोध से मुक्त होकर स्वयं को भीड़ में अनुभव करना–

रामप्यारी को यों तुलनात्मक दृष्टि से देखना अच्छा लगता है। मिसेज कपूर हो या शहतूत का पेड़–किसी से भी अपनी मनस्थिति की तुलना करते हुए रामप्यारी को अपने अकेलेपन के बोध से मुक्ति मिलती है।''[26]

मिसेज कपूर के बारे में लगातार सोचते–सोचते, रामप्यारी महसूस करने लगी है कि कहीं–न–कहीं, किसी–न–किसी स्तर पर वह मिसेज कपूर की बराबरी पर है। सिर्फ शारीरिकता में नहीं, बल्कि कहीं–न–कहीं मानसिकता में भी उन दोनों में कोई साम्य क्या नहीं हो सकता?

रामप्यारी के अतिरिक्त अन्य पात्रों की मानसिकता एवं भावों के विचरण को लेखक ने अति सशक्त ढंग से अभिव्यंजित किया है। मजदूरी करके शाम को घर वापिस आने पर जब रामप्यारी और बिंदों चौधरानी की बातों में बिंदों की मानसिकता में असूया, आक्रोश आदि भाव पाठक सहज ही अनुभव कर सकता है– ''बिंदो चौधरानी भी औचक खड़ी रह गई। रामप्यारी की छोटी–छोटी आँखों के नीचे फैले हुए चेहरे पर खेलती शरारत उसे अपने सारे सहज डाह के लिए चुनौती–सी लग रही थी। वह तो चाहती थी, कि नौबत एक–दूसरे का झोंटा पकड़ने तक जा पहुँचे, तो कल–परसों से कड्डवाये हुए मन का सारा आक्रोश बाहर निकल आए।''[27] किन्तु दूसरे ही क्षण उसके भीतर उठ रहे ये संचारी भाव शान्त हो जाते हैं तथा वह व्यंग्यात्मक रूप में रामप्यारी से बात करते हुए कहती है– ''सोचते सोचते, बिंदो चौधरानी ठंडी हो आई और रामप्यारी से बोली ''बातू तो तूं बहुत लगती है, मुटार! ... मगर जो तूं मेरे को यों दिखाना चावेग, के तेरा सौतिया दरप मेरे कलेजे को करकेगा, तो तूं यो जान, के मेरे घर में आ बैठी तूं ही नहीं है, अपने घर में बैठी भी भतेरी।'' और हँस पड़ी।[28] यहां हमें बिंदों के अन्तर्मन में 'हर्ष' तथा 'मति' संचारी भावों की अभिव्यक्ति हो रही है। इसी प्रकार रत्तोताई के कथन में –''क्यों री रामप्यारी? तू अकेली–अकेली बैठी के करेगी इधर? औत्सुक्य संचारी भाव, कपूर परिवार के संवाद में हर्ष, औत्सुक्य, दोपहर को रामप्यारी को रोटी न खाते देखकर, उराकी फटी धोती को देखकर, कपूर साहब की गाँ और पत्नी के कथन गें दैन्य भाव जो कि

---

[26] कोई अजनबी नहीं, पृ. 98
[27] कोई अजनबी नहीं, पृ. 102
[28] वही, पृ. 103

रामप्यारी के प्रति उत्पन्न हुआ है, रामप्यारी की स्थिति के प्रति सहृदय के हृदय को द्रवित कर जाता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि लेखक ने सम्पूर्ण उपन्यास की नायिका रामप्यारी की मानसिक स्थिति को ही रामप्यारी के स्वगत एवं प्रत्यक्ष कथनों के माध्यम से व्यक्त किया है। मगर उसके जीवन से सम्बन्धित कथानक के साथ अन्य पात्रों के साथ उसका सम्बन्ध दूसरें पात्रों की मानसिकता का भी बोध करवाता है। निस्सन्देह उपन्यास में संचारी भाव पात्रों की तत्कालिक मानसिक स्थिति के अभिव्यंजक बन कर पोषित हो रहे हैं क्योंकि मानसिक भावों की जो चेष्टा होती है वह परिस्थितियों से प्रभावित मन द्वारा प्रकट होती है। अंततः उपन्यास में रामप्यारी का स्वयं से वैचारिक अन्तःसंघर्ष, तुलना एवं मूल्यांकन तथा उसकी मानसिक संतुलन–असंतुलन की स्थिति को व्यभिचारी भावों द्वारा पूर्णतः अभिव्यक्ति मिली है।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 51-58
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Effect of Competency-Based Assessment under National Education Policy 2020 on Teaching Practices of Secondary School Teachers

Pinky Agarwal, M.Ed. Scholar
Dr. Manju Devi, Research Supervisor (Assistant Professor)
Sri Balaji Teacher Training College, Jaipur.

1 Abstract :

The National Education Policy (NEP) 2020 introduced competency-based assessment (CBA) as a significant reform aimed at transforming the traditional examination- oriented system into a learner-centered and skill-based framework. Traditional assessment practices at the secondary level have long emphasized memorization and reproduction of textbook knowledge, which has limited the development of critical thinking, analytical reasoning, creativity, and application-based learning among students. Recognizing these limitations, NEP 2020 advocates competency- based assessment that focuses on conceptual clarity, real-life application, higher- order thinking skills, and continuous formative evaluation.

The implementation of competency-based assessment directly influences teaching practices, as assessment methods determine instructional planning, classroom interaction, and pedagogical strategies. The present study investigates the effect of competency-based assessment under NEP 2020 on teaching practices of secondary school teachers. A descriptive survey method was employed to collect data from secondary school teachers representing government and private institutions. Standardized tools were administered to assess the level of competency-based assessment implementation and teaching practices.

2 Technical Terminology :

- Competency-Based Assessment
- National Education Policy 2020
- Teaching Practices
- Secondary School Teachers

3 Introduction :

The National Education Policy 2020 proposes a paradigm shift in assessment practices through the introduction of competency-based assessment. Competency-based assessment aims to evaluate students' ability to apply knowledge, demonstrate understanding, solve problems, think critically, and perform tasks effectively in real-life contexts. It promotes formative assessment, interdisciplinary learning, project-based activities, and constructive feedback mechanisms.

The shift toward competency-based assessment requires teachers to modify their instructional approaches. Teachers must integrate experiential learning, collaborative activities, analytical questioning, and performance-based evaluation tools. Since assessment strongly influences teaching methodology, any reform in assessment inevitably impacts classroom pedagogy.

At the secondary school level, where board examinations and academic performance are highly emphasized, implementing competency-based assessment presents both opportunities and challenges. Therefore, it becomes essential to examine whether competency-based assessment has brought significant changes in teaching practices of secondary school teachers.

4 Need and Significance of the Study

The study is significant for several reasons :

1. It helps in understanding the practical implementation of NEP 2020 assessment reforms at the secondary level.
2. It examines whether policy recommendations are reflected in classroom practices.
3. It provides insight into the transformation of teaching methodologies due to asscssmcnt rcform.
4. It offers guidance for teacher training institutions and policymakers to strengthen implementation strategies.
5. It contributes to the existing research literature on assessment reforms and pedagogical practices.

5 Statement of the Problem :

A Study of the Effect of Competency-Based Assessment under NEP 2020 on Teaching Practices of Secondary School Teachers.

6 Objectives of the Study :

1. To study the implementation level of competency-based assessment in secondary schools.

2. To examine the teaching practices of secondary school teachers adopting competency-based assessment.

3. To analyse the effect of competency-based assessment on teaching practices of secondary school teachers.

7 Hypotheses :

- H_{01}: There is no significant implementation of competency-based assessment in secondary schools.
- H_{02}: There is no significant difference in teaching practices between teachers using competency-based assessment and traditional assessment.
- H_{03}: There is no significant effect of competency-based assessment on teaching practices of secondary school teachers.

8 Variables of the Study :

Independent Variable : Competency-Based Assessment

Dependent Variable : Teaching Practices of Secondary School Teachers.

9 Population of the Study :

The population of the study comprised all secondary school teachers teaching classes IX and X in government and private schools within the selected region.

10 Concept Map of Population and Sampling :

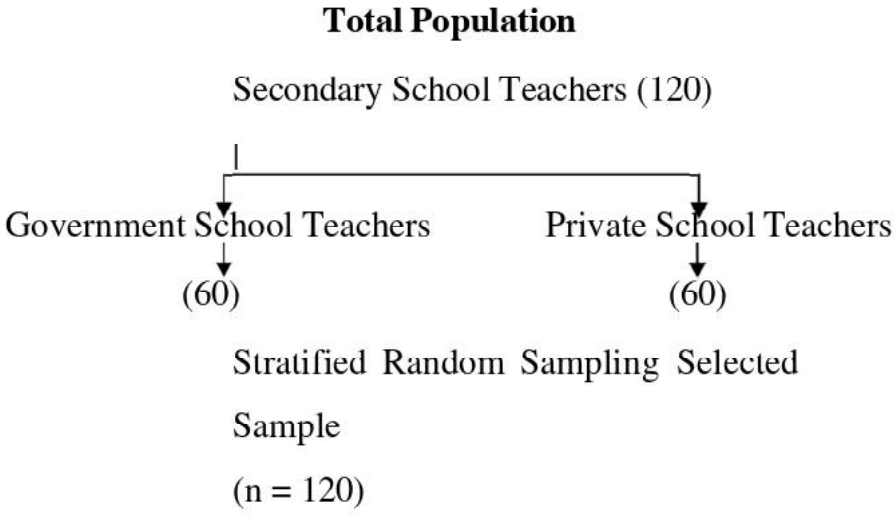

This concept map clearly demonstrates the division of the total population into two strata and the selection of a representative sample through stratified random sampling technique.

11 Sample :

A sample of 120 secondary school teachers was selected to ensure balanced representation of government and private schools. Stratified random sampling was used to reduce sampling bias and enhance representativeness.

12 Procedure of Data Collection :

Permission was obtained from school authorities before administering the tools. The questionnaires were distributed personally to the selected teachers. Clear instructions were provided, and respondents were assured confidentiality. After collection, responses were scored and tabulated for statistical analysis.

Statistical Techniques :

The following statistical techniques were used :

- Mean – to determine the average score of groups.
- Standard Deviation – to measure variability.
- t-test – to determine significant difference between groups.
- Correlation – to analyse the relationship between competency-based assessment and teaching practices.

13 Analysis and Interpretation of Data :

Objective 1

To study the implementation level of competency-based assessment in secondary schools.

Table 1

Implementation Level of Competency-Based Assessment among Secondary School Teachers

Category	N	Mean	SD
Government School Teachers	60	75.40	6.12
Private School Teachers	60	78.25	5.98

Interpretation :

The mean scores indicate that competency-based assessment is being implemented at a moderate to high level in both government and private secondary schools.

However, private school teachers demonstrate slightly higher implementation compared to government school teachers. The standard deviation values indicate moderate consistency in responses across both groups.

This suggests that competency-based assessment has begun to influence classroom assessment practices, although the degree of implementation varies depending on institutional support, professional training, and availability of resources. The data indicates gradual transition from traditional assessment methods toward competency-oriented practices.

Therefore, the null hypothesis stating that there is no significant implementation of competency-based assessment is rejected.

Objective 2

To examine the teaching practices of secondary school teachers adopting competency-based assessment.

Table 2

Comparison of Teaching Practices between CBA and Traditional Teachers

Group	N	Mean	SD
Teachers using Competency-Based Assessment	60	80.12	6.08
Teachers using Traditional Assessment	60	72.35	7.21

Interpretation :

The mean score of teachers adopting competency-based assessment is higher than that of teachers using traditional assessment methods. This indicates that teachers implementing competency-based assessment demonstrate more effective and progressive teaching practices.

These teachers are more likely to :

- Encourage student participation
- Use open-ended and analytical questions
- Integrate project-based and experiential learning
- Provide continuous feedback
- Promote critical thinking and problem-solving

The comparatively lower mean score of traditional assessment teachers suggests continued reliance on lecture-based methods and examination-oriented practices.

Thus, it can be inferred that competency-based assessment positively influences instructional strategies and classroom engagement.

Objective 3

To analyse the effect of competency-based assessment on teaching practices of secondary school teachers.

Table 3

t-test Showing Effect of Competency-Based Assessment on Teaching Practices

Comparison	t-value	df	Level of Significance
CBA vs Traditional	5.98	118	Significant at 0.05

Interpretation :

The calculated t-value is greater than the critical value at the 0.05 level of significance. This indicates that the difference in teaching practices between teachers adopting competency-based assessment and those using traditional assessment is statistically significant.

Further correlation analysis reveals a positive relationship between competency- based assessment and improved teaching practices. The upward trend observed in the graphical representation suggests that increased implementation of competency-based assessment corresponds with improved instructional quality.

Therefore, the null hypothesis stating that there is no significant effect of competency-based assessment on teaching practices is rejected.

It can be concluded that competency-based assessment has a meaningful and statistically significant impact on teaching practices at the secondary school level.

14 Major Findings of the Study :

1. Competency-based assessment has been implemented at a moderate to high level in secondary schools, although variations exist between institutions.
2. Teachers adopting competency-based assessment demonstrate more learner- centered and interactive teaching practices compared to teachers following traditional assessment methods.
3. Competency-based assessment encourages the use of formative evaluation techniques, experiential learning activities, and analytical questioning.

4. There exists a statistically significant difference in teaching practices between teachers implementing competency-based assessment and those using traditional methods.

5. A positive relationship is observed between the level of competency-based assessment implementation and the quality of teaching practices.

6. Assessment reform under NEP 2020 plays a transformative role in shifting classroom pedagogy from rote-based instruction to skill-oriented learning.

Conclusion :

The present study concludes that competency-based assessment under the National Education Policy 2020 has brought a significant transformation in teaching practices at the secondary school level. The reform has encouraged teachers to move beyond traditional lecture-based and examination-oriented approaches toward more interactive, learner-centered, and skill-focused methodologies.

The findings indicate that competency-based assessment promotes conceptual clarity, continuous feedback, problem-solving activities, and experiential learning strategies. Teachers adopting competency-based assessment demonstrate greater classroom engagement, improved instructional planning, and enhanced formative evaluation techniques.

Although the transition toward competency-based assessment is progressing positively, challenges such as limited training opportunities, resource constraints, and resistance to change may hinder full implementation. Therefore, sustained professional development, institutional support, and monitoring mechanisms are essential to ensure effective realization of assessment reforms.

Overall, the study affirms that competency-based assessment significantly influences teaching practices and contributes to the qualitative improvement of secondary education.

References :

- Anderson, L. W., & Krathwohl, D. R. (2001). *A taxonomy for learning, teaching, and assessing: A revision of Bloom's taxonomy of educational objectives*. Longman.
- Black, P., &Wiliam, D. (1998). Assessment and classroom learning. *Assessment in Education: Principles, Policy & Practice, 5*(1), 7–74.
- Bloom, B. S. (1956). *Taxonomy of educational objectives: The classification of educational goals*. Longmans.
- Brookhart, S. M. (2013). *How to create and use rubrics for formative assessment and grading*. ASCD.
- CBSE. (2021). *Competency-based education: Guidelines for schools*. Central Board of Secondary Education, New Delhi.
- Darling-Hammond, L. (2006). *Powerful teacher education: Lessons from exemplary programs*. Jossey-Bass.

- Darling-Hammond, L., & Snyder, J. (2000). Authentic assessment of teaching in context. *Teaching and Teacher Education, 16*(5–6), 523–545.
- Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. Ministry of Education, New Delhi.
- Kumar, K. (2005). *Quality of education at the beginning of the 21st century: Lessons from India*. Indian Institute of Education.
- Mertler, C. A. (2017). *Classroom assessment: A practical guide for educators*. Routledge.
- Nitko, A. J., & Brookhart, S. M. (2014). *Educational assessment of students*. Pearson.
- NCERT. (2021). *Assessment reforms and competency-based education*. National Council of Educational Research and Training, New Delhi.
- Popham, W. J. (2014). *Classroom assessment: What teachers need to know*. Pearson.
- Stiggins, R. (2005). From formative assessment to assessment FOR learning. *Phi Delta Kappan, 87*(4), 324–328.
- UNESCO. (2017). *Education for sustainable development goals: Learning objectives*. UNESCO Publishing.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 59-65
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

अकबर के शासनकाल में आर्थिक सुधार : वर्तमान में प्रासंगिकता

डॉ० अनीता रानी
सहायक प्राध्यापक
कालिंदी कॉलेज (इतिहास विभाग), दिल्ली विष्वविद्यालय (एन.सी.डब्ल्यू.ई.बी.)– दिल्ली

शोध-पत्र सारांश :

यह शोध पत्र मुगल साम्राज्य में अकबर के शासनकाल (1556–1605) के आर्थिक सुधारों के इतिहास का विष्लेषण करता है और यह उन सुधारों की वर्तमान में प्रासंगिकता क्या है, यह बताने का प्रयास करता है। इसमें अकबर के शासनकाल की अर्थव्यवस्था व आर्थिक सुधारों पर विषेष ध्यान दिया गया है। अकबर की आर्थिक नीतियाँ मुख्य रूप से कृषि उत्पादन बढ़ाने, राजस्व संग्रह को व्यवस्थित करने और व्यापार को बढ़ावा देने पर केन्द्रित थी। उन्होंने ***'राजा टोडरमल'*** की मद्द से ***'दहसाला प्रणाली'*** और ***'जब्ती प्रणाली'*** को अपनाया था, जिसमें भूमि राजस्व व नकद राजस्व बहुत जरूरी होता था। इन महत्वपूर्ण सुधारों ने साम्राज्य को आर्थिक स्थिरता और मजबूती प्रदान की थी।

अकबर का काल वह काल था, जिसको भारतीय इतिहास में स्वर्ण काल के रूप में जाना जाता है, क्योंकि अकबर ने अपने साम्राज्य को सुदृढ़ रूप से चलाने के लिए हर क्षेत्र में सुधार किए थे, इन क्षेत्रों में से सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र था, आर्थिक ऐसा कहा जाता है, कि जिसकी आर्थिक स्थिति सही होती है, वह हर क्षेत्र में कामयाब होता है। इसी कारण से अकबर ने अपने साम्राज्य को मजबूत करने व स्थायित्व प्रदान करने के लिए आर्थिक सुधारों को ज्यादा महत्व दिया था। अकबर के शासनकाल में मुगल अर्थव्यवस्था अधिक विषाल व समृद्ध थी। इसी कारण मुगल काल में अकबर के समय को स्वर्ण समय कहा जाता है। आज के समय में भी किसी न किसी रूप में उनके शासनकाल व उनके सुधारों की प्रासंगिकता बनी हुई है।

मुख्य शब्द : मुगल साम्राज्य, आर्थिक, सुधार, काल, अकबर, अर्थव्यवस्था, इतिहास, भारत आदि।

शोध-प्रविधि :-

प्रस्तुत शोध–पत्र, ऐतिहासिक विष्लेषण और वर्णनात्मक विधियों के आधार पर हैं। शोध–सामग्री को प्रमुख पुस्तकों से संकलित किया गया हैं।

शोध के उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध पत्र निम्नलिखित उद्देष्यों पर आधारित हैं –

- अकबर के काल के दौरान आर्थिक सुधारों से परिचित कराना और वर्तमान में अकबर के काल के आर्थिक सुधारों की प्रासंगिकता को जानना।
- मध्य काल के दौरान आर्थिक सुधारों को जानना।
- मध्य काल के दौरान आर्थिक सुधारों के वर्गीकरण को जानने का उद्देष्य।

प्रस्तावना :–

भारत में मुगल साम्राज्य (1526–से 1857 ई०) भारतीय उपमहाद्वीप में एक महाषक्ति थी, जिसकी स्थापना बाबर ने 1526 में पानीपत के प्रथम युद्ध के बाद की थी। अपार धन–दौलत कुषल प्रषासनिक व्यवस्था और ताजमहल जैसे स्थापत्य कला, प्रषासनिक सुधार, आर्थिक सुधार के चमत्कारों के लिए प्रसिद्ध यह साम्राज्य अकबर, शाहजहाँ, ओरगंजैब जैसे शासको के शासनकाल में अपनी चरम पर पहुँचा था और 18वीं शताब्दी में इसका पतन हो गया और इस साम्राज्य में सबसे महत्वपूर्ण शासक जो हुआ, वह सबसे शक्तिषाली और सभ्य शासक अकबर था। जिसने अपने साम्राज्य के हर क्षेत्र में सुधार किये जिसमें प्रमुख आर्थिक सुधार थे। अकबर ने अपने साम्राज्य को सदृढ़ करने व सुचारू रूप से चलाने के लिए अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के बारे में सोच विचार किया, जिसमें उसका साथ मुख्य रूप से ***'राजा टोडरमल'*** ने दिया था। उस समय में अकबर एक ऐसा शासक बनके उभरा जिसने अपने राज्य को आर्थिक स्थिरता प्रदान की थी और इन आर्थिक सुधारों से उसने मुगल साम्राज्य को बुंलदियों पर ले गया था और मुगल साम्राज्य का स्वर्णकाल अगर किसी काल को कहा जाता है, तो वह अकबर के काल को कहा जाता है। ''डब्ल्यू० एस० मोरलैंड'', ने अपनी पुस्तक "India at the Death of Akbar" 1920 ने अकबर के समय के आर्थिक इतिहास का विष्लेषण किया है, उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है, कि **'अकबर का सम्राज्य धन-धान्य से समृद्ध था, उन्होंने उत्पादन, खपत, निर्यात और जहाजरानी के मात्रात्मक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया, परन्तु उन्होंने करों और भ्रष्टाचार से किसानों के शोषण की ओर ध्यान केन्द्रित किया है।" दूसरी तरफ 'वी०ए० स्मिथ' का मानना है, कि "मध्यकालीन अर्थव्यवस्था जो है, वह गतिहीन और विदेशी आक्रमणों से बाधित थी और राजनीतिक अस्थिरता के कारण व्यापार और कृषि में अवरोध था।'** अकबर के काल की मुख्य आर्थिक नीतियाँ जो थी, वे इस प्रकार से है :–

भू-राजस्व प्रणाली (दहशाला) :– 1580 ई० में *'राजा टोडरमल'* ने ***'दहशाला प्रणाली'*** की शुरूआत की थी, जो पिछले 10 वर्षों की फसलों के औरत उत्पादन पर आधारित थी। इसमें कर का निर्धारण वास्तविक पैदावार और नकदी दर (दस्तूर) के आधार पर किया जाता था। इसमें कर की दर **(दस्तूर)** औसत उत्पादन को 1/3 (एक तिहाई) भाग राज्य का हिस्सा (माल) निर्धारित किया गया था। जमीन की पैमाइन के लिए रस्सी की जगह लोहे के छल्लों से जुड़ी बाँस की छड़ियों का उपयोग किया जाता था। यह प्रणाली मुख्य रूप से दिल्ली, लाहौर, मुल्तान, इलाहाबाद, अवध, अगरा, मालवा और गुजरात के प्रांतों में लागू थी।

इसमें भूमि को वर्गीकरण के आधार पर उत्पादकता के अनुसार चार भागों में बांटा गया था, जो इस प्रकार से है– **1. पोलज** – इसमें प्रतिवर्ष खेती की जाती थी। **2. परौती** – इसमें 1–2 वर्ष खाली रखकर खेती की जाती थी। **3. चाचर (चचर)** – इसमें 3–4 वर्ष खाली रखकर खेती की जाती थी। **4. बंजर** – इसको 3 वर्ष से अधिक तक खाली रखकर खेती की जाती थी या यह ऐसे ही खाली पड़ी रहती थी।

डब्लू० एच० मोरलैंड के अनुसार– **'आर्थिक सुधारों, विशेषकर भू-राजस्व प्रणाली (दहशाला प्रणाली)**

बहुत ज्यादा प्रशंसा की है और इसे अकबर के काल की बड़ी उपलब्धि माना है। उनका यह भी मानना था, कि यह जो था शेरशाह सूरी की ही नीतियों का ही परिष्कृत रूप था।''

अतः इस प्रणाली ने हर साल कर निर्धारण की समस्या से निजात दिलाई और इससे किसानों को भी लाभ हुआ और राज्य को भी स्थायित्व मिला, इससे राजस्व में स्थिरता लाई गई और किसानों को फसल नष्ट होने पर राहत (मांफी) की व्यवस्था की गई थी। यह एक प्रकार से जब्ती प्रणाली का ही एक उन्नत और व्यवस्थित रूप था। **मोरलैंड** महोदय के अनुसार– **'अकबर ने 'नाशक' या 'जब्त' प्रणाली को अपने राज्य में अपनाया था, यह औसत उपज पर लिया जाता था, जिससे करो में लचीलापन आया था।''**

ऐसी व्यवस्था आज के समय में भी देखने मे आती है, क्योंकि स्वतंत्रता के बाद से हम जो देख रहे है, कि बाढ़ या अकाल पड़ने पर किसानों को राहत प्रदान की जाती है और आज भी भूमि का वर्गीकरण किया गया है और आज भी सरकारों द्वारा फसलों पर सिंचाई कर आदि लगाया जाता है, इसलिए वर्तमान में भी इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है।

भूमि की पैमाइस :- इसके अन्तर्गत अकबर के शासन–काल में जमीन की नाप जोख (ज़रीब) का उपयोग करके उसे **पोलज** (नियमित खेती), **परती, चाचर** और बंजर भूमि में वर्गीकृत किया गया, जिससे सही का निर्धारण संभव हो सका था।

ऐसा वर्तमान भारत में भी देखने को मिलता है, जिस प्रकार वर्तमान में सरकारों के द्वारा चकबन्दी की जाती है। आज के समय मे चकबन्दी में खेती के उपयोग के लिए भूमि, खलियान के लिए भूमि, खत्तों के लिए भूमि और बंजर भूमि, में बांटा जाता है। आज भी इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है।

मनसबदारी व्यवस्था :- यह सैन्य और प्रषासनिक अधिकारियों के लिए एक श्रेणीबद्ध प्रणाली थी, यहाँ मनबसदारों को उनकी सेवा के बदले जांगीर और नकद वेतन मिलता था, जिससे प्रषासनिक व्यय नियंत्रित रहा और पर वेतन का भार कम होता गया। इससे राज्य की आर्थिक स्थिति में सुधार होता गया, क्योंकि राज्य पर धन का व्यय कम होने से साम्राज्य की स्थिति में सुधार हो गया था।

मनसबदारी प्रणाली मुगल सम्राट अकबर द्वारा 1571–75 के आस–पास नौकरषाही और सेना को व्यवस्थित करने के लिए शुरू की गयी यह एक सबसे अलग प्रषासनिक और सैन्य पदक्रम व्यवस्था थी। इसके अनुसार अधिकारियों को मनसब (पद/रैंक) दी जाती थी, जिसके अनुसार उनका वेतन, दर्जा और सैन्य जिम्मेदारियाँ निर्धारित होती थी। ***'ब्लेकमैन'*** के अनुसार– **'जात को व्यक्तिगत पद का 'सवार' को घुड़सवारों की संख्या माना'', जबकि, 'आर० पी० त्रिपाठी' का मत था, कि 'जात' से पद व वेतन और 'सवार' से अतिरिक्त सम्मान का बोध होता था।''**

मनसबदारी व्यवस्था की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ :-

- सम्राट स्वयं मनसबदारों को नियुक्त करता था। वह मनसब को बढ़ा सकता था या घटा सकता था और उसे हटा भी सकता था।
- किसी भी मनसबदार से कोई भी नागरिक या सैन्य सेवा करने के लिए कहा जा सकता था।
- कभी–कभी मनसबदार को वेतन नकद में दिया जाता था। मनसबदारों की आय का एक अन्य स्रोत जागीरों का अनुदान था।

- मनसबदारी व्यवस्था वंषानुगत नहीं थी।
- मनसबदारों की 3 श्रेणियाँ बनाई गई थी, सबसे नीचे के स्तर के मनसबदार के पास 10 सैनिक होते थे और सबसे ऊपर के मनसबदार के पास 10000 सैनिक होते थे। शाही परिवार के राजकुमारों और सबसे महत्वपूर्ण राजपूत शासकों को ही 100000 सैनिकों का मनसब दिया जाता था।

मनसबदारी प्रथा को अकबर ने इसलिए लागू किया था, क्योंकि उसकी सोच थी, कि हमें राज्य के अन्दर सैनिकों के सीधे वेतन नही देना होगा जिससे की हमें सैनिक भी सुरक्षा के लिए मिल जायेगें और राज्य पर आर्थिक भार भी कम रहेगा और जो जागीरे उनको दी जाएगी उनसे राजस्व भी इक्टठा होता रहेगा। यह सोच तो सही थी, परन्तु बाद में इस व्यवस्था में धीरे–धीरे भ्रष्टाचार आता चला गया था।

मनसबदारी व्यवस्था का एक प्रमुख उद्देष्य योग्यता को मान्यता देना था, जो आज भी हमें सिविल सेवा परीक्षाओं में देखने मे आता है और यह एक केन्द्रीय सिद्धान्त है।

व्यापार और मुद्रा प्रणाली :–

अकबर ने मुद्रा प्रणाली को मानकीकृत किया और चाँदी के सिक्कों **(रूपया)** की उच्च शुद्धता बनाए रखी, इससे व्यापारिक स्थिरता राज्य में आई बंगाल जैसे क्षेत्रों से निर्यात बढ़ाने से आर्थिक समृद्धि हुई। **'मोरलैंड' के अनुसार– ''अकबर के काल में व्यापार अच्छा था और भारतीय उत्पादों (जैसे हस्तशिल्प) के सामानों की विदेशों में बहुत मांग थी।''**

अकबर के काल में भारत में एक सुव्यवस्थित त्रिधात्विक मुद्रा प्रणाली और फलते–फूलते व्यापार का काल था। उनके काल में चाँदी का **'रूपया' (आधार मुद्रा)** और ताँबे का **(दैनिक लेन–देन)** सबसे प्रचलित थे। इस काल में एक सोने का **सिक्का (अशरफी)** भी चलता था। अकबर ने शेरषाह सूरी की मुद्रा प्रणाली को ही अपने काल में अपनाया था। अकबर का काल एक ऐसा काल था, जिसमें व्यापारिक गतिविधियों में जबरदस्त उछाल देखने को मिलता है। इस काल में करों की सुगमता, सड़कों का जाल और कृषि में नकद भुगतान के कारण व्यापार को बढ़ाना मिला था। अकबर के काल के बाद के शासकों ने भी इसी आधार पर अपना साम्राज्य चलाया था।

अकबर के काल की मुद्रा प्रणाली :–

रूपया (चाँदी) :– अकबर ने चाँदी के रूपये को मानक मुद्रा के रूप में जारी रखा था, इसका वजन लगभग 178 ग्रेन होता था।

दाम (ताँबा) :– ताँबे का **(दाम)** जिसे उस समय **पैसा या फालूत'** भी कहते थे। यह उस समय की आम मुद्रा या दैनिक लेन–देन की मुख्य मुद्रा थी। उस समय 40 दाम (ताँबा) के बराबर एक रूपया (चाँदी) होता था।

सोने की मुहर (अशरफी) :– अकबर ने अपने समय में उच्च गुणवत्ता वाली अषरफी भी जारी की थी, जो कुछ समय पहले तक भारत में चलन में रही थी।

अकबर के समय में फारसी कविताएँ सिक्कों पर होती थी और **'दीन–ए–इलाही'** के प्रतीक **(अल्लाह हू–अकबर जल्ला जलालुहू)** और बाद के समय में उन्होंने **'राम–सीता'** के चित्त वाले सिक्के भी जारी किए थे।

1585 में, उन्होंने हिजरी कैलेडर के बजाय इलाही **'इलाही युग'** के अनुसार सिक्कों पर तारीखे अंकित

करना शुरू किया था।

अकबर के काल में व्यापारिक गतिविधियाँ :–

नकद राजस्व :– अकबर ने जमीन पर भू–राजस्व नकद में लेना शुरू किया था, इस कार्य से मुद्रा का प्रचलन बढ़ता चला गया और इससे व्यापार को बढ़ावा मिलता गया।

आंतरिक व्यापार :– साम्राज्य में शांति और प्रषासनिक एकीकरण के कारण सड़क और व्यापारिक मार्ग सुरक्षित थे।

बैकिंग व्यवस्था :– हुंडी (हवाला) प्रणाली का उपयोग बड़े व्यापारिक लेन देन के लिए किया जाता था, जो उस समय में विकसित बैकिंग तंत्र को दर्षाता हैं।

प्रमुख निर्यात :– उस समय सूती कपड़े, रेषम, मसाले और नील का निर्यात होता था, यह भी विषेषकर गुजरात और बंगाल के बदरगाहों से।

व्यापारिक नीतियाँ :– अकबर ने व्यापार को बढ़ावा देने के लिए अनावष्यक करो को हटाया था, जिससे व्यापारियों को सुविधा मिली थी।

अकबर का शासनकाल एक ऐसे एकीकृत आर्थिक तंत्र का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ सुव्यवस्थित सिक्कों और उन्नत व्यापारिक तकनीकों ने आर्थिक समृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई मुद्रा प्रणाली ने न केवल राजकोषीय स्थिरता प्रदान की बल्कि मुद्रा आधारित अर्थव्यवस्था के विस्तार के लिए एक रास्ता खोल दिया था। अकबर के काल की मुद्रा प्रणाली एवं व्यापारिक गतिविधियों की प्रासंगिकता वर्तमान में नजर आती, क्योंकि उस समय की मुद्रा (रूपया) वर्तमान में भी भारत में चलन में है और जो उस समय के व्यापारिक केन्द्र थे, वे सभी व्यापारिक केन्द्र आज भारत के बहुत बड़े और मुख्य व्यापारिक केन्द्र हैं।

कृषि और औद्योगीकरण :– अकबर ने कृषि को अर्थव्यवस्था का आधार माना और **'पोलाज'** जैसी उपजाऊ भूमि पर खेती को प्रोत्साहित किया था। गेहूँ, चावल, जौ, बाजरा, दालों के साथ–साथ कपास, नील और गन्ने जैसी नकदी फसलों की खेती को बढ़ावा दिया गया था। खेती में लोहे के हल, हांसियाँ और बीज बोने के लिए **'ड्रिल यन्त्र'** का प्रयोग किया जाता था। सिंचाई के लिए कुँए, तालाब और नहरों का निर्माण किया गया था। अकाल के समय सहायता, ऋण **(तकावी)** और उन्न बीजों की व्यवस्था की गई थी।

अतः इस प्रकार से अकबर के शासन काल में 1556 से 1605 ई० में आर्थिक सुधार किये गये थे, इन सब सुधारों का कर्ता जो था वह **'राजा टोडरमल'** था जिसने इन सुधारों का खाका तैयार किया था और अकबर को इन सुधारों का कर्त्ताधर्ता बनाया था और आज भी हम इन आर्थिक सुधारों के बल पर मुगल सम्राज्य को जानते है और मुगल काल में भी अकबर के काल को जानते है। **'मोरलैंड'** महोदय के अनुसार– **'भारत उस समय बहुत धनी था, उस समय करों की जो दरें थी, वह बहुत पारदर्शी थी, जिसकी वसूली बड़ी आसानी से हो जाती थी।''**

अकबर का काल एक ऐसा काल जो मुगल काल में *'स्वर्ण युग'* के नाम से जाना जाता है और इस काल में धार्मिक सुधार, आर्थिक सुधार, प्रषासनिक सुधार अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है, इस शोध–पत्र शीर्षक **''अकबर के शासनकाल में आर्थिक सुधार : वर्तमान प्रासंगिकता''** के अध्ययन में हमने केवल आर्थिक सुधारों का अध्ययन किया है और वर्तमान में इन सुधारों की प्रासंगिकता की बात की है, क्योंकि हम आज भी अगर भारत

के निवासी है, तो हम रोजाना के लेनदेन में **'रूपये'** का इस्तेमाल करते है और जो उस समय में व्यापार नीति थी उस व्यापारिक नीति को हम आज भी अपना रहे है। आज भी भारत की 50 प्रतिषत जनता शाहूकारों के चंगुल में है, आज भी राजस्व प्रणाली लगभग वही है। भूमि की पैमाइष और भूमि का वर्गीकरण उसी प्रकार का है और देष की सैनिक व्यवस्था भी उसी प्रकार की है।

निष्कर्ष :-

इस शोध–पत्र के निष्कर्ष में हम कह सकते हैं, कि 'दहषाला' प्रणाली जो थी, वह अकबर के शासनकाल की सबसे महत्वपूर्ण कर प्रणाली थी। इस कर प्रणाली की प्रासंगिकता वर्तमान में भी बनी हुई है। **डब्ल्यू० एच० मोरलैंड** के अनुसार– **'अकबर की कर प्रणाली (भू-राजस्व) एक प्रकार से व्यवस्थित, सर्वेक्षण-आधारित और 10 वर्षीय औसत (दहशाला) प्रणाली के रूप में थी।'** इसकी उन्होंने प्रषंसा की थी और किसानों के लिए इसको एक भार भी बताया है।

अकबर के काल की आर्थिक स्थिति बहुत ज्यादा सुदृढ़ थी, क्योंकि अकबर ने अपने समय में उन सभी क्षेत्रों में सुधार किये जहाँ उसे कभी सुधार की जरूरत महसूस की हुई थी और सुधार उस प्रकार से किये की वे सुधार राज्य की जनता के पक्ष में हो और राज्य की आर्थिक स्थिति भी सुधार सके। जैसे उसने भूमिका की पैमाइस कराई और भूमि चार क्षेत्रों में वर्गीकरण किया और भू–राजस्व भी उसी प्रकार से लिया जिस वर्ग की भूमि थी। इससे हुआ यह की राज्य को भू–राजस्व भी प्राप्त हुआ और राज्य की जनता भी खुष रही। इतिहासकार **डब्लू० एच० मोरलैंड** का मानना था, कि **'अकबर के शासनकाल की आर्थिक व्यवस्था कृषि पर आधारित और मुद्रा प्रधान थी, उन्होंने तर्क दिया है, कि इस दौर में व्यापार और बैकिंग व्यवस्था थी, परन्तु उत्पाद के तरीकों में तकनीकी विकास की कमी के कारण यह आधुनिक पूंजीवाद की ओर नहीं बढ़ पाया था।''**

इनके अनुसार अगर देखे तो इस बैंकिग व्यवस्था और मुद्रा प्राणाली की प्रासंगिकता वर्तमान में भी है और आज भी भारत की अर्थव्यवस्था कृषि पर ही आधारित हैं।

अकबर के आर्थिक सुधारों की प्रासंगिकता वर्तमान में भी बनी हुई है, क्योंकि जो उनके आर्थिक सुधार थे, वे आज भी प्रासंगिकता बने हुए है। आज के समय में **'रूपया'** चलन में है और व्यापारिक गतिविधियाँ उसी प्रकार से है, इससे अकबर के काल की आर्थिक सुधारों की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। ये सुधार कुषल शासन, पारदर्षिता और करो के तर्कसंगत संग्रह के माध्यम से आज के आर्थिक परिदृष्य में भी प्रासंगिकता हैं। अकबर के आर्थिक सुधारों (विषेषकर जब्ती और दहषाला प्रणाली) ने मुगल साम्राज्य को 22 प्रतिषत विष्व जीड़ीपी के साथ स्थिर और समृद्ध बनाया। **'राजा टोडरमल की' ''तकवी''** (कृषि ऋण) जैसी प्रणालियों ने निष्पक्षता सुनिष्चित की। वर्तमान में भी कर मानकीकरण, उत्पादकता आधारित कराधान और डिजिटल भूमि रिकार्ड ने इन सुधारों की प्रासंगिकता स्पष्ट की है। **'मोरलैंड'** ने **'अकबर को दूरदर्शी आर्थिक शासक के रूप में देखा, जिसमें भू-राजस्व मे स्थिरता लाकर मुगल अर्थव्यवस्था को मजबूत किया।''**

अतः इस प्रकार से अकबर के शासनकाल के आर्थिक सुधार वर्तमान में भी अपनी प्रासंगिकता बनाये हुए है और शायद आने वाले समय में भी अपनी प्रासंगिकता बनाए रखेगें।

संदर्भ सूची –

- मोरलैंड, विलियम हैरिसन : ए एग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुस्लिम इंडिया : ए हिस्टोरिकल निबंध विध

अपेंडिसेस, (कैम्ब्रिज, यूनिवर्सिटी प्रेस) लो, प्राईज पब्लिकेषन, दिल्ली, संस्करण–2003
- मोरलैंड, विलियम हैरिसन : इण्डिया एट दा डेथ ऑफ अकबर, ओरियण्ट बुक, पब्लिकेषन, नई दिल्ली, संस्करण–1993
- सिंह दषरथ : भारत में मुगल साम्राज्य, ज्ञानगीता प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण–2017
- गोहिल, डॉ० राजीव कुमार : मध्यकालीन भारत का इतिहास (मुगलकाल), रजत प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण–2014
- सिन्हा सुदेष : मुगलों का इतिहास, हिन्दी बुक प्रकाषन, किताब वाला यूनिवर्सिटी, पब्लिकेषन, संस्करण–2016
- चन्द्र सतीष : मध्यकालीन भारत (राजनीति समाज और संस्कृति), ओरिन्ट ब्लैकस्वॉन, संस्करण–2021
- श्रीवास्तव डॉ० हरिषंकर : मध्यकालीन भारत, संस्करण–2014
- चन्द्र सतीष : मध्यकालीन भारत (सल्तनत से मुगलकाल तक), हर आनन्द पब्लिकेषन, नई दिल्ली, संस्करण–2024
- वर्मा हरीषचन्द्र : मध्यकालीन भारत, भाग–2 हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेषालय दिल्ली, विष्वविद्यालय, संस्करण–2017
- हबीब इरफान : मध्यकालीन भारत, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण–2015
- व्यास शर्मा : मध्यकालीन भारत का इतिहास, (1206 से 1740), पंचषील प्रकाषन जयपुर, संस्करण–2020
- तिवारी डॉ० मुकेष कुमार : मध्यकालीन भारत का इतिहास (1526 से 1761), गरूण प्रकाषन गड़गाँव हरियाणा, संस्करण–2017
- श्रीवास्तव आर्षीवादी लाल : मुगलकालीन भारत (1526 से 1803 तक), षिवा लाल अग्रवाल एण्ड कंपनी प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण–2020

इे–मेल: anitasisodia231@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 66–75
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

INDIAN DIASPORA IN THAILAND : MIGRATION AND OCCUPATIONAL ENGAGEMENTS

Chandan Kumar Yadav
Ph.D. Research Scholar
Department of Medieval and Modern History, University of Lucknow, Lucknow
Prof. Pawan Kumar Yadav
Department of History (RMP PG College, Sitapur), University of Lucknow, Lucknow.

Abstract :

The Indian diaspora in Thailand represents one of the oldest and most influential migrant communities in Southeast Asia. Over centuries, Indians migrated to Thailand through trade networks, colonial-era mobility, and modern professional migration. This research article examines the historical trajectory of Indian migration to Thailand and analyzes the occupational engagements of the Indian community in the Thai economy. It explores how Indian migrants have participated in trade, entrepreneurship, professional services, and modern industries while maintaining cultural and social institutions. The study highlights the Indian traditional merchant communities and their historical profession. It also discusses the socio-economic contributions, challenges, and integration patterns of Indians within Thai society.

Keywords : Migration, Thailand, Illegal money lending, Indian community

INTRODUCTION :

Migration has been a process of acculturation and exploration for human being since time immemorial. There are ample of evidences available confirming Indians migration to different parts of the world and vice-versa. Thailand is one of the most preferable destinations of Indians in southeast Asia, to seek job opportunities and travel. Continuously growing number of Indians in Thailand draws scholarly attention for an academic enquiry about Indo-Thai relations and cultural influence. In this paper

I have briefly discuss migration history of Indians and the growing number of Indians in Thailand along with certain push factors from India and pull factors attracting Indians in Thailand.

Following article attempts to trace brief history of Indian emigration to Thailand and the shifting occupational trends of Indian communities (particularly the Hindi speaking emigrant section of Gorakhpur region) present in Thailand since their arrival in the foreign land till ongoing first quarter of 21st century. Huge inflow of monetary support to this region has helped many families to overcome out of poverty. This phenomenon has allured the youth (specially of less educated class) of this region to look for jobs and ways and means to take out their families from vicious web of poverty.

Most of the Indians migrated in the nineteenth century as laborers in rubber plantations, rice fields, docks, and government construction projects. Some others followed them as traders and moneylenders.

Indian migration to Thailand: Historical trends :

The Indian diaspora in Thailand has a rich history, with its members engaging in various occupations that have significantly influenced Thai society and economy.

Indian emigration to Thailand at a larger scale is merely a recent phenomenon of past 20th century. According to an estimate released by Ministry of External affairs (govt. of India), currently the number of Indian emigrants in Thailand is slightly more than 4,00,000. Most of the emigration is for employment and tourism purpose as this is evident from the presence of Indians in Phuhurat and Ban-Kaek districts of Bangkok (Thailand). Most of the emigrants are from certain specific regions of India comprising Tamilnadu, Punjab, Sindh, Uttar Pradesh and Bohra Muslim community.

Migration began in the age of Dvaravati civilization when Hindu religious cultural contacts reached different locations of Dvaravati civilization. This was followed by new relations in third century B.C in the course of propagation of Buddhism by King Asoka. The influence of Buddhism is still quite conspicuous in Thai life as on later stage Buddhism received the royal patronage & became the state religion.[1]

Later, in the modern period, waves of Indian migration to Thailand in the era of colonialism started in the 19th century when the British were granted permission to trade at Thailand's port in 1826. Thailand (Erstwhile Siam) was the immediate neighbour of India as soon as Britain acquired Tennasserim, Tavoy, Martaban and

[1] Ghosh, L. (2015). Sectional President's Address: INDIA-TIIAILAND RELATIONS IN TIIE ERA OF COLONIAL ENCROACHMENT. *Proceedings of the Indian History Congress*, *76*, 609–619. http://www.jstor.org/stable/44156628

Arakan of Burma by the Treaty of Yandabo on 24 February 1826. The British strategists namely Crawfurd, Burney and Stamford Raffles, who had laid the foundations of colonial expansion in Southeast Asia, began to fortify British India from all sides, and they were interested in bringing Thailand under their sphere of influence. The British merchants were interested in timber business and opium supplies in Thailand. On the other hand, Siam was concerned about its sovereignty after the defeat of China in the Opium War and establishment of British paramountcy in the region.[2]

Since the arrival in southeast Asian part, British colonialist did not engage with Thailand through war but they chose to have dialogue with royal Siam (now Thailand) king. The both parties arrived with following treaty of 1856.

Anglo-Thai Treaty of 1855 :

1. British subjects were permitted to own land in and around Bangkok.

2. British subjects were to be governed by the extraterritoriality system, according to which they were not subject to the Thai laws and courts, but were to be tried for any civil and criminal offense by the British consul according to the British legal system.

3. British subjects gained the right to trade freely, and to travel freely in the interior.

Then Indians who were British subjects started migration to Thailand and seek opportunities for economic growth.

The Indian migration into Thailand was not forced by colonial authorities, as it was often seen for other countries where English government had established colonies. The Indian emigrants went there to improve their economic status and it was in seek of employment. While talking about majority of later migrations into Thailand, it was result of economic advancement of earlier communities which was seen by their economic prosperity in homeland. Often generations of some families took over the businesses and trading firms of their forefathers. Most of the times emigration was as a result of people calling their kinsmen, or members of the same village or district. Most of them contemporary Indian emigrant and came to Thailand after the 1920s,

[2] Ghosh, L. (2015). Sectional President's Address: INDIA-THAILAND RELATIONS IN THE ERA OF COLONIAL ENCROACHMENT. *Proceedings of the Indian History Congress*, *76*, 609–619. http://www.jstor.org/stable/44156628

with certain groups tracing their arrival to the first half of the nineteenth century. Most Indians carne of their own· free will, and very few could have been said to have come to work in labour-intensive occupations.

The collapse of the rubber industry in Malaya in early 1930s prompted Indian workers to seek a livelihood in Siam (Thailand). By the 1930s, there was a thriving Indian community in Siam comprising recent immigrants. As Lanka Sundaram, a lawyer and intellectual who would later be elected to the Lok Sabha, wrote in the *Malaya Tribune* after a visit: "The British consulate puts the total strength of the Indian community in Siam as running up to anything like the hundredth thousand mark. But no figures are available to sustain this statement. Still, it is a common sight in Bangkok and elsewhere in the interior to find the sturdy Punjabi, the willing Bhayya from the UP, the shrewd Hindu from Kathiawar, and Ramaswamy from Madras, engaged in different trades, from hawking to vending milk, from being watchmen (Indians are in great demand for keeping peace round about shops, warehouses and hotels) to keeping well-appointed shops." Indians were "flourishing" in the clothing trade in Bangkok.[3]

The earliest groups to have come in sizable numbers to Thailand appear to have been the Tamils. Phuket in southern Thailand seems to have been the first area that experienced a spill-over of Tamils from Penang and Peninsular Malaysia. Most of them came to participate in the cattle trade and precious-stone mining.[4]

The Uttar Pradesh Hindi-speaking Hindus generally followed the establishment of Western trading firms in Bangkok. As each trading firm set up its warehouses and expanded its economic activities, more Uttar Pradeshis came to work as watchmen.[5]

TABLE 1 : TOTAL EMIGRANTS REGISTERED IN DIFFERENT DISTRICTS (YEAR 1908-1912)

DISTRICT	**EMIGRANTS REGISTERED**
GORAKHPUR	3727
BASTI	7583
BENARAS	2138
FYZABAD	9982 **(HIGHEST IN U.P.)**
ALL OTHER DISTRICTS	31355
TOTAL FROM UNITED PROVINCE	**54785**

[3]Kamalakaran Ajay, https://scroll.in/magazine/1065039/while-indians-faced-prejudice-and-abuse-in-thailand-british-colonists-chose-to-dilly-dally

[4] Singh Sandhu, K. & Mani, A. (2006). *Indian Communities in Southeast Asia (First Reprint 2006).* Singapore: ISEAS Publishing. https://doi.org/10.1355/9789812305732, p 912

[5] Ibid. p 914

* SOURCE : U.P. STATE ARCHIVES (INDUSTRIAL FILES ACCESSED ON 27/11/2024)

As per the data available at U.P. STATE ARCHIVES, due to huge outflow of Indian emigrants during first quarter of 20th century, colonial authorities decided to establish a new regional emigration centre in Uttar Pradesh in 1913. Since most of the registered emigrants were from eastern Uttar Pradesh and Bihar area, it was finally opened in Varanasi (then Banaras) after a long discussion between different colonial authorities. Since Fyzabad district had highest number of emigrants registered, few officials wanted the new emigration centre to be opened in Fyzabad, but Varanasi was chosen due to administrative convenience and its location nearing to Bihar.

Ministry of external affairs (govt. of India) published a fact sheet report in 2012, as per the data shown it estimated 150,000-200,000 people of Indian origin in Thailand, many of them having lived in the country for several generations. It comprised the communities of Punjabis, Namdhari and other Sikh sects, Gorakhpuris, Tamils and Sindhis.

Occupational aspect of Indians in Thailand :

The history of Indian occupations in Thailand reflects centuries of migration, cultural exchange, and trade between India and Southeast Asia. This connection is rooted in shared religious, cultural, and economic ties that date back over 2,000 years. Indians emigrated to Thailand got themselves engaged in wide range of occupations since their landing to this foreign land. It included them as traders, export and import business, cattle rearing, farming in rice fields, laborers in rubber plantation, dealing in precious metals and semi-precious stones, for some time Punjabis were enrolled in police services, and illegal money lending business etc.

Since Tamilians are regarded as the the first group of Indians who migrated to Thailand in the modern colonial era, so they were employed initially by British authorities and other British trading firms based on their skills and education level as laborers, clerks, and traders. They were particularly active in agriculture and small businesses. They were also engaged in the various development projects like irrigation, waterworks, railways, and banking. Tamil Muslims were engaged as butchers. There were other Tamilians who traded precious stones. When in the third quarter of the nineteenth century King Mongkut started modernizing Thailand, many British engineers and entrepreneurs entered the country along with their Indian subordinates which included some group of Tamilians who came through kangani system of labour, worked as labourers to construct railway line. Tamil Muslim traders opened their precious stone stores and textile shops in and around the Wat Ko area, where some shops exist even to this day.

Later on, the important community of Indian traders entered in Thailand was of Dawoodi Bohra Muslims and most of them came as wealthy traders to import British goods and export local goods. They established many firms in and around Bangkok city and carried on their wealthy business.

Indian Sikhs who are good in number even today in Thailand marked their presence in textile business. However, they were engaged in wide range of occupations but an important aspect to note is that during King Chulalongkom's reign (1868-1910), some Sikhs had also been enrolled into the Thai Police Force[6]. De Busen, the then British Consul in Thailand, explained that the police forces of Hong Kong, Singapore, and other British colonies had urged the Thai Government to make use of their experience by drawing on the considerable British Indian population in Bangkok. The constant French objections to the employment of British subjects in Thai government departments, discouraged such hiring. Sikhs settled in areas like Phahurat, i.e. also known as Bangkok's "Little India," and were involved in the textile industry. Sikhs were the early vendors from India selling textile and electrical equipment. The onset of World War II brought enhanced fortunes to the Indian business community. As cloth became a scarce commodity the stocks held by the Indian traders brought tremendous profits. During the war their position as a trading group with Japan was further enhanced. With the increased profits, they were able to buy more shops in the adjoining traditional Chinese business area - the Sampeng district. When the war ended, the textile-trading Punjabi community was in a better position in terms of controlling the textile market in Thailand.

In late 19th Century the postal service in Thailand were manned by Indian clerks. When the Britishers established their business offices in Bangkok, they preferred Indians as watch men. One important development in 1905 was the complete abolition of slavery in Thailand and this resulted in an acute shortage of labour supply. The permission to hire immigrant labour in Thailand accorded by King Mongkut helped to solve this problem of labour shortage. Since the local Thais were not prepared to work as hired labourers in plantations (rubber and teak) and in mining activities, Indian and Chinese immigrants filled the gap.

The most important emigrant community for the purpose of this article i.e. of Uttar Pradesh Hindi-speaking (mostly Hindus) emigrants were initially taken by western trading firms who had newly established their firms in Bangkok and other areas of Thailand. These emigrants were primarily employed watchmen of warehouses of trading firms. Other occupations included retail-shopkeepers, labourers in rice fields and rubber plantation. By the beginning of the twentieth century, the emigrants of eastern Uttar Pradesh mostly of higher castes i.e. Brahmins and Rajputs were

[6] Singh Sandhu, K. & Mani, A. (2006). *Indian Communities in Southeast Asia (First Reprint 2006)*. Singapore: ISEAS Publishing. https://doi.org/10.1355/9789812305732, p 914

working in sizable numbers as watchmen. Some emigrants entered into Thailand from Myanmar as watchmen and dairy farmers[7]. They were mainly from Gorakhpur, Azamgarh, Deoria districts of eastern Uttar Pradesh. some came largely as labourers and peons to work in the British and Dawoodi Bohra firms. One important point to note here is some emigrants were from Yadav community (known for milk business) from eastern Uttar Pradesh and with their arrival they developed colonies with cows. They worked as security guards in foreign firms, and developed friendly relations with local Thai people. These emigrants were called as Babus and bang (brother). However, the term bang is reserved for describing watchmen and milk-vendors, the number of emigrants to Thailand from eastern Uttar Pradesh has varied according to the growth or decline of foreign firms in Thailand

The economic pursuits of Indians in Thailand have largely remained unchanged. Textile is still the mainstay of all Indian wealth. Punjabis, both Sikhs and Hindus, are textile merchants who are concentrated in the Sampeng Pahurat area, which in tum reinforces their linguistic, cultural, and religious affinities. Punjabi, and to some extent Hindi, is the business language of the textile trade. G.J. Malik has noted that sugar plantations which were started in early 19th century in Bangkok had Indian labourers.

Post 1960s Indian businesses began to dominate in textile trade and some Indian businessmen began to set up their own factories, individually and/or in collaboration with Japanese or Indian capital and technology, notable names include Shivanath Rai Bajaj and Amamath Sachdev. Since 1978, Shivanath Rai Bajaj participated in more joint ventures. The Tupper of India firms have teamed up with him to start a 3,000-million-baht firm producing paper and pulp. With the Usha Company of India, he went into a joint venture to start Usha Siam, producing steel wires and ropes.

Indians in Thailand today are highly integrated into the local economy, with prominent representation in :

- **Retail:** Dominating segments such as jewellery, textiles, and consumer goods.
- **Corporate and IT:** Working in global firms and multinational corporations.
- **Education and Healthcare:** Operating schools, hospitals, and clinics catering to both Indian and Thai communities.
- **Tourism and Hospitality:** Leveraging Thailand's status as a major tourist destination, especially with Indian travellers.

[7] Ibid 915

Currently, many Indian business corporations have established their firms in Thailand with great success, notably Indian hotel chain namely OYO has opened its services in Thailand and it proved to be a great success.[8]

Illegal money-lending aka 'Din Daeng' business :

Illegal money lending enterprise, popularly referred to as the 'Din Daeng' business, has garnered significant attention among certain entrepreneurial circles. This venture, which traces its roots to Bangkok's Din Daeng district, revolves around the sale of commercial goods on a hire-purchase basis.[9] Despite the introduction of stricter regulations aimed at curbing excessive interest rates, the sector continues to thrive, gaining traction among both vendors and customers. The merchants involved in this trade are considered affluent by the standards of Thailand's middle class. This form of money transaction system has allured the youth of eastern Uttar Pradesh and from Sikh community and motivated them emigrate to Thailand. The vendors are wealthy by Thai middle-class standards. This is commonly seen in sell of clothes by roaming through villages and offering them to pay in instalments but the point to note here is that it involves very high interest rates (sometimes up to 20% per month).

They lend money to their personally known people (mostly are local vendors) with whom they have maintained a good credit business since a very long time. Indians lend money to them at a very high interest rate that goes up to 20% per month.

A returned emigrant through television interview told about modus operandi. Lenders lend X baht to a local Thai person at a rate of 20% interest (generally at this high rate this illegal lending business runs) per month. The total amount that is supposed to be returned by borrower will beX+ X*20-baht, post completion of one month, but the unique style of recovering (X+ X*20)/30 baht daily from borrower for 30 consecutive days makes it unique type of profitable business. It seems to be an easy model of compounding money (if all money is at lending for a year it can give up to 82 Times Effective Annual Return)[10] but sometimes the lender has to suffer losses also due to non-payment by borrower. However, all such transactions are illegal. Since all these transactions happen through nonproper channel they cannot do anything about it post losses. As per Thailand government rules, the banks can offer credit at maximum 15% annual interest rate as personal loans.

---

[8] https://www.traveldailymedia.com/oyo-welcomed-1000000-guests-in-thailand-in-3-months/

[9] Singh Sandhu, K. & Mani, A. (2006). *Indian Communities in Southeast Asia (First Reprint 2006)*. Singapore: ISEAS Publishing, p 926.

[10] Gopi Nath Vajpai, "82 Times Effective Annual Return – A Case Study Of Siam Moneylenders", International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), ISSN:2320-2882, Volume.6, Issue 2, pp.119-121, April 2018, Available at :http://www.ijcrt.org/papers/IJCRT1872421.pdf

There have been many instances of Indians getting caught by local Thai police while recovering the illegally lent money in past 2 decades. This business has resulted in local Thai lower class people being caught into vicious web of never-ending debt. Thailand government has regulated many laws to end this type of illegal businesses.[11]

The money-lending and 'Din Daeng' activities of the Indians have also caused certain amount of distrust among working-class Thais. The involvement of any Indian nationals in such activities can impact the broader community's reputation, which is generally well-regarded in Thailand. Legitimate Indian businesses often contribute positively to Thailand's economy, and community leaders typically discourage illegal practices.

In the recent times there have been many instances of foreigners getting caught by local Thai police for the violation of local laws of immigration and visa rules by getting involved in sham/fake marriages and fake student visas to overstay/extend their stay in Thailand on the basis of spouse visa, which includes a bulk number of Indian emigrants. Certain media reports published internationally, confirm that since sham marriages, also known as fake or fraudulent marriages, occur when two individuals enter into a marital union not for personal or romantic reasons but for other benefits, such as obtaining visas, residency, or other legal advantages. This becomes one of the several ways of extending stay on the foreign land.

The Indians travel mostly on tourist visas i.e. valid for 3 or 6 months, but with the means of sham marriages with a Thai lady (mostly from mon community) and/or fraud student visas, which has become part of their modus operandi to evade local emigration rules they become able to extend their stay. Since, there are stricter rules regarding marriages with foreign nationals the role of several illegal sham marriages agents and local corrupt royal govt. officials is a point to ponder upon. In the recent times on several occasions many such agents, Thai women and officials were caught and arrested involved in such sham marriages certificate case.[12]

Most of the accused used to make a living in Thailand as illegal moneylenders or salesmen for pay-by-installment goods such as clothing and electrical appliances. The news report said that around 8,000 Indian nationals reside in Thailand on spousal visas with Thai nationals.[13] The newspaper noted

---

[11] https://thai.news/news/thailand/bangkoks-illegal-loan-saga-indian-nationals-high-interest-money-lending-operation-unraveled

[12]https://timesofindia.indiatimes.com/nri/other-news/indian-man-27-thai-women-arrested-over-fake-marriage-scam-in-thailand/articleshow/67540291.cms

[13]https://www.aa.com.tr/en/asia-pacific/thailand-hundreds-of-indians-suspects-of-scam-marriage/1376853

that Indian nationals are often keen to stay in Thailand beyond the remit of their tourist visas, and "marriage can be used as a means to facilitate this."

Conclusion :

The Indian diaspora in Thailand illustrates a dynamic migration history shaped by trade, cultural exchange, and economic opportunity. From ancient maritime trade routes to modern professional mobility, Indian migrants have played an essential role in Thailand's social and economic development.

Initially dominated by merchants and traders, the occupational structure of the Indian community has diversified to include entrepreneurs, professionals, and service-sector workers. This transformation reflects broader trends in globalization and international migration. Despite challenges related to integration and regulatory frameworks, the Indian diaspora continues to contribute significantly to Thailand's economy and cultural diversity. Future research may focus on the role of second-generation Indian Thais and the evolving nature of Indo-Thai economic relations in the globalized world.

NOTES AND REFERENCES :

1. Ghosh, L. (2015). Sectional President's Address: INDIA-THAILAND RELATIONS IN THE ERA OF COLONIAL ENCROACHMENT. *Proceedings of the Indian History Congress*, *76*, 609–619. http://www.jstor.org/stable/44156628
2. Singh Sandhu, K. & Mani, A. (2006). *Indian Communities in Southeast Asia (First Reprint 2006)*. Singapore: ISEAS Publishing. https://doi.org/10.1355/9789812305732
3. https://scroll.in/magazine/1065039/while-indians-faced-prejudice-and-abuse-in-thailand-british-colonists-chose-to-dilly-dally
4. Gopi Nath Vajpai, "82 Times Effective Annual Return – A Case Study Of Siam Moneylenders", International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), ISSN:2320-2882, Volume.6, Issue 2, pp.119-121, April 2018, Available at :http://www.ijcrt.org/papers/IJCRT1872421.pdf
5. ARCHIVAL RECORDS (U.P. STATE ARCHIVES)
6. https://thai.news/news/thailand/bangkoks-illegal-loan-saga-indian-nationals-high-interest-money-lending-operation-unraveled
7. https://timesofindia.indiatimes.com/nri/other-news/indian-man-27-thai-women-arrested-over-fake-marriage-scam-in-thailand/articleshow/67540291.cms
8. https://www.aa.com.tr/en/asia-pacific/thailand-hundreds-of-indians-suspects-of-scam-marriage/1376853

Mob No: 7518134699
Email: cyjnvk@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 76–82
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति का चित्रण

राहुल साव
शोधार्थी, कूचबिहार पंचानन वर्मा विश्वविद्यालय।

भारतीय समाज अपनी बहुलतावादी संरचना, विविधता और सह–अस्तित्व की परंपरा के कारण विश्व में विशिष्ट स्थान रखता है। यहाँ विभिन्न धर्मों, भाषाओं, संस्कृतियों और परंपराओं के बीच जो समन्वय विकसित हुआ, उसे सामान्यतः "गंगा–जमुनी तहजीब" या हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति कहा जाता है। यह संस्कृति केवल धार्मिक सहिष्णुता तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई और भावनात्मक स्तर पर गहरे अंतर्संबंधों का परिणाम है। इस तहजीब में धर्म, जाति और भाषा की सीमाएँ लांघकर मानवता और सह–अस्तित्व की भावना प्रधान रही है। स्वतंत्रता के बाद जहाँ सांप्रदायिक ताकतें बढ़ीं, वहीं हिन्दी उपन्यासों में इस साझी संस्कृति को सहेजने का प्रयास भी हुआ।

1947 में भारत की स्वतंत्रता और उसके साथ हुए विभाजन ने इस साझी संस्कृति को गहरा आघात पहुँचाया। लाखों लोगों का विस्थापन, हिंसा और अविश्वास ने समाज को झकझोर दिया। ऐसे समय में साहित्य, विशेषतः हिन्दी उपन्यास, ने इस विघटन के बीच मानवीय मूल्यों, सह–अस्तित्व और सांस्कृतिक समन्वय को पुर्नस्थापित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

स्वातंर्त्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति का चित्रण केवल ऐतिहासिक घटनाओं का दस्तावेज नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का पुनर्निर्माण भी है।

'आधा गाँव', 'कितने पाकिस्तान', 'काला पहाड़', 'उपयात्रा' आदि में साझी संस्कृति एक वैचारिक और भावनात्मक बल के रूप में उभरती है। उपन्यासकारों ने यह दिखाने की कोशिश की है कि भारत की आत्मा इस साझी विरासत में बसती है।

आधा गाँव–गाँवों की साझी संस्कृति :

राही मासूम राजा का 'आधा गांव' भारत विभाजन से संबंधित सांप्रदायिकता पर लिखा गया है। इसमें भारत की साझी संस्कृति का बहुत सुंदर चित्रण हुआ है। यह भारत की गंगा जमुना तहजीब ही थी जो विभाजन के सांप्रदायिक दावानल में विपरीत धर्म वालों की रक्षा कर रही थी। आधा गांव उपन्यास में भारत की लहू लुहान होती साझी संस्कृति के कई करुण दृश्य है। गंगौली एक ऐसा गांव है जहां हिंदू और मुस्लिम एक साथ सांप्रदायिक भाईचारे के साथ बरसों से रहते आए हैं। परंतु सांप्रदायिकता के जहर ने एक दिन उन्हें इस मोड़

पर लाकर खड़ा कर दिया कि हिंदू हिंदू बनने को विवश हुआ और मुसलमान मुसलमान बनने को विवश हुआ। फिर भी गांव के पुरानी पीढ़ी यह साझी संस्कृति को बचाने के लिए अंत तक प्रयासरत रही।

राही ने इस उपन्यास में यह दिखाने की कोशिश की है कि गांव और शहर की संस्कृति में अंतर होता है। गाँव के लोग तमाम तरह के भेदभाव मानते हुए भी एक साझी संस्कृति को पोषित पल्ल्वीत करते हैं। जाति पाति, छुआछूत, ऊंच नीच आदि भेद भाव को मानते हुए भी साझी संस्कृति को विकसित करने में भारतीय ग्रामीण संस्कृति का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। यहाँ की भौगोलिक संस्कृति साझी संस्कृति को विकसित करने में सहायक है। इस साझी संस्कृति को बढ़ावा देने में गंगा की अहम भूमिका है। एक दृश्य देखिए– 'गंगा जब बाढ़ का रूप धारण करके गंगौली में आती हैं तब मुसलमान अजान देने लगते हैं। हिन्दू गंगा पर चढ़ावे चढ़ाने लगते हैं कि रूठी हुई गंगा मैया मान जाय और जब बाढ़ का पानी उत्तर जाता है तब मुसलमान कहते हैं कि अजान का वार कभी खाली नहीं जाता, हिन्दू कहते हैं कि गंगा ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली।'

गंगौली में गंगा जी और धर्म सिर्फ आस्था के सवाल के चलते महत्वपूर्ण नहीं हैं। वहाँ ये दोनों किसी तरह की साम्प्रदायिक सोच को जन्म नहीं देते। हिन्दू, मुसलमानों के मजारों पर और मुसलमान, हिन्दुओं के देवी–देवताओं से अपने घर–परिवार की कुशलता के लिए मन्नतें माँगते हैं। इसी भाव के कारण गंगौली वालों की है, हिंदू–मुसलमानों की नहीं। इसीलिए जब कहीं से लड़ाई झगड़ा होता है तब गंगौली वाले न हिन्दू देखते हैं न मुस्लमान बल्कि वे हिन्दू मुस्लिम भूलकर सिर्फ गंगौली वालों का साथ देते हैं। 'अगर गंगौली को हिन्दुस्तान का प्रतीक मान लिया जाय तो ठीक यही बात हिन्दुस्तान के लिए कही जा सकती हैं। इसलिए गंगौली की कहानी और साझी संस्कृति को हिन्दुस्तान की कहानी और साझी संस्कृति के रूप में देखना समझना चाहिए।' गंगौली की साझी संस्कृति को विकसित करने में गांव के गँवारुपन की भी बड़ी भूमिका है। गँवारपन उन्हें धार्मिक और सम्प्रदायिक कट्टरता से बचाता है। उनका धर्म से अपनी खुशी, सुख–दुःख आदि का वास्ता हैं। वे धार्मिक राजनीति या चालाकी से दूर हैं। गंगौली में किसी का बेटा जेल जाता है या कोई बीमार पड़ता है, वह चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, दौड़कर इमाम साहेब की शरण में जाते हैं। उनके साथ कोई अन्याय हो गया तो इन्साफ इमाम साहब करेंगे। 'उनके इमाम साहब हिन्दू–मुस्लिम में फर्क करना नहीं सीखाते हैं। इसलिए गंगौली के हिन्दू–मुस्लिम छुआछूत एवं ऊँच–नीच का भेदभाव तो मानते हैं मगर किसी तरह के धार्मिक वैमनस्य का भाव उनके मन में नहीं है। किसी साम्प्रदायिक सोच के लिए जगह वहाँ नहीं है। इसी प्रकार मुस्लमान गंगौली में हिन्दू देवी देवताओं से मंनौती मांगते हैं, भाड़ा भाखते हैं। इस तरह की साझी संस्कृति के आधार पर ही भारत में सांप्रदायिकता की लहर को रोका जा सकता है।'

सांप्रदायिकता पर लिखे हर उपन्यास में गांवों में सांप्रदायिकता और धार्मिक वैमनस्य का जहर शहर के माध्यम से फैलता है। इस उपन्यास में भी इसी सच्चाई का चित्रण है। छिकुरिया इस उपन्यास का एक महत्वपूर्ण पात्र है। शहर के एक मास्टर साहब छिकुरिया को जब बताते हैं कि इमाम मुसलमानों के देवता हैं और हिन्दुओं को उन्हें नहीं मानना चाहिए तो छिकुरिया कहता है – ''हई ला, भैया! अरे, का हम बुर्बक हईं। इमाम साहब के मुसलमान ना कहे के चाही नहीं त हम के भोग चढ़ावे देताँ मियाँ लोग और इमाम साहिब ओके स्वीकारो करताँ।"

'छिकुरिया की यह सोच किसी भी धार्मिक या साम्प्रदायिक सोच से ऊपर आस्था का प्रतीक है। उसके

यहां हिन्दू–मुस्लिम में तो भेद है मगर देवी–देवता में हिन्दू–मुस्लिम का भेद नहीं है।' इसलिए तो मास्टर साहब ने उसे लाख–लाख समझाया कि इमाम साहब पक्के मुसलमान थे, लेकिन वह जानता था कि इमाम साहब मुसलमान नहीं हो सकते। मुसलमान तो मौलवी बेदार हैं जो हिन्दुओं का छुआ नहीं खाते। मुसलमान तो हकीम अली कबीर हैं जो बात–बात पर दरवाजे के हौज में अपने को पाक रखने के लिए नहाते रहते हैं।'

गाँवो का भोलापन या गांवहीपन है सांप्रदायिकता को उनपर या उनके भाईचारे पर हावी नहीं होने देता। गंवही भाईचारा एक साथ रहने के कारण विकसित हुआ है। गांव के लोग सुख–दुःख में एक–दूसरे का साथ देते है। उनकी मजबूत भाईचारा इसी का परिणाम है। गांव के इसी राह पर चलकर भारत की साझी संस्कृति को बचाया जा सकता है।

राही मासूम रजा का उपन्यास आधा गाँव साझी संस्कृति का जीवंत उदाहरण है। गंगौली गाँव में हिन्दू और मुसलमान वर्षों से साथ रहते हैं। उनकी पहचान 'गंगौली वाले' के रूप में है, न कि हिन्दू या मुसलमान के रूप में।

"हम गंगौली वाले थे – न हिंदू, न मुसलमान... हममें एक ऐसा रिश्ता था जो मजहब से नहीं, मोहब्बत से बना था।"

यह उपन्यास दिखाता है कि किस तरह साझी संस्कृति की जड़ें गाँवों में गहराई से धँसी थीं। लेकिन जब शहरी राजनीतिक ताकतें गाँवों में घुसीं, तो वे इस तहजीब को तोड़ने लगीं।

कितने पाकिस्तान : इतिहास में साझी संस्कृति की खोज :

भारत की साझी सांस्कृतिक की विरासत का जिक्र एवं चित्रण साम्प्रदायिकता पर लिखे गए हर उपन्यास में है। कमलेश्वर का उपन्यास कितने पाकिस्तान साझी संस्कृति को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है। लेखक इतिहास के पन्नों से दाराशिकोह, सूफी, संतों, फकीरों और संत महात्माओं को सामने लाते हैं। दाराशिकोह कहता है – "हमारी तहजीब में लोहे और बारूद के भौतिक हथियार नहीं, आत्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक हथियारों का अन्वेषण हुआ है।"

कमलेश्वर के 'कितने पाकिस्तान' में अकबर उगते हुए सूरज की इबादत करता है और उसका पुत्र जहाँगीर भी – 'किले की बुर्ज पर से जहाँगीर ने उगते सूरज को देखकर सिर झुकाया। पीछे कहीं किसी मंदिर से सूर्य स्त्रोत की ध्वनि गूँज उठी। तब जहाँगीर ने नूरजहाँ से कहा – 'कितना खूबसूरत मंजर है। ... हमारे वालिद शहंशाह अकबर इस झरोखे में खड़े होकर उदित होते सूरज की हमेशा इबादत करते थे... उन्होंने यह रस्म हमारी वालिदा जोधाबाई से पाई थी।''

इतिहास के पन्नों में मंदिर तोड़ने के अंगारे ही दफन नहीं है बल्कि प्रेम और भाईचारे के फूल भी दफन हैं। यह हमारी सोच पर निर्भर हैं कि हमारी दृष्टि किस पर जाती है। यदि हमारी सोच भारत के एक ऐसे उज्ज्वल भविष्य पर टिकी होगी जिसमें नफरत गिराकर प्रेम और भाई–चारे की ऐसी ही नदी बहानी होगी तो हम इतिहास के ऐसे ही पन्नों को टटोलेंगे जिसमें प्रेम और भाई–चारे की मिसालें दफन होगी। इस उपन्यास में लेखक ने यही किया है।

इस उपन्यास में यह बताने की कोशिश है कि किस ऐतिहासिक क्रम में और इतिहास के किन दबावों

में हमारी साझी संस्कृति का निर्माण हुआ है। हिंदुस्तान की तवारीख गवाह है कि मध्ययुगीन इतिहास में हिन्दू–मुस्लिम जनता के रस्मों–रिवाजें घुलमिलकर नयी मिश्रित संस्कृति को जन्म दे रही थीं – 'उगते सूरज को सलाम करना और डूबते सूरज को नमाज के साथ विदा करना यह तो हमारी हिंदुस्तानी परम्परा का खास हिस्सा है।'

विद्वानों का मानना है कि अकबर के दौर में हिंदुस्तान में एक नई तहजीब का नक्शा तैयार हो रहा था जिसे आगे चलकर भारत की गंगा–जमुनी तहजीब की संज्ञा दी गयी। परंतु इस गंगा–जमुनी तहजीब मुखालफत संकीर्ण मजहब परस्त उस दौर से ही करते आ रहे है – 'इस्लामपरस्ती को हिन्दुस्तानपरस्ती में बदल दिया जाए, यह मुनासिब नहीं है ... यही आपके बादशाह अकबर ने किया था और यही अब आपके शहंशाह जहाँगीर कर रहे हैं... इन हालात पर आपलोग नजर रखिये ... वतन–परस्ती से ज्यादा जरुरी है मजहब–परस्ती !' और ऐसे ही लोगों के चलते हिन्दू–मुस्लिम जनता के बीच दूरी पैदा हुई और एकदिन मुल्क तक्सीम हुआ। भारत सूफी उदारवाद की जिस राह पर आगे बढ़ रहा था उसे इस्लामिक ब्राह्मणवाद ने कुचल दिया – 'इसी इस्लामी–ब्राह्मणवाद ने अकबर की कोशिशों को नाकाम किया था ... इसी ने जहाँगीर को अपनी चपेट में ले लिया था। शाहजहाँ पूरी तरह इसका शिकार हुआ था और तब इस्लाम के नाम पर औरंगजेब मुसलमान–ब्राह्मण बनकर इंसानपरस्ती को छोड़ कर मजहबपरस्ती के रास्ते पर चल पड़ा था!'

साम्प्रदायिकता पर लिखते समय लेखक विचारधारात्मक दबाव में मुस्लिम साम्प्रदायिकता के खिलाफ एक साइलेंट रोल अदा करने लगता है। इसमें लेखक ने अपनी प्रगतिशील मार्क्सवादी विचारधारा के बावजूद दोनों तरह की साम्प्रदायिकता के ऐतिहासिक और सामाजिक पहलुओं की छानबीन को है। दोनों के दोषों और खामियों को तथ्यों के आधार पर रखने की कोशिश की है। इतिहास और साहित्य दोनों के सहारे से कथात्मक ताने में भारत की साझी संस्कृति का पक्ष रखने का प्रयास इस उपन्यास में है।

यह उपन्यास भारत के इतिहास और ऐतिहासिक साक्ष्यों की दुनिया की संस्कृतियों, सभ्यताओं और इतिहासों एवं मिथकों के हवाले से इनके दुरुपयोग की भयावहता को उजागर करता है और बताता है कि विभेदकारी शक्तियों द्वारा इनका दुरुपयोग मानवता को कितनी क्षति पहुँचती है। यह उपन्यास सांप्रदायिक – सांकृतिक अलगाव का प्रतिवाद करता है। अलगाववादी मानसिकता से मुल्क तक्सीम हो जाते है, सभ्यताएं तहस – नहस हो जाती हैं और समाज में विभेदकारी सांकृतिक मूल्यों को प्रश्रय मिलने लगता है। सांप्रदायिक बंटवारे से संस्कृतियों, भौगोलिक स्थानों की स्थानीयता मानवीय मूल्यों का काफी नुकसान होता है। दुनिया में एकल संस्कृति और सभ्यता संभव नहीं। अतः साझी संस्कृति और सभ्यताओं के सह अस्तित्व के साथ ही मानव कल्याण और समाज की मजबूती संभव है।

यह उपन्यास दर्शाता है कि भारत की महानता उसकी बहुलता और सह–अस्तित्व में रही है, न कि धार्मिक एकरूपता में।

उपयात्रा – धर्म के पार इंसान की खोज :

मो० आरिफ का एक उपन्यास 'उपयात्रा' है। इसमें फैजाबाद जिले की साझी संस्कृति का ऐतिहासिक विश्लेषण है जो वर्षों से हिन्दू–मुस्लिम जनता के सह अस्तित्व से कायम हुआ था। मगर बाबरी मस्जिद की घटना से इसे गहरा धक्का लगा।

इस उपन्यास में लेखक केवल बाबरी मस्जिद की घटना को ही हिन्दू–मुस्लिम के बीच की बढ़ती दूरी के लिए जिम्मेदार नहीं मानता है, वह और भी ठोस कारणों का विश्लेषण करता है। आखिर वे कौन–कौन से कारण हैं जो दोनों सम्प्रदायों को एक–दूसरे से दूर ले जाते हैं? दोनों सम्प्रदाय एक–दूसरे से जितने दूर जाएँगे उतनी ही साझी–संस्कृति कमजोर होगी। लेखक बताता है कि दोनों सम्प्रदायों में एक–दूसरे के धर्म और रीति–रिवाजों की गलत जानकारी और गलत समझ भी गंगा–जमुनी संस्कृति को कमजोर बनाती है। लेखक कहता है – 'मेरे बहुत से मित्रों के अंदर गोमांस खाना, जननांग का खतना, पेशाब के बाद मुस्लिम स्त्रियों एवं पुरुषों द्वारा जननांग को धोने एवं रमजान में सुबह तीन बजे के भोजन आदि जैसे रिवाजों के बारे में बहुत ही गलत धारणाएँ हैं– जिनमें कुछ को सुनकर तो हँसी आती है और कुछ को सुनकर क्रोध। इसी प्रकार हिंदुओं के बहुत से संस्कारों से हम अनिभिज्ञ है तथा उन्हें गैर जरूरी समझते हैं। जैसे मुर्दे को जलाना, मुसलमानों को अछूत समझना, और होली में रंग डालना, मदिरापान, करना, दिवाली में जुआ खेलना, बड़ों के पैर छूना, झटका मीट खाना आदि। स्थिति तब खराब होती है जब हम इनसे असहमत होने लगते हैं।' एक–दूसरे के रिवाजों के प्रति, धार्मिक मान्यताओं के प्रति ऐसा वैमनष्य साझी–संस्कृति को कमजोर बनाते है। साझी–संस्कृति एक–दूसरे के प्रति सही और स्वस्थ नजरिए से बनती और मजबूत होती है। ऐसा नहीं है कि इस तरह के नजरिए का निर्माण कोई आधुनिक काल की 'फेनोमिना' है। बल्कि 'अकबर के जमाने में ही यह महसूस किया जाने लगा था कि हिन्दू और मुसलमानों के बीच दूरी का एक बड़ा कारण एक–दूसरे के बारे में जानकारी का अभाव है।'

साम्प्रदायिकता को मजबूत करने में भी इस अभाव की एक बड़ी भूमिका है। आधुनिक समय में लगातार दंगों ने भी गलत जानकारियों एवं अफवाहों को बढ़ावा दिया है। दोनों सम्प्रदायों की अलग बस्तियों की बढ़ती तदाद ने भी अपनी अहम भूमिका निभाई है। इससे आपासी मेल–मिलाप का अवकाश तो कम हुआ ही है साथ ही दूरी भी बढ़ी है। साझी–संस्कृति को मजबूत करने के लिए आपसी मेल–मिलाप एक साथ का रहन–सहन जरूरी है। जहाँ हिन्दू–मुस्लिम साथ–साथ बसे हुए हैं, वहाँ आपली वैमनस्य और साम्प्रदायिकता काफी कमजोर हैं। गाँवों में ऐसे दृश्य बहुत देखने को मिलते हैं। एक ही गाँव में हिन्दू–मुस्लिम साथ बसे होते हैं। वहाँ रात–दिन एक–दूसरे के रीति–रिवाजों को देखते और उसमें शरीक होते हुए वे एक–दूसरे के रीति–रिवाजे से भलि–भाँति परिचित हो जाते हैं। वहाँ इन बातों पर आपसी मतभेद की गुंजाईश नहीं बचती। गाँवों में स्त्रियां एक–दूसरे के घर विवाहों में वैवाहिक गीत गाने जाती हैं। वैवाहिक गीतों में पारम्परिक धार्मिक रंग होता है अर्थात् गीतों में अपनी जातीय, धार्मिक और सांस्कृत परम्परा का रंग घुला मिला होता है। जब मुस्लिम स्त्रियों अपने हिन्दू पड़ोसी या गाँववाले के घर गीत–मंगल गाने जाती है तो हिन्दू परम्परा से अवगत होती है आर ठीक, उसी प्रकार जब हिन्दू औरत मुस्लिम पड़ोसी और गाँव वाले के घर जाती है तो उसकी परम्परा और संस्कृति से अवगत होता है। पुरुष शादी–विवाहों उत्सवों में शरीक होकर एक–दूसरे की परमपरा से परिचित एवं अवगत होते हैं। इससे आपसी वैमनस्य पनप नहीं पाता और साझी संस्कृति को बढ़ावा भी मिलता है, बलिक यूं कहें कि इसी प्रकार साझी–संस्कृति विकसित और पुष्पित–पल्लिवत होती चली जाती है।

हिन्दू राष्ट्र या मुस्लिम राष्ट्र की जगह लेखक भारतीयता की वकालत करता है, भारतीय राष्ट्र की बात करता है। हिन्दू राष्ट्र या मुस्लिम राष्ट्र की अवधारणा भारत की साझी संस्कृति के लिए घातक है। ठीक इसी

प्रकार केवल धर्म को अपने राष्ट्र से अधिक महत्त्व देते हुए पाकिस्तान से अधिक लगाव महसूस करना भी साझी–संस्वाति के लिए घातक है। पाकिस्तान से इस अनावश्यक लगाव का फायदा साम्प्रदायिक शक्तियों उठाकर अपना स्वार्य सिद्ध करने में कामयाब हो जाती हैं। कुछ मुसलमान अशिक्षा, गरीबी और अपनी धार्मिक कूपमंडूकता के चलते अपने ही साम्प्रदाय तक सिमटते चले गए हैं जबकि कुछ मुसलमान आधुनिक होकर अपनी धार्मिक कूपमंडूकता से बाहर निकलकर शिक्षा के आधार पर आगे बढ़कर हिन्दू समुदाय से मेलजोल कायम करने में सफल हुए हैं। फलस्वरूप हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति को बल मिला है।

उपयात्रा जैसे उपन्यासों में ऐसे पात्र हैं जो धर्म से ऊपर उठकर मानवता को सबसे बड़ा धर्म मानते हैं। रामचन्दर बाबू और मियाँ हिंदावल जैसे चरित्र मुस्लिम और हिन्दू होकर भी एक–दूसरे के दुख में भागीदार हैं। यह उपन्यास दर्शाता है कि आम लोग एक–दूसरे के सुख–दुख में शरीक होते हैं, जबकि नेताओं और धार्मिक ठेकेदारों के लिए धर्म केवल सत्ता पाने का जरिया है।

काला पहाड़ : सांप्रदायिक साजिश के विरूद्ध साझी संस्कृति :

भगवानदास मोरवाल का उपन्यास काला पहाड़ बाबरी मस्जिद विध्वंस के संदर्भ में लिखा गया है। इसमें मुस्लिम बहुल गाँव का बुजुर्ग पात्र सलेमी जब देखता है कि कुछ लोग मंदिर तोड़ने जा रहे हैं, तो वह क्रोधित हो जाता है और उन्हें डाँटता है :

"तन्ने थोड़ी बहुत भी सरम न आई कि जिनके पै हम उठे–बैठे हैं, उनका मंदरन के कैसे हाथ लगाए?"

यह दृश्य साझी संस्कृति की रक्षा की चेतना का उद्घोष है। यह दिखाता है कि साझी तहजीब केवल स्मृति नहीं, वर्तमान में जीवित मूल्य है।

लोक-संस्कृति और साझी आस्था :

कई उपन्यासों में यह दिखाया गया है कि ग्रामीण भारत में लोग देवी–देवताओं के स्थानों पर, चाहे वे हिन्दू हों या मुस्लिम, समान श्रद्धा रखते हैं। मन्नतें माँगना, हाट–बाजार में साथ आना–जाना, मरनी–हरनी में एक–दूसरे के काम आना – ये सभी साझी संस्कृति के मूर्त रूप हैं।

काला पहाड़ में दिखाया गया है कि कैसे गाँव में एक मुस्लिम परिवार मंदिर की मरम्मत करवाता है और पुजारी को तनख्वाह देता है।

निष्कर्ष :

हिन्दी उपन्यासों में साझी संस्कृति केवल एक सांस्कृतिक मूल्य नहीं, बल्कि एक राजनीतिक प्रतिरोध भी है। यह उस तानाशाही, कट्टरता और विभाजनकारी मानसिकता के विरुद्ध खड़ी होती है जो भारत को बाँटना चाहती है। हिन्दी उपन्यासकारों ने साझी संस्कृति को केवल एक अतीत की स्मृति के रूप में नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य की उम्मीद के रूप में देखा है। ये रचनाएँ सांप्रदायिकता के विरुद्ध मानवता का पक्ष लेती हैं।

कितने पाकिस्तान में अदीब अदालत में कहता है – "कोई मजहब इंसान से ऊपर नहीं है... पहले इंसान पैदा हुआ, फिर मजहब।"

यह कथन आधुनिक भारत के लिए मार्गदर्शन बन सकता है, जहाँ धार्मिक पहचान के नाम पर नफरत फैलाई जा रही है।

इन रचनाओं से यह स्पष्ट होता है कि जब तक आमजन के बीच मेल–जोल, रिश्ते–नाते, लोक–संस्कार, और सह–अस्तित्व की भावना बनी रहेगी, तब तक भारत की आत्मा जीवित रहेगी। साझी संस्कृति भारत की धड़कन है – इसे बचाना साहित्य का, समाज का और हर नागरिक का कर्तव्य है।

संदर्भ सूची :

1. कुमार, डॉ. रणजीत, सांप्रदायिकता के आईने में चार उपन्यास, बंगीय हिंदी परिषद, कोलकाता, संस्करण 2013
2. सी. पी. वी. डॉ विजयकुमारन, हिंदी उपन्यासों में भारत विभाजन परवर्ती वास्तविकता, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, संस्करण 2013
3. अभिनव कदम, नवंबर 2001
4. सी. पी. वी. डॉ विजयकुमारन, हिंदी उपन्यासों में भारत विभाजन परवर्ती वास्तविकता, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, संस्करण 2013,
5. रजा राही मासूम, आधा गाँव, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2006
6. कमलेश्वर, कितने पाकिस्तान, राजपाल एंड सांस, कश्मीरी गेट दिल्ली, संस्करण 2007
7. मोरवाल, भगवान दास, काला पहाड़, राधाकृष्ण प्र., नई दिल्ली, संस्करण।
8. आरिफ मोहम्मद उपयत्रा, लोकभारती प्र., इलाहाबाद, संस्करण 2006

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 83–86
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

गीतों के 'साहिर' – साहिर लुधियानवी

सिद्धार्थ
(युवा कवि)

शोध सार –

साहिर लुधियानवी ने हिन्दी–उर्दू काव्य व भारतीय सिनेमा के गीतों में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना, और प्रगतिशील विचारधारा को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया। उनके साहित्य के लेखन में युद्ध विरोध, शोषण के प्रति प्रतिरोध तथा प्रेम व शांति की आकांक्षा प्रमुख रूप से उभरती है। समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों ने साहिर लुधियानवी की दृष्टि को गहराई प्रदान की, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने सत्ता, पूंजीवाद और अन्याय पर तीखा प्रहार किया तथा प्रेम को व्यक्तिगत रूप से देखने के बजाय सामाजिक सरोकार के रूप में अभिव्यक्त किया। साहित्य की भाषा आम जनता से सीधा संवाद स्थापित करती है। प्रस्तुत आलेख में साहिर लुधियानवी के जीवन, रचना संसार, काव्य दृष्टि और उनके गीतों की सामाजिक सार्थकता का विश्लेषण किया गया है।

बीजशब्द –

जीवन, प्रेम, रचना संसार, प्रगतिशीलता, सामाजिक सरोकार, शोषण, शांति, स्त्री अधिकार, मानवतावाद।

मूल आलेख –

हिन्दी–उर्दू कविता और फिल्मी गीतों की दुनिया में साहिर लुधियानवी का नाम एक ऐसे शायर के रूप में लिया जाता है, जिसने शब्दों को केवल भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का सशक्त आधार बनाया। साहिर ने प्रेम, विद्रोह, समाज, राजनीति और मानवीय संवेदनाओं को जिस गहराई और ईमानदारी से व्यक्त किया, वह उन्हें समकालीन गीतकारों व शायरों से अलग खड़ा करता है। उनके गीत केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि विचारों की आग, करुणा की नमी और यथार्थ का आईना है।

साहिर लुधियानवी का वास्तविक नाम अब्दुल हई था। उनका जन्म 8 मार्च 1921 को पंजाब के लुधियाना में हुआ। उनके जीवन की प्रारंभिक परिस्थितियाँ संघर्षपूर्ण थीं। पारिवारिक कलह और आर्थिक कठिनाइयों ने उनके व्यक्तित्व को गहराई से प्रभावित किया। उन्होंने लाहौर के गवर्नमेंट कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की, जहाँ उनकी साहित्यिक प्रतिभा विकसित हुई। वे प्रगतिशील लेखक संघ से जुड़े और यही से उनके लेखन में सामाजिक चेतना का स्वर स्पष्ट होने लगा।[1]□

साहिर लुधियानवी विभाजन के बाद भारत में आए और मुंबई में फिल्मी गीतकार के रूप में स्थापित हुए।[2]

साहिर का पहला काव्य संग्रह 'तल्खियाँ' 1945 में प्रकाशित हुआ, जो उनकी वैचारिक प्रतिबद्धता और

सामाजिक दृष्टि का प्रमाण है। इस संग्रह में उन्होंने समाज की विषमताओं, गरीबी व अन्याय को तीखे शब्दों में व्यक्त किया। उनकी काव्य दृष्टि यथार्थवादी और प्रगतिशील है। वे प्रेम को भी सामाजिक संदर्भों में देखते हैं और व्यक्तिगत भावनाओं को व्यापक मानवीय सरोकारों से जोड़ते हैं। नामवर सिंह के अनुसार 'प्रगतिशील कविता का उद्देश्य यथार्थ को उजागर करना और परिवर्तन की चेतना जगाना है।'[3] साहिर का पूरा काव्य प्रगतिशील परंपरा में स्थित है।

'साहिर के गीतों में वर्ग संघर्ष, पूंजीवाद की आलोचना और मानवीय संवेदना प्रमुख तत्व हैं।'[4]

साहिर लुधियानवी ने हिन्दी सिनेमा को एक नई दिशा प्रदान की। उन्होंने गीतों को केवल मनोरंजन का साधन न मानकर उन्हें सामाजिक संदेश का माध्यम बनाया। जैसा कि दिवेदी कालीन कवि मैथलीशरण गुप्त ने अपने खंड काव्य 'भारत भारती' में लिखा है कि– 'मनोरंजन ही नहीं कवि का कर्म होना चाहिए / उचित उपदेश भी कविता का धर्म होना चाहिए।'[5]

साहिर के गीतों में गहरी संवेदना, विचार और काव्यात्मक सौंदर्य का अनूठा संगम है। उनके कई प्रसिद्ध गीतों में :

"ये दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है"

"जाने वो कैसे लोग थे जिनके प्यार को प्यार मिला"

"मैं जिंदगी का साथ निभाता चला गया"

"अभी न जाओ छोड़कर"

उपयुक्त गीतों में जीवन की निराशा, प्रेम की विडंबना, और अस्तित्व का दर्शन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

साहिर ने हिन्दी फिल्म गीतों को वैचारिक ऊँचाई प्रदान की। उनके गीतों में केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि सामाजिक आलोचना भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उदाहरण के लिए फिल्म 'प्यासा' का गीत – "ये दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है" पूंजीवादी समाज की निरर्थकता और नैतिक पतन की तीखी आलोचना करता है।

भारतीय सिनेमा पर लिखे गए ग्रंथ Encyclopaedia of Indian Cinema (Ashish Rajadhyaksha) के अनुसार, 'साहिर उन गीतकारों में हैं जिन्होंने फिल्मी गीतों को 'Poetic Protest' का स्वर दिया।' इसी प्रकार "जिन्हें नाज है हिंद पर" में सामाजिक पाखंड और असमानता पर करारा प्रहार है।

साहिर लुधियानवी के रचना संसार में प्रेम केवल रोमांटिक अनुभूति नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ से जुड़ी हुई भावना है। साहिर का गीत 'जाने वे कैसे लोग थे जिनके प्यार को प्यार मिला' में प्रेम की विफलता के माध्यम से सामाजिक संरचना की कठोरता सामने आती हैं। नामवर सिंह के अनुसार आधुनिक कविता में प्रेम का चित्रण यथार्थवादी होना चाहिए।[6] साहिर इस कसौटी पर पूर्णतः खरे उतरते है साहिर ने प्रेम को केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना से प्रभावित भावना माना है।

साहिर लुधयानवी का दृष्टिकोण नारी के प्रति अत्यंत प्रगतिशील है। उनकी प्रसिद्ध पंक्तियां 'औरत ने जनम दिया मर्दों को / मर्दो ने उसे बाजार दिया।' भारतीय समाज में स्त्री की स्थिती पर तीखा प्रश्नचिन्ह

लगाती हैं। साहिर ने अपने गीतों में पितृसत्तात्मक समाज की आलोचना की हैं। उन्होंने नारी को एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में देखा और उसके अधिकारों की वकालत की। गोपीचन्द नारंग के अनुसार 'उर्दू कविता में स्त्री–विमर्श का यह स्वर आधुनिक चेतना का परिचायक है।[7]

साहिर लुधियानवी की भाषा सरल, सहज और संप्रेषणीय है। उन्होंने मुंशी प्रेमचन्द्र की भांति हिन्दी–उर्दू के मिश्रण से एक ऐसी शैली विकसित की जो व्यापक जनमानस तक पहुंचती हैं। उनके काव्य में बिंब और प्रतीक कम, लेकिन भावनात्मक तीव्रता अधिक है– यही उनकी लोकप्रियता का प्रमुख कारण है। Ashok Da. Ranade. के अनुसार 'हिन्दी फिल्म गीतों में अर्थ और संगीत के संतुलन का जो स्तर साहिर ने स्थापित किया, वह अद्वितिय है।'[8] साहिर के गीतों में जो संवादात्मकता दिखाई देती है जो उन्हें और अधिक जीवंत बनाती हैं।

साहिर लुधियानवी का पूरा लेखन सामाजिक प्रतिबद्धता से जुड़ा हुआ है। वे सत्ता, धर्म, पूंजीवाद और युद्ध सभी के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि रखते हैं। साहिर के गीतों में विरोध केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि वैचारिक और संरचनात्मक है। 'प्रगतिशील साहित्य की परंपरा में साहिर का स्थान इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने एक विचारधारा को जनभाषा में व्यक्त किया'। साहिर के गीतों का मूल स्वर विद्रोह और सामाजिक चेतना है। समाज में व्याप्त असमानता और शोषण के खिलाफ परचम बुलंद रखा।

आज के समय में भी साहिर लुधयानवी के गीत उतने ही प्रासंगिक है जितने पहले सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में प्रासंगिक थे। उनके गीतों में व्यक्त सामाजिक चेतना, मानवीय संवेदना और विद्रोह आज के समाज में भी उतना ही अर्थपूर्ण हैं। आज के समय में नई पीढ़ी के गीतकार उनसे प्रेरणा लेकर अपने समय का रचना संसार बसा रहे हैं। सामाजिक असमानता, स्त्री अधिकार, पूंजीवाद की आलोचना, ये सभी विषय आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितने उस समय में थे।

इस दृष्टिकोण से साहिर लुधयानवी के गीत ज्पउमसमे या कालातीत हैं।

निष्कर्ष :

साहिर लुधियानवी के गीतों ने हिन्दी–उर्दू साहित्य और भारतीय सिनेमा को एक वैचारिक दिशा प्रदान की है।

उन्होंने अपने गीतो को एक औजार की तरह इस्तेमाल करके सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया और साहित्य को जनमानस से जोड़कर अपने जनसरोकारों के प्रति जवाबदेही के पक्ष में मतदान किया।

साहिर के गीत आज भी हम सबको सोचने, प्रश्न करने और समाज को समझने को प्रेरित करते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. जाफरी अली सरदार 1998 – प्रगतिशील आंदोलन और साहित्य, वाणी प्रकाशन।
2. नारंग गोपीचन्द – उर्दू साहित्य का इतिहास।
3. सिंह नामवर – कविता के नए प्रतिमान।
4. नारंग गोपीचन्द – उर्दू साहित्य का इतिहास।
5. गुप्त मैथिलीशरण – भारत–भारती।

6. सिंह नामवर – कविता के नए प्रतिमान।
7. नारंग गोपीचन्द – उर्दू साहित्य का इतिहास।
8. Ranade Ashok Da- – Hindi Film Song & Music Beyond Boundaries.
9. जाफरी अली सरदार – प्रगतिशील आंदोलन और साहित्य।

kaunsiddharthkumar@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 87–91
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Pragmatic Statesmanship in Indian Politics : An Analytical Study of the Pragmatic Approach of Atal Bihari Vajpayee

Lakhwinder Jeet Kaur
Associate Professor, Department of History,
Babbar Akali Memorial Khalsa College, Garhshankar.

Pragmatism in political leadership is often understood as the capacity to reconcile ideological commitments with practical realities, and in the Indian political tradition, few leaders embody this quality as profoundly as Atal Bihari Vajpayee. Emerging as a key figure in post-independence India, Vajpayee navigated the complexities of a rapidly changing political environment marked by globalization, coalition governance, and evolving security challenges. His leadership cannot be confined within the narrow boundaries of party ideology, despite his long association with the Bharatiya Janata Party. Instead, his political philosophy reflected a nuanced understanding of governance, where ideals were harmonized with ground realities. Vajpayee himself articulated this forward-looking vision when he remarked that history should guide but not constrain present action, emphasizing the importance of adaptability in governance. His tenure as Prime Minister, particularly between 1998 and 2004, represents a critical phase in Indian politics where pragmatic decision-making was essential for maintaining stability and progress. This paper explores how Vajpayee's pragmatic approach shaped his policies and leadership style, making him one of the most respected statesmen in Indian history.

Ideology and Pragmatism : A Delicate Balance :

One of the most defining features of Vajpayee's leadership was his ability to maintain a delicate balance between ideological commitment and practical governance. As a senior leader of the Bharatiya Janata Party, he was deeply rooted in the party's ideological framework, which emphasized cultural nationalism and civilizational identity. However, unlike many of his

contemporaries, Vajpayee did not allow ideological rigidity to dictate policy decisions. Instead, he adopted a moderate stance that prioritized national unity and political stability over doctrinal purity. This was particularly evident in his leadership of the National Democratic Alliance, a coalition of diverse political parties with varying ideological orientations. In order to maintain the coalition, Vajpayee consciously set aside contentious issues such as the Ram Temple movement and the Uniform Civil Code, demonstrating his willingness to compromise for the greater good of governance. His approach reflects a broader understanding of democracy as a system that requires negotiation, consensus, and mutual respect among competing interests. For instance , his emphasis on unity is reflected in :

" Our aim may be as high as the endless sky … we should walk ahead hand-in-hand"

Such statements demonstrate how he used language to build consensus and inspire collective action.

Foreign policy and strategic pragmatism :

Vajpayee's pragmatic approach was most prominently visible in his foreign policy, where he successfully balanced assertiveness with diplomacy. The decision to undertake the Pokhran-II nuclear tests constituted a definitive assertion of India's strategic autonomy within the international security framework.While the tests invited international criticism and sanctions, Vajpayee justified them as essential for national security in a volatile geopolitical environment. However, his pragmatism was evident in the restraint he exercised after the tests, as he emphasized a policy of minimum credible deterrence and a commitment to no-first-use. In his parliamentary statements, he clarified that the tests were not conducted for self-glorification but for ensuring national defence, thereby projecting India as a responsible nuclear power.

Equally significant was his approach towards Pakistan, which reflected a deep commitment to peace despite persistent conflicts. His initiative of the Lahore Bus Diplomacy symbolized his belief in dialogue and reconciliation. Even after the outbreak of the Kargil War, Vajpayee did not abandon the path of diplomacy. His famous statement " *You can change your friends , but you cannot change your neighbours* " encapsulates his pragmatic understanding of regional geopolitics. Rather than succumbing to populist pressures for aggressive retaliation, he chose a balanced approach that combined military firmness with diplomatic engagement, thereby enhancing India's credibility on the global stage. After the Kargil War , Vajpayee reiterated :

" We extend the hand of friendship, but we will not compromise on our national interests ."

Economic Reforms and Developmental Pragmatism :

In the realm of economic policy, Vajpayee demonstrated a forward-thinking pragmatism that transcended ideological boundaries. Recognizing the need for economic modernization, he embraced liberalization and market-oriented reforms while ensuring that the benefits of growth were widely distributed. His government pursued policies of privatization and disinvestment to improve efficiency and reduce the burden on the public sector. At the same time, he remained committed to social welfare and inclusive development, reflecting a balanced approach to economic governance. His pragmatic economic vision is evident in his statement :

"Empowering the individual means empowering the nation ."

One of the most notable achievements of his tenure was the launch of the Golden Quadrilateral Project, which revolutionized India's infrastructure and connectivity. By linking major cities through a network of highways, the project facilitated economic integration and regional development. Vajpayee's emphasis on infrastructure was complemented by reforms in the telecommunications sector, which played a crucial role in India's digital transformation. His vision of development was not limited to economic growth but extended to technological advancement and human empowerment, as reflected in his addition of "Jai Vigyan" to the national slogan. This holistic approach underscores his pragmatic understanding of development as a multidimensional process.

Coalition Politics and Democratic Pragmatism :

The era of coalition politics in India posed significant challenges for governance, requiring leaders to navigate complex political dynamics. Vajpayee's leadership of the National Democratic Alliance stands as a testament to his exceptional skills in consensus-building and conflict resolution. Unlike leaders who rely on coercion or centralization, Vajpayee adopted a participatory approach that emphasized dialogue and mutual respect. His ability to accommodate diverse viewpoints while maintaining policy coherence was instrumental in ensuring the stability of his government. His famous parliamentary statement reflects democratic pragmatism :

" Governments will come and go… but this nation should stand tall ."

His resignation speech in 1996 remains a powerful example of his commitment to democratic principles, where he gracefully accepted the verdict of the majority and stepped down from power. This act of political humility reinforced the legitimacy of democratic institutions and set a high standard for ethical leadership. Vajpayee's approach to coalition politics reflects a broader philosophy that values inclusivity and cooperation over confrontation, making him a model for democratic governance in a pluralistic society.

Ethics, Governance, and Humanism :

At the core of Vajpayee's pragmatism was a deep commitment to ethical governance and humanistic values. He believed that political power should be exercised with responsibility and integrity, and this belief was reflected in his respect for democratic institutions and civil liberties. His governance philosophy emphasized transparency, accountability, and the rule of law, which contributed to strengthening India's democratic framework. He articulated a governance philosophy centered on public welfare stating :

"The happiness and welfare of the people should be the supreme law ."

Vajpayee's humanistic approach was particularly evident in his policies towards conflict resolution and social harmony. His emphasis on "Insaaniyat, Jamhooriyat, and Kashmiriyat" in addressing the Kashmir issue highlights his commitment to a humane and inclusive approach. He consistently advocated dialogue and reconciliation, rejecting violence as a means of resolving conflicts. His statement that guns cannot solve problems, but brotherhood can reflects a profound understanding of the human dimension of politics. This ethical foundation distinguishes his pragmatism from mere political opportunism, elevating it to a principled approach to governance.

Communication and Leadership Style :

An essential aspect of Vajpayee's pragmatic leadership was his exceptional communication skills. Known for his eloquence and poetic expression, he used language as a powerful tool to connect with the public and articulate his vision. His speeches combined clarity, emotional resonance, and intellectual strength, which enhanced their impact in influencing public opinion and fostering consensus.

Whether addressing the nation on Independence Day or speaking in Parliament, Vajpayee demonstrated an ability to communicate complex ideas in a relatable manner. His speeches often reflected a blend of optimism and realism, inspiring confidence while acknowledging challenges. This ability to engage with diverse audiences enhanced his effectiveness as a leader and reinforced his pragmatic approach to governance.

Critical Evaluation and Contemporary Relevance :

While Vajpayee's pragmatic approach has been widely praised, it is important to critically evaluate its limitations. The constraints of coalition politics sometimes restricted the scope of reforms, and certain policies faced implementation challenges. Additionally, his moderate stance occasionally attracted criticism from both ideological hardliners and political opponents. However, these limitations do not diminish the overall effectiveness of his leadership, which successfully navigated a complex political environment.

In the contemporary context, marked by increasing polarization and ideological rigidity, Vajpayee's pragmatism offers valuable lessons for political leaders. His emphasis on dialogue, inclusivity, and adaptability remains highly relevant in addressing the challenges of modern governance. By prioritizing national interest over partisan considerations, he demonstrated that pragmatism could coexist with principled leadership.

Conclusion :

The pragmatic approach of Atal Bihari Vajpayee represents a distinctive model of political leadership that combines realism, ethics, and vision. His ability to balance ideological commitments with practical considerations enabled him to address complex challenges effectively while maintaining the integrity of democratic institutions. Through his policies and speeches, Vajpayee demonstrated that pragmatism is not a compromise of principles but a sophisticated application of them in the service of national interest. His legacy continues to inspire scholars and policymakers, offering a blueprint for governance in diverse and dynamic societies. As India and the world grapple with new political and economic challenges, the relevance of Vajpayee's pragmatic approach remains as significant as ever, reaffirming his place as one of the most influential statesmen of modern India.

References :

- Vajpayee, A. B. (1998–2004). Selected Speeches and Parliamentary Debates. Government of India Archives.
- NDTV. (2018). Memorable speeches of Vajpayee. (https://www.ndtv.com/india-news/atal-bihari-vajpayee-five-memorable-speeches-1901589)
- Jagran Josh. (2023). Vajpayee quotes and ideology. (https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/atal-bihari-vajpayee-quotes-1692190131-1)
- Times of India. (2018). Inspirational quotes and policies.
- Bajpai , K. (2014) . India's Grand Strategy.Routledge India.
- Mohan , C.R. (2003). Crossing the Rubicon : The Shaping of India's New Foreign Policy . Penguin India
- Guha , R. (2007) . India After Gandhi. Harper Collins India.
- Raghavan, S. (2010) . War and Peace in Modern India .Permanent Black.
- Ahluwalia , M.S. (2006). Back in the Saddle : India 's Economic Reform . Penguin India
- Indian Council of World Affairs Publications. (https://www.icwa.in/show_content.php?lang=1&level=1&ls_id=1225&lid=49)
- Economic and Political Weekly. (https://www.epw.in/tags/atal-bihari-vajpayee)

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 92-99
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

औपनिवेशिक भारत में ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति : सांप्रदायिक राजनीति, जातीय विभाजन और भारत–विभाजन का ऐतिहासिक–राजनीतिक विश्लेषण

डॉ. प्रशांत कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, तिलकधारी पी. जी. कॉलेज, जौनपुर।

सार (Abstract)

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने भारत में अपनी सत्ता को सुदृढ़ करने हेतु 'बाँटो और राज करो' (Divide et Impera) की नीति को एक सुनियोजित रणनीति के रूप में अपनाया। प्रारम्भ में अंग्रेज मुस्लिम शासकों एवं नेताओं को अपना प्रमुख शत्रु मानते थे, किन्तु 1870 के दशक के पश्चात् उनकी नीति में आमूल परिवर्तन हुआ। डब्लू.डब्लू. हंटर की पुस्तक 'इंडियन मुसलमान' (1871) ने इस नीति–परिवर्तन को वैचारिक आधार प्रदान किया। तत्पश्चात् अंग्रेजों ने सर सैयद अहमद खान को माध्यम बनाकर हिंदू–मुस्लिम के बीच अविश्वास की खाई खोदी, मुस्लिम लीग का गठन करवाया, 1909 के मॉर्ले–मिंटो सुधारों में पृथक् निर्वाचन मंडल की व्यवस्था की तथा जिन्ना को एक राजनीतिक शस्त्र के रूप में उपयोग किया। 1930 के बाद जाति–आधारित विभाजन की नीति भी अपनाई गई, जिसके अंतर्गत डॉ. भीमराव आम्बेडकर के नेतृत्व में अनुसूचित जातियों को स्वतंत्रता आंदोलन की मुख्यधारा से पृथक् करने का प्रयास किया गया। यह शोध–पत्र इन सभी चरणों का विश्लेषण करते हुए यह स्थापित करता है कि ब्रिटिश विभाजन–नीति के दीर्घकालिक परिणाम केवल 1947 के विभाजन तक सीमित नहीं रहे, अपितु उनकी छाया स्वतंत्र भारत के सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य पर आज भी दृष्टिगोचर होती है।

मुख्य शब्द : बाँटो और राज करो, सांप्रदायिक राजनीति, मुस्लिम लीग, पृथक् निर्वाचन मंडल, सर सैयद अहमद खान, मोहम्मद अली जिन्ना, पूना पैक्ट, भारत–विभाजन, औपनिवेशिक शासन।

Keywords : Divide and Rule, Communal Politics, Muslim League, Separate Electorate, Sir Syed Ahmad Khan, M.A. Jinnah, Poona Pact, Partition of India, Colonial Governance.

प्रस्तावना :–

'बाँटो और राज करो' – यह तीन शब्द केवल एक नीति का नाम नहीं हैं, यह एक ऐसी विचार–प्रणाली है जिसने भारतीय उपमहाद्वीप की भू–राजनीति, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पहचान को स्थायी रूप से बदल दिया। ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन ने जब यह अनुभव किया कि भारत की विविधता 'धार्मिक, सामाजिक,

जातीय और भाषाई' इस विशाल देश पर शासन की सबसे बड़ी चुनौती है, तब उन्होंने इसी विविधता को अपने शासन का सबसे प्रबल अस्त्र बना लिया। इस नीति का लक्ष्य सरल था : भारतीय समाज में आपसी वैमनस्य के बीज बोना ताकि राष्ट्रीय एकता की फसल कभी न उग सके।

यह शोध–पत्र इस नीति के ऐतिहासिक क्रम–विकास, उसके विभिन्न चरणों, प्रमुख उपकरणों और दीर्घकालिक परिणामों का गहन राजनीतिक–ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध का केन्द्रीय प्रश्न यह है : क्या ब्रिटिश विभाजन–नीति एक सुनियोजित एवं चेतन रणनीति थी, या परिस्थितियों की देन? और यदि सुनियोजित थी, तो उसके किन–किन स्तरों पर क्रियान्वयन किया गया?

2. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

ब्रिटिश विभाजन–नीति पर विद्वानों ने अनेक दृष्टिकोणों से विचार किया है। इस विषय पर उपलब्ध प्रमुख साहित्य का संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है :

विद्वान / रचना	दृष्टिकोण एवं योगदान
W.W. Hunter, 'Indian Musalmans' (1871)	मुस्लिम असंतोष का प्रथम ब्रिटिश आधिकारिक विश्लेषण, नीति–परिवर्तन का आधार बना
Bipan Chandra, 'Communalism in Modern India'	साम्प्रदायिकता को ब्रिटिश कृत्रिम निर्माण के रूप में परिभाषित करते हैं।
Anil Seal, 'The Emergence of Indian Nationalism'	राष्ट्रवाद के उदय में उभरते मध्यवर्ग की भूमिका का विश्लेषण
Francis Robinson, 'Separatism among Indian Muslims'	मुस्लिम पृथकतावाद में सांस्कृतिक–धार्मिक कारकों पर बल, ब्रिटिश भूमिका को सीमित मानते हैं।
Sumit Sarkar, 'Modern India 1885–1947'	राष्ट्रीय आंदोलन को वर्ग–संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में रखकर ब्रिटिश नीति की आलोचना।
Mushirul Hasan, 'India's Partition'	विभाजन को एकल कारण नहीं बल्कि बहु–कारणीय प्रक्रिया मानते हैं।
Rajmohan Gandhi, 'Understanding the Muslim Mind'	जिन्ना के राजनीतिक रूपान्तरण का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण।

उक्त समीक्षा से स्पष्ट है कि अधिकांश भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासकार 'बाँटो और राज करो' को सुनियोजित ब्रिटिश कूटनीति मानते हैं, जबकि कुछ पाश्चात्य विद्वान इसमें आंतरिक सामाजिक कारकों को भी उतनी ही महत्त्व देते हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र भारतीय राष्ट्रवादी इतिहास–लेखन की परंपरा से प्रेरणा लेते हुए तथ्यात्मक साक्ष्यों के आधार पर विश्लेषण करता है।

3. शोध-प्रविधि (Research Methodology)

प्रस्तुत शोध–पत्र ऐतिहासिक–विश्लेषणात्मक (Historical-Analytical) एवं वर्णनात्मक (Descriptive) शोध–प्रविधि पर आधारित है।

शोध की प्रविधि एवं स्रोत :

- **प्राथमिक स्रोत :** ब्रिटिश संसदीय बहसें, भारत सरकार अधिनियमों के मूल पाठ, सर सैयद अहमद खान के भाषण, गाँधी–आम्बेडकर पत्राचार, माउंटबेटन दस्तावेज।
- **द्वितीयक स्रोत :** भारतीय एवं ब्रिटिश इतिहासकारों के ग्रन्थ, विश्वविद्यालयीय शोध–पत्र, अकादमिक पत्रिकाएँ।
- **विश्लेषण-पद्धति :** कालक्रमिक (Chronological) एवं तुलनात्मक (Comparative) विश्लेषण।
- **उपागम :** औपनिवेशिक सत्ता–संरचना विश्लेषण, एंटोनियो ग्राम्शी का 'हेजेमनी' सिद्धान्त एवं पोस्ट–कोलोनियल आलोचना।
- **सीमाएँ :** कुछ ब्रिटिश आंतरिक दस्तावेज अभी भी गोपनीय श्रेणी में हैं।

केन्द्रीय परिकल्पना (Hypothesis) : ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति कोई अकस्मात् प्रतिक्रिया नहीं, अपितु एक सुचिंतित, बहु–चरणीय और निरंतर विकसित होने वाली साम्राज्यवादी रणनीति थी, जिसने धर्म, जाति और क्षेत्र के आधार पर भारतीय समाज को विखंडित किया और अंततः 1947 के रक्तपात में परिणत हुई।

4. प्रारंभिक चरण : मुस्लिम विरोध और नीति-परिवर्तन (1757-1870)

4.1 प्रारम्भिक ब्रिटिश संघर्ष एवं मुस्लिम प्रतिरोध :

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी ने जब भारत में राजनीतिक विस्तार प्रारम्भ किया तब जिन राज्यों से उनका प्रमुख संघर्ष हुआ, उनके शासक अधिकांशतः मुस्लिम थे। बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला (1757), मैसूर के हैदर अली एवं टीपू सुल्तान (1767–1799), कर्नाटक के नवाब, अवध के वाजिद अली शाह और दिल्ली के मुगल सम्राट – ये सभी ब्रिटिश सत्ता–विस्तार के मार्ग में बाधक थे। अतः आरम्भिक काल में अंग्रेज मुस्लिमों को ही अपना स्वाभाविक शत्रु मानते रहे।

इसी मनोविज्ञान के चलते 1857 के महाविद्रोह के बाद अंग्रेजों का मुस्लिम–विरोधी रुख और अधिक तीव्र हो गया। लखनऊ में बेगम हजरत महल, फैजाबाद में मौलवी अहमदुल्लाह शाह, दिल्ली में बहादुरशाह जफर और प्रयागराज में मौलवी लियाकत अली कृ इन मुस्लिम नेताओं ने विद्रोह का नेतृत्व किया। इसके अतिरिक्त 1830 के बाद बहावी आंदोलन (Wahhabi Movement) ने ब्रिटिश–विरोधी जिहाद का स्वर मुखरित किया। यही कारण था कि 1857 के पश्चात् ब्रिटिश सत्ता ने मुगल साम्राज्य को समाप्त कर अधिकांश दण्ड मुस्लिमों को दिया।

4.2 हिंदू मध्यवर्ग का उदय और रणनीति-परिवर्तन :

1870 के दशक तक एक नई चुनौती उभरने लगी। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से बंगाल, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में एक शिक्षित हिंदू मध्यवर्ग तेजी से उभर रहा था। राजा राम मोहन राय, बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले जैसे नेता राष्ट्रीय जागृति का संचार कर रहे थे। 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ एक संगठित राजनीतिक मंच तैयार हो गया।

1871 में W.W. हंटर की पुस्तक 'इंडियन मुसलमान' ने ब्रिटिश नीति–निर्माताओं को एक नई दृष्टि दी। हंटर ने तर्क दिया कि संख्या में विपुल और अंग्रेजी शिक्षा में तेजी से आगे बढ़ रहा हिंदू समाज दीर्घकालिक दृष्टि से ब्रिटिश सत्ता के लिए अधिक बड़ा खघ्तरा है। इस पुस्तक ने नीति–परिवर्तन का वैचारिक आधार प्रस्तुत किया और 1870 के पश्चात् ब्रिटिश रणनीति ने एक नाटकीय मोड़ लिया।

5. सर सैयद अहमद खान : उदारवादी से सांप्रदायिक राजनेता (1870–1906)

सर सैयद अहमद खान (1817–1898) प्रारम्भ में एक उदारवादी मुस्लिम सुधारक थे जो हिंदू–मुस्लिम एकता के पक्षधर थे और उन्होंने 1857 के विद्रोह में अनेक अंग्रेजों की जान बचाई थी। किन्तु 1870 के पश्चात् ब्रिटिश प्रोत्साहन से उनके राजनीतिक विचारों में क्रमिक परिवर्तन हुआ। यह परिवर्तन दो दिशाओं में हुआ :

सर सैयद अहमद खान की दोहरी भूमिका :

- **प्रथम कार्य – मुस्लिमों को अंग्रेजों का मित्र बनाना :** अंग्रेजों को मुस्लिमों का शत्रु नहीं, संरक्षक सिद्ध किया, मुस्लिमों को ब्रिटिश प्रशासन में भागीदारी के लिए प्रोत्साहित किया।
- **द्वितीय कार्य – हिंदुओं और कांग्रेस को मुस्लिमों का विरोधी बताना :** 1887 में कांग्रेस की कटु आलोचना, मुस्लिमों को कांग्रेस में शामिल न होने का आह्वान।
- **1886 में अलीगढ़ में 'मोहम्मडन एंग्लो–ओरिएंटल कॉलेज' की स्थापना :** पाश्चात्य एवं इस्लामी शिक्षा के समन्वय के नाम पर ब्रिटिश–समर्थक मुस्लिम अभिजात वर्ग का निर्माण।
- **1886 में 'ऑल इंडिया मोहम्मडन एजुकेशनल कॉन्फ्रेंस' की स्थापना :** प्रारम्भ में शैक्षिक, बाद में राजनीतिक संगठन बना। यही मुस्लिम लीग का पूर्वज था।
- **1887 में प्रसिद्ध वाक्य :** 'भारत की दो आँखें हैं – हिंदू और मुस्लिम। इसमें दूसरी आँख अंग्रेजों को ज्यादा प्रिय है'।

इस प्रकार सर सैयद ने एक ऐसे राजनीतिक मनोविज्ञान का निर्माण किया जिसमें हिंदू बहुसंख्यक लोकतंत्र मुस्लिम हित के लिए खघ्तरा बन गया और अंग्रेज संरक्षक। यह वह वैचारिक बीज था जो आगे चलकर द्वि–राष्ट्र सिद्धान्त का वटवृक्ष बना।

6. मुस्लिम लीग से पृथक् निर्वाचन मंडल तक (1905–1919)

6.1 स्वदेशी आंदोलन और ब्रिटिश घबराहट :

1905 में लॉर्ड कर्जन द्वारा बंगाल विभाजन के विरोध में उठा स्वदेशी आंदोलन ब्रिटिश साम्राज्यवाद को एक शक्तिशाली चुनौती था। बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय और बिपिन चंद्र पाल के नेतृत्व में कांग्रेस का उग्रवादी गुट जनाधार प्राप्त कर रहा था। अब 'पर्दे के पीछे से' हिंदू–मुस्लिम विद्वेष फैलाना पर्याप्त नहीं था, आवश्यकता थी एक स्थायी सांस्कृतिक–राजनीतिक दीवार खड़ी करने की।

6.2 मुस्लिम लीग की स्थापना (1906) :

ढाका में आगा खाँ के नेतृत्व में मुस्लिम प्रतिनिधिमंडल ने वायसराय लॉर्ड मिंटो से मिलकर मुस्लिमों के लिए पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग की। इसी वर्ष 'ऑल इंडिया मोहम्मडन एजुकेशनल कॉन्फ्रेंस' की ढाका बैठक में अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। यह संयोग नहीं, सुनियोजित व्यवस्था थी। ब्रिटिश अधिकारियों ने न केवल इस संगठन को प्रोत्साहित किया, अपितु इसके एजेंडे को भी प्रभावित किया।

6.3 पृथक् निर्वाचन मंडल : 1909 एवं 1919 :

1909 के मॉर्ले–मिंटो सुधारों में मुस्लिमों को पृथक् निर्वाचन मंडल (Separate Electorate) प्रदान किया गया। इसका अर्थ था कि मुस्लिम मतदाता केवल मुस्लिम उम्मीदवारों को ही वोट देंगे। यह व्यवस्था एक ऐसी दीवार थी जो संवैधानिक–कानूनी ढाँचे में हिंदू–मुस्लिम एकता को असंभव बना देती थी। 1919 के भारत सरकार

अधिनियम में इस व्यवस्था का और विस्तार हुआ – सिखों, आंग्ल–भारतीयों, भारतीय ईसाइयों और यूरोपीयों को भी अलग निर्वाचन मंडल दिए गए।

7. राष्ट्रीय प्रतिरोध और विभाजन-नीति की चुनौती (1916–1929)

7.1 लखनऊ समझौता (1916) : एकता की कोशिश :

1916 में लखनऊ में नरम दल और गरम दल का पुनर्मिलन हुआ और कांग्रेस–मुस्लिम लीग के बीच 'लखनऊ समझौता' सम्पन्न हुआ। इस समझौते में मुस्लिम लीग ने स्वशासन की माँग को स्वीकार किया और बदले में कांग्रेस ने पृथक् निर्वाचन मंडल को सशर्त स्वीकृति दी। यह ब्रिटिश नीति की पहली बड़ी विफलता थी।

7.2 गाँधी की रणनीति और खिलाफत आंदोलन :

महात्मा गाँधी ने 1919–1920 में खिलाफत आंदोलन (तुर्की के खलीफा की पुर्नस्थापना के लिए भारतीय मुस्लिमों का आंदोलन) को असहयोग आंदोलन से जोड़कर 'बाँटो और राज करो' की नीति को सीधी चुनौती दी। इस अभूतपूर्व हिंदू–मुस्लिम एकता ने ब्रिटिश सत्ता को हिला दिया। किन्तु 1922 में चौरी–चौरा हिंसा के बाद असहयोग आंदोलन वापस हो गया और खिलाफत आंदोलन भी समाप्त हो गया। ब्रिटिश नीति को पुनः पनपने का अवसर मिल गया।

8. जिन्ना का 'निर्माण' और विभाजन की ओर यात्रा (1920–1947) :

मोहम्मद अली जिन्ना (1876–1948) प्रारम्भ में एक कट्टर राष्ट्रवादी थे। वे 'हिंदू–मुस्लिम एकता के राजदूत' कहलाते थे। किन्तु 1920 में वे गाँधी के असहयोग आंदोलन और खिलाफत आंदोलन का विरोध करते हुए कांग्रेस से अलग हो गए। यहीं से उनके 'पुनर्निर्माण' की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई :–

वर्ष	घटना	ब्रिटिश भूमिका
1920	कांग्रेस से पृथक्करण	गाँधी–विरोधी तत्त्वों को प्रोत्साहन
1923	बम्बई से केंद्रीय विधानमंडल के लिए निर्वाचन	ब्रिटिश समर्थन एवं संरक्षण
1925	नाइटहुड उपाधि प्रदान	ब्रिटिश कृपा का स्पष्ट संकेत
1927	यूरोप यात्रा	वैचारिक कट्टरीकरण की प्रक्रिया
1934	भारत वापसी – लीग अध्यक्ष बने	पूर्ण प्रशिक्षण के बाद नेतृत्व सौंपना
1940	'लाहौर प्रस्ताव' – पाकिस्तान की माँग	ब्रिटिश निष्क्रियता – जानबूझकर
1947	भारत–विभाजन	माउंटबेटन योजना का क्रियान्वयन

ब्रिटिश इतिहासकार लैरी कॉलिन्स और डॉमिनिक लैपियर की पुस्तक 'फ्रीडम एट मिडनाइट' सहित अनेक स्रोत यह संकेत देते हैं कि माउंटबेटन ने विभाजन की प्रक्रिया को इस प्रकार संचालित किया जिससे दोनों पक्षों के बीच अविश्वास बना रहे। बाँटो और राज करो की नीति अपने चरम पर थी।

9. जाति-आधारित विभाजन की नीति : डॉ. आम्बेडकर और दलित प्रश्न :

1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन ने ब्रिटिश नीति–निर्माताओं को एक नयी चिंता में डाल दिया। इस आंदोलन में मुसलमानों की भागीदारी अत्यल्प थी, फिर भी यह आंदोलन अत्यंत प्रभावशाली रहा। इसका अर्थ था कि केवल धर्म–आधारित विभाजन से स्वतंत्रता आंदोलन को स्थायी रूप से कमजोर नहीं किया जा सकता।

अतः अब जाति–आधारित विभाजन की रणनीति अपनाई गई।

9.1 डॉ. भीमराव आम्बेडकर : ब्रिटिश रणनीति का एक आयाम :

डॉ. भीमराव आम्बेडकर (1891–1956) एक असाधारण विद्वान, वकील और समाज–सुधारक थे। वे अस्पृश्यता और जाति–उत्पीड़न के विरुद्ध अथक संघर्ष कर रहे थे। उनकी सामाजिक न्याय की माँगें वैधानिक थीं, किन्तु ब्रिटिश सत्ता ने उनकी कांग्रेस–विरोधी स्थिति का राजनीतिक उपयोग किया :

- **आम्बेडकर का स्पष्ट मत था :** 'सामाजिक आजादी पहले, राजनीतिक आजादी बाद में' – यह कांग्रेस के राष्ट्रीय आंदोलन के लिए उपयोगी विरोधाभास था।
- उन्हें 1930, 1931 और 1932 के तीनों गोलमेज सम्मेलनों में आमंत्रित किया गया – एक ऐसे मंच पर जिसका उद्देश्य ही राष्ट्रीय एकता को खंडित करना था।
- 1932 में 'कम्युनल अवॉर्ड' के अंतर्गत अनुसूचित जातियों को पृथक् निर्वाचन मंडल देने की घोषणा की गई।
- गाँधी जी ने इसके विरोध में 'आमरण अनशन' किया। परिणामस्वरूप 'पूना पैक्ट' (24 सितम्बर 1932) हुआ जिसमें पृथक् निर्वाचन मंडल के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन में आरक्षित सीटों की व्यवस्था हुई।

पूना पैक्ट ने पृथक् निर्वाचन मंडल को रोका, किन्तु ब्रिटिश नीति ने एक गहरी दरार अवश्य डाल दी। डॉ. आम्बेडकर जैसे महान नेता को 'जो भारतीय इतिहास के सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्तियों में थे' स्वतंत्रता संग्राम की मुख्यधारा से दूर रखने में ब्रिटिश नीति आंशिक रूप से सफल रही। यह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की एक महँगी क्षति थी।

9.2 1935 का भारत सरकार अधिनियम : विभाजन का संस्थागतकरण :

1935 के भारत सरकार अधिनियम ने प्रांतीय स्वायत्तता के नाम पर सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व को संस्थागत रूप दे दिया। इसमें मुस्लिमों, सिखों, ईसाइयों, आंग्ल–भारतीयों, यूरोपीयों और अनुसूचित जातियों के लिए पृथक् सीटों की व्यवस्था की गई। इस प्रकार भारतीय संविधान से पहले ही एक 'विभाजित संविधान' लागू हो गया।

10. दीर्घकालिक प्रभाव और परिणाम

क्षेत्र	तात्कालिक परिणाम (1947)	दीर्घकालिक प्रभाव (स्वतंत्र भारत में)
धार्मिक	भारत–पाकिस्तान विभाजन, 20 लाख़ मृत	सांप्रदायिक दंगे, अल्पसंख्यक–बहुसंख्यक तनाव
सामाजिक	पश्चिमी पंजाब, सिंध, पूर्वी बंगाल में हिंदू उत्पीड़न	शरणार्थी समस्या, सांस्कृतिक विस्थापन
राजनीतिक	कश्मीर विवाद, पाकिस्तान से शत्रुता	भारत–पाक युद्ध (1947, 1965, 1971, 1999)
जातीय	दलित–सवर्ण की दरार गहरी	आरक्षण–विरोधी संघर्ष, जातीय हिंसा
राष्ट्रीय	अखंड भारत का स्वप्न टूटा	क्षेत्रवाद, भाषावाद, पहचान–राजनीति

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने लिखा था : 'विभाजन केवल भूमि का नहीं था, यह आत्मा का विभाजन था।' गाँधी जी ने तो विभाजित भारत की स्वतंत्रता के उत्सव में भाग लेने से इनकार कर दिया था। वे नोआखली में साम्प्रदायिक हिंसा रोकने में लगे थे यही था ब्रिटिश नीति का वास्तविक उत्तराधिकार।

11. आलोचनात्मक विश्लेषण :

11.1 क्या यह पूरी तरह ब्रिटिश षड्यंत्र था?

यद्यपि ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति का दस्तावेजी साक्ष्य मौजूद है, किन्तु इसे पूर्ण रूप से एकमात्र कारण मानना अतिसरलीकरण होगा। विद्वानों ने कुछ आंतरिक कारकों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया है :

- मुस्लिम अभिजात वर्ग की अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ – हिंदू बहुसंख्यक लोकतंत्र में अपने हितों की रक्षा की चिंता।
- कांग्रेस की नीतियों में कभी–कभी दिखा 'हिंदू बहुमतवाद' का स्वर।
- भारतीय समाज में पूर्व–औपनिवेशिक काल से मौजूद धार्मिक तनाव।

किन्तु यह स्मरणीय है कि ये आंतरिक कारक थे, जबकि ब्रिटिश नीति ने इन्हें सुनियोजित ढंग से भड़काया, संस्थागत रूप दिया और उन्हें राजनीतिक अस्त्र बनाया। कारण–कार्य–संबंध में ब्रिटिश भूमिका प्राथमिक थी।

11.2 प्रतिरोध की गाथा :

यह भी महत्त्वपूर्ण है कि ब्रिटिश नीति सदैव सफल नहीं रही। 1916 का लखनऊ समझौता, 1919–1922 का खिलाफत–असहयोग आंदोलन, 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन – इन सबमें हिंदू–मुस्लिम एकता दिखी। अनेक मुस्लिम नेता 'मौलाना आजाद, खान अब्दुल गफ्फार खान, असफ अली' अंत तक राष्ट्रवादी रहे। इससे सिद्ध होता है कि विभाजन अनिवार्य नहीं था – यह ब्रिटिश नीति की सफलता का परिणाम था, भारतीय सभ्यता का स्वाभाविक तर्क नहीं।

12. निष्कर्ष :

ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति एक सुचिंतित, बहु–आयामी और निरंतर विकसित होती रही साम्राज्यवादी रणनीति थी। 1870 में प्रारम्भ होकर 1947 तक यह नीति तीन प्रमुख चरणों में क्रियान्वित हुई : प्रथम, धर्म–आधारित विभाजन (मुस्लिम लीग का निर्माण, पृथक् निर्वाचन मंडल), द्वितीय, नेतृत्व का 'कट्टरीकरण' (जिन्ना का रूपान्तरण), तृतीय, जाति–आधारित विभाजन (दलित राजनीति का उपकरणीकरण)।

1947 का भारत–विभाजन इस नीति का सर्वाधिक दुखद परिणाम था। किन्तु उतना ही महत्त्वपूर्ण यह भी है कि इस नीति के बीज स्वतंत्र भारत की मिट्टी में भी दफन रह गए – सांप्रदायिकता, जातिवाद, क्षेत्रवाद और पहचान–राजनीति के रूप में। भारत का स्वतंत्रता संग्राम जितना अंग्रेजों को भारत से भगाने का संघर्ष था, उतना ही इस विभाजन–नीति के विरुद्ध एकता की साधना भी था।

अंत में, इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी समाज की विविधता उसकी सबसे बड़ी शक्ति है – बशर्ते उसे राजनीतिक स्वार्थ के लिए न तोड़ा जाए। आज भी जब भी विविधता को विभाजन में बदलने का प्रयास होता है, हमें ब्रिटिश नीति का वह स्याह अध्याय याद करना चाहिए जो एक सभ्यता को दो टुकड़ों में काट गया।

पादटिप्पणियाँ (Footnotes)

1. W.W. Hunter, 'Indian Musalmans', 1871 — यह पुस्तक ब्रिटिश भारत सरकार के आयोग की माँग पर

लिखी गई थी।

2. सर सैयद का 1887 का लखनऊ भाषण : 'Is it possible that under these circumstances two nations — the Mohammedans and the Hindus — could sit on the same throne and remain equal in power\'
3. Bipan Chandra, 'Communalism in Modern India', 1984, Vikas Publishing, P. 162A
4. पूना पैक्ट, 24 सितम्बर 1932 – गाँधी जी और डॉ. आम्बेडकर के बीच ऐतिहासिक समझौता।
5. माउंटबेटन के निजी पत्रों में विभाजन की जल्दबाजी पर प्रश्न उठाए गए हैं – देखें : Larry Collins - Dominique Lapierre, 'Freedom at Midnight', 1975.

संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Hunter, W.W. (1871). The Indian Musalmans. London : Trübner & Co.
2. Chandra, Bipan (1984). Communalism in Modern India. New Delhi: Vikas Publishing House.
3. Chandra, Bipan, Mukherjee, Mridula & Mukherjee, Aditya (2000). India's Struggle for Independence. New Delhi : Penguin Books.
4. Sarkar, Sumit (1983). Modern India 1885–1947. New Delhi: Macmillan.
5. Robinson, Francis (1974). Separatism among Indian Muslims. London : Cambridge University Press.
6. Hasan, Mushirul (1993). India's Partition: Process, Strategy and Mobilization. New Delhi: Oxford University Press.
7. Gandhi, Rajmohan (1986). Understanding the Muslim Mind. New Delhi: Penguin Books.
8. Collins, Larry & Lapierre, Dominique (1975). Freedom at Midnight. New York: Simon & Schuster.
9. Seal, Anil (1968). The Emergence of Indian Nationalism. Cambridge: Cambridge University Press.
10. Ambedkar, B.R. (1945). Pakistan or the Partition of India. Bombay: Thacker and Co.
11. आजाद, मौलाना अबुल कलाम (1988). इंडिया विन्स फ्रीडम (हिंदी अनुवाद). नई दिल्ली : साहित्य अकादमी।
12. गुहा, रामचंद्र (2007). India after Gandhi. New Delhi: Macmillan.
13. Pandey, Gyanendra (1990). The Construction of Communalism in Colonial North India. New Delhi: Oxford University Press.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 100–103
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

श्रीरामचरितमानस में संस्कृति का धार्मिक चित्रण

पूनम, षोधार्थी,
प्रोफेसर संजीव कुमार (षोध निर्देषक), प्रोफेसर
हिंदी विभाग, बाबा मस्तनाथ विष्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।

शोध पत्र :

भारतीय सांस्कृतिकता की भूमिकाओं में हमारे वेदों, पुराणों तथा ग्रंथों का योगदान सर्वोपरि रहा है। गोस्वामी तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस भी एक ऐसा ही सांस्कृतिक ग्रंथ है। यह ग्रंथ संस्कृति के समस्त रूपों का चित्रण करता है। इसमें भक्ति, धर्म, कर्त्तव्यपरायणता, वचनबद्धता, स्नेह, आदर जैसे भावों का समावेष है। गोस्वामी जी ने इस ग्रंथ के माध्यम से श्रीराम जी की धार्मिकतापूर्ण एवं मौलिकतापूर्ण संस्कृति का वर्णन किया है, जो संपूर्ण समाज को यह संदेष देता है कि मानव जन को अपने व्यक्तित्व में आदर्ष, दया, प्रेम तथा समभावन, जैसे सांस्कृतिक मूल्यों को धारण करना चाहिए। हमारा धर्म ही हमें संस्कृति एवं धार्मिकता की पहचान करवाता है। धर्म ही धार्मिक गुणों का संचार करता है जिससे मानवता का गुण संस्कृति से परिचित हो सके। संस्कृति में धार्मिक भावना का अभाव संपूर्ण सांस्कृतिकता को नष्ट कर सकता है। साथ ही जन–मानस को पथभ्रष्ट भी कर सकता है। इस कारण धार्मिकता का होना हमारी संस्कृति के लिए सात्विकता का प्रतीक है। श्रीरामचरितमानस रूपी कथाएँ इसको मुख्य रूप से चित्रित करती है जिसको मानव जन ग्रहण करता है और सदाचार का मार्ग अपनाता है। आधुनिक मानव जन को श्रीराम के आदर्षों का पता चलता है कि वह कितने अच्छे पुत्र, भ्राता, पति एवं राजा थे। इनकी धार्मिक संस्कृति वर्तमान मानव के संपूर्ण जीवन को सात्विकता से परिपूर्ण कर देती है। मानव को सकारात्मक पथ प्राप्त होता है। इस प्रकार की सात्विकता सांस्कृतिक दिषा प्रदान करती है। हमारी संस्कृति प्राचीन समय से ही धर्म एवं भक्ति का अनुषरण करती रही है। जब भी मानव ने अपने धार्मिक एवं सांस्कृतिक गुणों का त्याग किया है, तभी श्रीरामचरितमानस की कथा एवं धार्मिक चित्रण ने संपूर्ण मानव जाति को सद्मार्गी बनाया है। गोस्वामी तुलसीदास ने अपने ग्रंथ श्रीरामचरितमानस में राम के गुणों का भव्य वर्णन किया है। गोस्वामी जी वर्णित करते है कि –

"बुध विश्राम सकल जन रंजनि।
रामकथा कलि कलुष बिभंजनि।।
रामकथा कलि पंनग भरनी।
पुनि बिबेक पावक कहुं अरनी।।[1]

अर्थात् रामकथा पण्डितों को विश्राम देने वाली, सब मनुष्यों को प्रसन्न करने वाली और कलियुग के पापों का नाष करने वाली है। रामकथा कलियुग रूपी सांप के लिए मोरनी है और विवेक रूपी अग्नि के प्रकट करने के लिए अरणि है, अर्थात इस कथा से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। यह ग्रंथ मात्र धर्म की कोई सामान्य पुस्तक नहीं है। यह तो संस्कृति एवं धार्मिक बिन्दुओं का संपूर्ण कथा सार है।

''राम कथा कलि कामद गाई।
सुजन संजीवनि, मूरि सुहाई।।
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि।
भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनी।।[2]

इसमें गोस्वामी जी कहते हैं कि रामकथा कलियुग में सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली कामधेनु गौ है और सज्जनों के लिए सुंदर संजीवनी जड़ी है। पृथ्वी पर यही अमृत नदी है, जन्म–मरण रूपी भय का नाष करने वाली और भ्रमरूपी मेंढ़कों को खाने के लिए सर्पिणी है।

गोस्वामी जी ने यह चित्रण किया है कि धार्मिक संस्कृति से विमुख मानव जन के लिए राम कथा वरदान है। इसको स्मरण करने के पष्चात मानव जन अपने धार्मिक मार्ग एवं सांस्कृतिकता को पूर्ण रूप से स्मरण कर लेता है। इस ग्रंथ के धार्मिक चित्रण एवं सांस्कृतिक रूप से संबंधित अनेको विचारकों ने अपने–अपने विचार प्रकट किये हैं।

डॉ. हरिष्चन्द्र वर्मा जी ने श्रीरामचरितमानस की पौराणिकता से संबंधित विचार प्रकट करते हुए वर्णित किया है कि ''पौराणिकता कभी भी वैज्ञानिक के रूप में नहीं हो सकता, पौराणिकता का दृष्टिकोण धार्मिक भावना एवं आस्था और विष्वास से संबंधित है। मानव जन ने अपने जीवन में अनेकों धर्मों तथा समुदायों को देखा है जिसके कारण मानव का मन विचलित होना स्वाभाविक है, परंतु तुलसी काव्य रचना की धार्मिकतापूर्ण कृति श्रीरामचरितमानस ने संपूर्ण संसार को, संस्कृति तथा धर्म के प्रति सात्विक भाव रखने वाला बना दिया।''[3]

इससे यह ज्ञात होता है कि तुलसी के युग में संपूर्ण धर्म एवं सगुण भक्ति, धार्मिकता के स्वरूप में पौराणिक परंपरा, सांस्कृतिक जागरण और हिन्दु धर्म के पुनरूत्थान की दिषा प्रयत्नषील थी। हमारी परंपरा में श्रीरामचरितमानस एक धरोहर के रूप पहचाना जाता है। इसमें सौंदर्य, धर्मनिष्ठता, कर्त्तव्यनिष्ठता जैसे मौलिक गुणों का सार है। जो इसको धार्मिक एवं संस्कृति का मुख्य स्त्रोत बनाता है। वैसे तो श्रीराम जी के सांस्कृतिक गुणों का वर्णन अनेकों रचनाकारों ने, अपने–अपने विचारों के आधार पर किया है। जैसे पुष्पदंत की रचना पउमचरिउ, क्षेमेन्द्र की रामायण मंजरी आदि। और भी भाषाओं में इसकी धार्मिकता, सांस्कृतिकता का चित्रण किया गया है। इसमें तमिल, तेलुगु तथा हरियाणवी षैली प्रमुख है परंतु यह ग्रंथ अनेकों भाषाओं में रचित होकर संसार को धार्मिकता एवं सांस्कृतिकता का सात्विक संदेष दे रहा है।

हरियाणा के महान रचनाकार अहमद बक्ष थानेसरी ने तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस का हरियाणवी में अनुवाद करके एक नवीन प्रयोग किया। इसमें संपूर्ण काण्डों को अपनी बोली अर्थात हरियाणवी षैली का रूप दिया। प्रत्येक काण्ड के प्रारंभ में किसी न किसी देवता की स्तूति की गई है।

अयोध्या काण्ड – अगड़ बम्ब–बम्ब श्री कंठ हर अगड़ बम्ब बम्ब महादेव।[4]

अरण्यकाण्ड– कंरू बिन षिवराज को जिनके पार्वती पास अख्य काण्ड कथा रतन कह जग कंरू प्रकाष विनय

श्री राम लखन सिया माई को फिर बन–बन कष्ट हरि भुगतान, विनय तुलसीदास कविराई को विनय वाल्मीकि ऋषि कथन करि प्रगट प्रेम सुखदाई को कहे अहमद, मैं अरण्यकाण्ड कहूं करयो सिर चरण सहाई को[5]
किषकिंधा काण्ड – प्रथम बिन्दु गौरी गणपति फिर प्रभुनाम अखण्ड।[6]

इसी प्रकार अहमद बख्श थानेसरी ने अपनी हरियाणवी भाषा षैली का सुंदर चित्रण किया है। उन्होंनें प्रत्येक काण्ड के प्रारंभ में देव स्तुति की है उसके उपरांत अपनी मातृभाषा में राम कथा सार का गुणगान किया है। श्रीरामचरितमानस की यही सबसे उत्तम विषेषता है कि उसमें धार्मिक गुण एवं संस्कृति का संपूर्ण चित्रण श्रेष्ठतम रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्री रामेष्वर दयाल षास्त्री जी ने भी इसका अनुवाद हरियाणवी बोली अर्थात अपनी मातृभाषा में किया है उन्होंनें भी प्रत्येक काण्ड के प्रारंभ में ईष्वर की स्तुति अथवा मंगलाचार का वर्णन किया है। इन्होंनें सात काण्ड वर्णित किये हैं और इस रचना के माध्यम से गांव समाज को उनकी ही भाषा में हरि चर्चा करके समाज को धर्म एवं संस्कृति की सात्विकता का संदेष दिया है।[7]

इस ग्रंथ में संस्कृति को मूलतः रूप परिभाषित किया है। सीता राम विवाह का प्रसंग हो अथवा राज्यभिषेक का प्रसंग अनेकों प्रसंगों के माध्यम से गोस्वामी जी ने इसमें सांस्कृतिकता के पत्र को उजागर किया है।

गोस्वामी जी ने सदाचार रूपी गुणों का चित्रण करते हुए भरत जैसे महान भक्त एवं सेवक का व्यक्तित्व वर्णित किया है जो संपूर्ण संसार को यह संदेष देता है कि भ्रातृत्व की भावना सात्विक होनी चाहिए जिसके कारण हमारी मौलिक संस्कृति एवं धार्मिक संस्कारों का निर्माण होता है। श्रीरामकथा को संपूर्ण संसार धार्मिक गुणों का सार मानता है। इसके माध्यम से ही मानव जन अपनी परंपराओं, संस्कृतियों आदि से जुड़ता है ईष्वर तत्व के माध्यम से स्वयं को एक सुसांस्कृतिक रूप में बना लेता है। इसमें तुलसीदास जी ने नारी की भूमिका को भी धार्मिक एवं सांस्कृतिक रूप में चित्रित किया है। कौसल्या माता जो धरा के समान धैर्यवान है। उसी प्रकार उर्मिला का वर्णन मिलता है कि उनके धैर्य की यह पराकाष्ठा थी कि अपने स्वामी से दूर उनको कुछ ही क्षण नहीं; अपितु चौदह वर्षों तक दूर रहना था। साथ ही अपने पतिव्रत धर्म का पालन करते हुए उन्होंनें अपना जीवन सात्विक संस्कृतिपूर्ण मूल्य के साथ यापन किया है। वही सीता तो संपूर्ण नारी जाति के लिए एक सांस्कृतिकता की भावना से परिपूर्ण रूप की उदाहरण एवं प्रतिमूर्ति है। संसार में सीता के मौलिक एवं धार्मिक गुणों को आदर्ष माना जाता है। वर्तमान में नारी इन आदर्षों को धारण करती है। यह आदर्ष ही संपूर्ण नारी जाति को धार्मिक एवं सांस्कृति धारणा प्रदान करते हैं। श्रीरामचरितमानस तो संस्कृति के संपूर्ण प्रसंगों का कोष है और धर्म की भव्य ग्रंथ हैं। यह हमें भक्ति, तप, व्रत, साधना, प्रेम, त्याग, समर्पण जैसे धार्मिक गुणों को प्रदान करती है। इन धार्मिक गुणों के माध्यम से ही, सांस्कृतिक गुणों का निर्माण होता है। जो मानव अपने धर्म तथा सांस्कृतिक आचरणों से विमुख होता है, उसके कारण संपूर्ण सभ्यता का ह्रास हो जाता है। मानव जन को राम कथा सार श्रवण करना चाहिए; क्योंकि आदर्ष चरित्रों को सुनने के कारण ही मानव का चरित्र भी आदर्ष हो जाता है।

निष्कर्ष :

अंत में कहा जा सकता है कि श्रीरामचरितमानस कोई सामान्य पुस्तक नहीं है यह तो संपूर्ण मूल्यों, आदर्षों, मौलिक संस्कृतियों तथा धार्मिक गुणों का संपूर्ण कोष है। इसके माध्यम से ही मानव जन में सांस्कृतिक तथा धार्मिक गुणों का संचार होता है। गोस्वामी जी ने इसमें संस्कृति तथा धार्मिकता के अनेकों अनेक प्रसंग उल्लेखित किये हैं जिनका संक्षेप में वर्णन नहीं किया जा सकता। यह तो भव्य महासागर है जिसके भीतर धर्म,

भक्ति, संस्कृति जैसे सात्विक चरित्रों का चित्रण मिलता है। एक सीप के मोती की भांति इसके भीतर अनेकों सात्विक गुण समाहित हैं।

संदर्भ सूची :

1. श्रीरामचरितमानस – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. तुलसी – डा. हरिचन्द्र वर्मा, साहित्य के सांस्कृति आयाम – हिन्दी साहित्य संस्थान (रोहतक)
3. हिन्दू संस्कृति अंक (कोष) – गीता प्रेस गोरखपुर।
4. डा. राजबीर धनखड़, हरियाणवी साहित्य का इतिहास – सुकीर्ति प्रकाषन (कैथल)
5. डा. राजबीर धनखड़, हरियाणवी साहित्य का इतिहास – सुकीर्ति प्रकाषन (कैथल)
6. डा. राजबीर धनखड़, हरियाणवी साहित्य का इतिहास – सुकीर्ति प्रकाषन (कैथल)
7. डा. राजबीर धनखड़, हरियाणवी साहित्य का इतिहास – सुकीर्ति प्रकाषन (कैथल)

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 104–107
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

'बेगाने घर में' उपन्यास में अकेलेपन का विवेचन

किरन रावत
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, परिसर अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, 263601

शोध सारांश :

बेगाने घर में मंजुल जी का चौथा उपन्यास है जो 1978 ई० में प्रकाशित हुआ। मंजुल जी ने इस उपन्यास को आठ परिच्छेदों में विभक्त किया गया है। मंजुल जी ने 'बेगाने घर में' उपन्यास मेरठ की स्थानीय भाषा और यहाँ की आंचलिकता को संजोकर नये तथ्यों एवं संवेदनाओं के माध्यम चित्रित करने का प्रयास किया गया है। इस उपन्यास की कहानी के मुख्य पात्र के रूप में पीली कोठी के मालिक वकील किशोरचंद्र है और उनके खिदमतगारों का एक बड़ा वर्ग है जो उनका अपनों की भांति ख्याल रखते हैं। लेखिका ने प्रकृति एवं जीवन के अलग–अलग पहुलओं को प्रस्तुत किया है। पात्रों के माध्यम से सजीवता एवं संवेदनाओं को प्रकट किया गया है परंतु वही किशोरचंद्र के द्वारा परिवार विघटन का दुःख एवं अकेलेपन की विडंबना का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। पत्नी एवं संतान के दुःख ने उनको एक ही जगह पर ठहराये रखा है, सिर्फ जीना मात्र ही उनका उद्देश्य है। खुशियां, उमंग एवं जीवन को जीने का उत्साह भी फीका पड़ गया है। लेखिका ने अलग–अलग घटनाओं के माध्यम से उपन्यास को नए मोड़ देने का प्रयास किया है। छोटी–छोटी घटनाओं के द्वारा उपन्यास की मार्मिकता एवं सजीवता को संवेदना के साथ चित्रित किया है।

बीज शब्द – अकेलापन, परिवार विघटन, उपन्यास, दुःख, संतान, पत्नी, जीवन, मृत्यु, अपना–पराया, मालिक–नौकर, बेगाना घर।

मुख्य आलेख :

मंजुल जी का चौथा उपन्यास बेगाने घर में है जो 1978 ई० में प्रकाशित हुआ है। मंजुल जी का यह उपन्यास आठ परिच्छेदों में विभक्त किया गया है – पीली कोठी पिछवाड़ा, नीम तले, बड़ी बी, जनाना वार्ड, नौचंदी, टाल की आग, चबूतरे की शाम, बेगाने घर में। मंजुल जी ने यह उपन्यास मेरठ अंचल की कथा और यहाँ की भाषा को एकरूप करके संवेदनाओं एवं तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास की कहानी के मुख्य पात्र के रूप में पीली कोठी के मालिक वकील किशोरचंद्र है और उनके खिदमतगारों के अनेक नौकर है जो उनका अपनों की भांति ख्याल रखते हैं। किशोरचंद्र के घर में काम करने वालों में गनपत बावर्ची, रतनी, जगेसर, रहमतुल्ला, वनफुलवा, चंपी, नूरी और बड़ी बी हैं। मालिक के दोस्त डॉ० मनोहर सिंह और नए मालिक –मालकिन के माध्यम से मेरठ की आंचलिक भाषा के साथ उपन्यास की कथा को सजीवता के साथ प्रस्तुत किया

गया है।

पीली कोठी में किशोरचंद्र, अपनी पत्नी और नौकर के साथ रहते थे। उनकी पत्नी ने पांच संतानों को जन्म दिया परंतु उनमें से कोई भी नहीं बच पाया और पांचवी संतान की मृत्यु के साथ ही पत्नी का भी निधन हो गया। संतान एवं पत्नी की मृत्यु के पश्चात किशोरचंद्र अकेले एवं संतान विहीनता की स्थिति में जीवन–यापन करने लगे। मालकिन के जाने के बाद गनपत ही मालिक का संपूर्ण कार्यभार एवं देखरेख एक पत्नी की तरह कर्तव्यपूर्ण तरीके से निभाता है। मालिक के घर में काम करने वाले ही पीली कोठी को जीने की नई उम्मीद और तीज–त्यौहारों पर खुशियाँ बिखरने का कार्य करते हैं। जिसमें रहमतुल्ला और उसकी पत्नी नूरी और उनके बच्चे (बन्नो, नन्हें, छुटन), बनफुलवा और उसकी पत्नी चंपी और उनके बच्चे (बड़की, छूनी, छुटकी, छोटे), गनपत, बड़ी बी आदि अपने परिवार के साथ पीली कोठी के पिछवाड़े कोठरियों में हंसी–खुशी एक साथ जीवन को उमंग के साथ जीते है।

किशोरचंद्र के दोस्त मनोहर सिंह है जो कभी–कभी पीली–कोठी में आते हैं, कभी किशोर चंद्र उनसे मिलने चले जाते हैं और कभी दोनों साथ में बाहर चले जाते हैं। मालिक हमेशा नौकरों के साथ अपना सा व्यवहार रखते, हर तीज–त्यौहारों को साथ में मनाते और सबका हर चीज का ख्याल रखते हैं। नौकर भी अपने मालिक की अपनों की तरह ख्याल रखते एवं परवाह करते हैं। उन सबमें उनका खास गनपत है जो उनकी सेवा में सदैव तत्पर रहता है। किशोर चंद्र की मृत्यु के बाद उनकी उदासी, अकेलेपन एवं दुःख की चिंता भी करता है। गनपत अपने मालिक के दुःख एवं संतान विहीनता के दर्द से चिंतित होते हुए कहता है– 'मालकिन ने पाँच बार संतान को जन्म दिया था पर सब के सब पालने में से ही उठ गए थे। नौकरों–चाकरों ने पालना बदलवाया। नए बच्चे को नौकरों के बच्चों की पुरानी उतरन तक पहनाकर नजर बचाई।... डॉक्टर साहब ने विलायत तक से दवा मंगवाई, पर तकदीर नहीं पलटी। मालकिन के दिल पर सनाका रह गया। पाँचवें बच्चे की लाश गोद में लिए–लिए उन्होंने प्राण छोड़ दिए। तभी से गनपत ने कुँवारे रहने की कसम खा ली। कहता क्या करना है ससुर, घर बसा के। मेरठ शहर के ऐसे नामी गिरामी वकील किशोरचंद्र मेरे मालिक। और क्या मिला उन्हें घर बसाकर, पाँच सेतानों का दुःख।"[1]

किशोरचंद्र की कोठी के पास की जमीन पर बनफुलवा खेती करता, उसमें सब्जी और फल का उत्पादन करता है, पर वहाँ कोई भी वस्तु बिकने बाजार नहीं जाती। मालिक और नौकरों का इंतजाम वहीं से होता है, और कभी– कभी उनके दोस्त और रिश्तेदारों के वहाँ भेजा जाता था। शाम को नीम तले बैठकर जगेसर, गनपत, बनफुलवा और रहमतुल्ला अपना काम निपटाकर साथ बैठकर बातें किया करते है। एक दिन सभी मिलकर कब्बाली का जिक्र करते हुए आंचलिक भाषा में गाते हैं जिसका वर्णन इस प्रकार किया गया है– 'ये मेरठ वाले कयामत की नजर रखते हैं, काली जुल्फों पे तिरछी तोपी करते हैं।...हाथ में दोना, दोने में कलाकंद, सईयाँ कहाँ गए थे? हाथ में डिब्बा, डिब्बे के साडी बंद, सईयाँ कहाँ गए थे अरे हाय, हाय सईयाँ कहाँ गए थे।"[2]

इन कब्बाली में मेरठ एवं वहाँ की आंचलिक भाषा का स्वरूप मिलता है और मेले और बाजारों में ऐसे कार्यक्रमों का बोलबाला था उसे वहाँ के लोग हास–परिहास के रूप में गाते–बजाते हैं।

गनपत अपनी मालिक की सेवा में ही अपना जीवन गुजरता है। मालिक का चेहरा खुली किताब की भांति पढ़ लेता है। मालकिन के जाने के बाद वह उनका कमरा खोलता, जैसे मालिक की तरफ से उनको याद कर

लेना उसका कर्तव्य हो। वह पुराने दिनों को याद करता और मालकिन के छवि का सुमिरन करता है। अपनी मालकिन के सौंदर्य, ममता और उनके व्यवहार याद करते हुए उनका सजीव चित्रण इस प्रकार करता है– "करवाचौथ के रोज मालकिन उपवास किए रहतीं ।... मालकिन अर्ध्य देने छत पर ही चढ़ा करती। सिर से पाँव तक गहनों में लदी मालकिन छत पर अर्ध्य देती राजरानी जैसी लगतीं। लंबी–गर्वीली गरदन पर नाज से टिका सिर, कैसा तो रुआंब टपकता था, बस उतने भर से। पर मालकिन की हँसी में ममता थी ,बोली में पूजा और आँखों में लज्जा। डॉक्टर साहब तक के सामने पड़ती लजाती थी। बोलती तो कैसे शांत, ठहरे से शब्द झरते। वाणी में जैसे मंदिर की घंटियाँ टनटना उठती।"[3]

मालकिन के जाने के बाद मालिक अकेले और उदास रहने लगे यह चिंता गनपत को सताती थी। वह सोचता की कोई उन्हें दूसरा विवाह करने की सलाह दे शायद वह सुन ले इसलिए जब डॉक्टर साहब आते तो उसे लगता बातचीत के दौरान वह कभी वह कभी कह दे इसलिए उनकी बातों को सुनता था। दोस्त का साथ और त्यौहारों में उनका मन लगा रहता है तो अकेलापन कम झलकता था। पीली–कोठी में ईद हो या दीवाली हर त्यौहारों को बड़ी धूमधाम से एक साथ मिलकर मनाया जाता था। मालिक सभी के साथ विनम्र रहते थे सबकी जरूरत का ध्यान और सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते। पत्नी की मृत्यु के बाद उनकी तस्वीरों को उतारकर बक्से में रख दिया और पत्नी के कमरे में झाँका तक नहीं। सारी सुख–सुविधाएं होने के बाद भी वह पत्नी एवं संतान के बिना बहुत अकेले थे यह अकेलापन ज्यादा न सताए इसलिए कभी उन्होंने उन कमरों में दोबारा देखा तक नहीं। गनपत ही सभी चीजों का समय–समय पर ध्यान रखता था और अपने मालिक के अकेलेपन एवं दुःख को भली–भांति समझता था। जब मालिक देर रात तक लाइब्रेरी में किताब पढ़ते देखता और उनकी उदासी, कोठी का विरानापन और मालिक के जीवन को गहराई से सोचते हुए इस प्रकार से प्रस्तुत करता है– 'मालिक एक अंगुली होठों पर रखकर चुपचाप पोथी बाँच रहे है चारों तरह कैसी तो चुप्पी छाई है। पर चबूतरे में तमाम चाँदनी छिटकी है। पीले गुलाब बड़े–बड़े सितारे से बेल में गुधे हैं। पर मालिक को उस सबसे कोई सरोकार नहीं मालिक का जीवन तो जैसे बडे हॉल की दीवार–घड़ी की भांति एक ठौर पर टिकटिका रहा है। गनपत जिसे जीना कह सके, वैसा तो कुछ भी तो मालिक के साथ नहीं घट रहा। एक वह पिछवाड़ा है, इसी कोठी का कि पाँव धरते ही रेल वाई का यारड याद आ जाएगा। जिधर ताको बस उधर ही कोई ना कोई इंजन भकाभक धुँआ छोड़ रहा है।"[4]

वकील किशोरचंद्र पत्नी की मृत्यु के पश्चात अकेले हो जाते हैं, उनके नौकर मालिक का बहुत ख्याल रखते हैं। धीरे–धीरे समय व्यतीत होता है परंतु किशोरचंद्र उदास और एकांकी जीवन जीते हैं और एक दिन पीली कोठी के मालिक का अचानक निधन हो जाता है। उस दिन कोठी वीरान हो गई। किशोरचंद्र के मृत्यु के पश्चात उनकी वसीयत पढ़ी गयी और मालिक ने सभी को ध्यान में रख कर उनके हिसाब से सभी को अपनी वसीयत का हिस्सा दिया था। नौकर मालिक के अपनत्व से भावुक हो गये कि मालिक ने उन्हें अपने वसीयत का हिस्सेदार समझा। पीली कोठी उनके भतीजे के नाम पर थी और उसके बाद वह वहाँ रहने लगे। मालिक के जाने के बाद पीली कोठी वीरान सी हो गयी थी और इससे दुखी होकर उनका खास सेवक गनपत हमेशा के लिए गाँव चले गया और कभी लौट कार नहीं आया। नये मालिक–मालकिन के दुर्व्यवहार से दुखी होकर सभी ने अपनी नौकरी छोड़ दी जैसे मालिक के जाने के बाद वह कोठी उनके लिए बेगानी हो गई। जो वहाँ रहे वह

मालिक को याद करते हुए अपने परिवार के भरण पोषण के लिए कार्य करते रहे।

एक दिन किशोरचंद्र के दोस्त डॉ० मनोहर सिंह वहाँ आये और कोठी के चारों ओर घूमकर और उनके नौकरों का अपने मालिक के प्रति प्रेम और अपनेपन को देखकर अपने दोस्त को याद करके कहने लगे– "पीली कोठी में अगर किशोरचंद्र कहीं भी जी रहे हैं तो इस माली के बगीचे में या फिर अहाते या अस्तबल में। उन्हें लगा कि यही हैं किशोरचंद्र के असली वारिस, ये रहमतुल्ला कोचवान, जगेसर घसियारा, बनफुलवा माली और वह–वह तो जाने कहाँ भटक रहा होगा गनपत बावर्ची।"[5]

मंजुल जी ने प्रकृति एवं जीवन के अलग–अलग पहुलओं को इस कथा के द्वारा प्रस्तुत किया है। जीवन के उतार–चढ़ाव को अपने पात्रों के माध्यम से उपन्यास को सजीवता एवं संवेदनाओं को नये तथ्यों के साथ प्रकट किया गया है परंतु वही किशोरचंद्र के द्वारा परिवार विघटन का दुरूख एवं अकेलेपन की विडंबना का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। पत्नी एवं संतान के दुःख से अकेले हो गये और एकांकी जीवन जीने लगे। मालिक के अकेलेपन को दूर करने के उनकी सेवा को तैयार रहते और उनके जरूरतों का ध्यान रखते थे। पीली कोठी में सभी तीज–त्योहारों को साथ मिलकर मनाया जाता था। मालिक की मृत्यु के पश्चात पीली कोठी बेगानी हो जाती है पर नौकर ही अपने मालिक को अपने कार्यो में उनकी याद को जिंदा रखकर इस बेगानेपन को कम करते हैं। मंजुल जी ने इस उपन्यास को एक नये धरातल पर प्रस्तुत किया है जिसमें हमारी संवेदनाओं को नये संसार के रूप में व्यक्त किया है।

संदर्भ :-

1. मंजुल भगत का समग्र साहित्य–1, कमल किशोर गोयनका, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष–2018, पृ० 97
2. वही, पृ० 110
3. वही, पृ० 111
4. वही, पृ० 111
5. वही, पृ० 135

मो० न०– 8954865852

ई. मेल– kr730426@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 108–113
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

आंग्ल–नेपाल युद्ध 1814–16 : ऐतिहासिक और राजनीतिक विश्लेषण

किशोर कुमार
शोधार्थी, इतिहास विभाग, डी0 एस0 बी0 परिसर
कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल।

शोध सारांश :

1814 से 1816 के मध्य लड़े गए अंग्रेज–नेपाल युद्ध को भारतीय उपमहाद्वीप के उपनिवेशिक इतिहास का एक निर्णायक अध्याय माना जाता है। यह संघर्ष न केवल ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी और गोरखा शासकों के बीच सत्ता और प्रभुत्व की होड़ का परिणाम था, बल्कि यह तत्कालीन भारतीय भू–राजनीतिक परिस्थितियों, सीमावर्ती क्षेत्रों के संसाधनों तथा रणनीतिक स्थलों पर नियंत्रण को लेकर उपजे तनावों की परिणति भी था। इस युद्ध ने न केवल ब्रिटिश साम्राज्य के भू–राजनीतिक विस्तार को दिशा दी, बल्कि नेपाल की क्षेत्रीय सीमा, प्रशासनिक संरचना और आंतरिक राजनीति को भी गहराई से प्रभावित किया। 1816 ई0 में हुई सुगौली संधि के माध्यम से नेपाल को अपने कई महत्वपूर्ण भू–भाग ब्रिटिश सत्ता को सौंपने पड़े, जिससे तराई क्षेत्र, कुमाऊँ–गढ़वाल, और सिक्किम के कुछ भाग ब्रिटिश अधीनता में आ गए।

यह शोध–पत्र अंग्रेज–नेपाल युद्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, कारणों, युद्ध की प्रमुख घटनाओं, रणनीतियों, आर्थिक प्रभावों, सैन्य संगठनों तथा युद्ध के दीर्घकालिक परिणामों का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

प्रस्तावना :

गोरखा राज्य का वास्तविक विस्तार पृथ्वीनारायण शाह के नेतृत्व में प्रारम्भ हुआ, जिन्होंने 1769 ई0 में काठमांडू घाटी पर अधिकार स्थापित कर नेपाल के राजनीतिक एकीकरण की नींव रखी।[1] इसके पश्चात गोरखा शासकों ने अपनी विस्तारवादी नीति को जारी रखा और क्रमशः पश्चिम तथा पूर्व की ओर अपने राज्य का विस्तार किया। पश्चिम की दिशा में गोरखाओं ने कुमाऊँ और गढ़वाल जैसे क्षेत्रों पर अधिकार स्थापित किया, जबकि पूर्व में सिक्किम तक उनका प्रभाव बढ़ा। इस प्रकार, अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक गोरखा राज्य एक विस्तृत साम्राज्य के रूप में उभर चुका था, जिसकी सीमाएँ सतलज से तिस्ता नदी तक फैल गई थीं।[2]

हालाँकि, इस तीव्र विस्तार ने प्रशासनिक और सैन्य दृष्टि से अनेक समस्याएँ भी उत्पन्न कीं। इतना विशाल और दुर्गम पर्वतीय क्षेत्र काठमांडू जैसे केंद्रीय सत्ता–केन्द्र से नियंत्रित करना अत्यंत कठिन था। संचार व्यवस्था की सीमाएँ, संसाधनों की कमी तथा स्थानीय परिस्थितियों की जटिलता के कारण शासन–व्यवस्था प्रभावी

रूप से संचालित नहीं हो पा रही थी।

इसी समय अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी भी अपने प्रभाव का विस्तार कर रही थी और हिमालयी क्षेत्रों में अपनी स्थिति मजबूत करने का प्रयास कर रही थी। तराई क्षेत्र की उपजाऊ भूमि, व्यापारिक मार्गों पर नियंत्रण तथा सीमाओं की सुरक्षा जैसे कारणों से अंग्रेजों और गोरखाओं के हितों में टकराव बढ़ने लगा।[3] सीमावर्ती क्षेत्रों, विशेषकर बुटवल और आसपास के इलाकों में, दोनों शक्तियों के बीच विवाद तीव्र होता गया। इन क्षेत्रों पर अधिकार को लेकर उत्पन्न तनाव अंततः संघर्ष का कारण बना और 1814 ई0 में एंग्लो–गोरखा युद्ध का प्रारम्भ हुआ।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और युद्ध के कारण :

अंग्रेज–नेपाल युद्ध की पृष्ठभूमि को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम गोरखा राज्य के उदय, उसकी विस्तारवादी नीतियों तथा ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के भारत में बढ़ते वर्चस्व का तुलनात्मक अध्ययन करें। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में पृथ्वीनारायण शाह के नेतृत्व में गोरखा राज्य का एकीकरण आरंभ हुआ, जिसने नेपाल को एक केंद्रीयकृत शक्ति के रूप में स्थापित किया। पृथ्वीनारायण शाह ने काठमांडू, भक्तापुर, और पाटन जैसे राज्य जीते और धीरे–धीरे नेपाल का क्षेत्रीय विस्तार हुआ।

गोरखाओं की इस आक्रामक और विस्तारवादी नीति का अगला चरण था कुमाऊँ, गढ़वाल, सिक्किम, और तराई क्षेत्रों में हस्तक्षेप। इन क्षेत्रों में गोरखाओं ने कठोर शासन और कर व्यवस्था लागू की, जिससे स्थानीय जनता में असंतोष उत्पन्न हुआ।[4] कुमाऊँ और गढ़वाल, जहां 1790 के दशक तक स्वतंत्र राजशाही प्रणाली विद्यमान थी, गोरखा नियंत्रण में आ गए और वहाँ पर शोषणकारी कर प्रणाली, जबरन श्रम (बेगार), और सैन्य दमन लागू हुआ।[5] इसी काल में नेपाल की सेना ने सीमावर्ती भारतीय क्षेत्रों में हस्तक्षेप करना आरंभ किया।

दूसरी ओर, ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में अपनी सत्ता को सुदृढ़ कर रही थी। बंगाल, बिहार, अवध और उत्तर भारत के अन्य हिस्सों पर नियंत्रण स्थापित कर चुकी कंपनी अब उत्तर–पश्चिम की ओर अपना प्रभुत्व बढ़ाना चाहती थी। इस विस्तार की राह में नेपाल एक भौगोलिक और रणनीतिक अवरोध बनकर उभरा।

ब्रिटिश और गोरखा सत्ता के बीच तनाव का एक प्रमुख कारण था सीमावर्ती क्षेत्र। विशेष रूप से तराई क्षेत्र, जो कृषि दृष्टि से उपजाऊ था, दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण था। नेपाल ने इन क्षेत्रों पर दावा करते हुए वहाँ अपनी चौकियाँ स्थापित कीं। कई बार इन चौकियों में ब्रिटिश अधीन क्षेत्रों के किसान परेशान किए गए, और राजस्व वसूली को लेकर संघर्ष हुआ। 1811–1814 ई0 के बीच गोरखा सेनाओं द्वारा गढ़वाल और तराई क्षेत्रों में ब्रिटिश क्षेत्रों की सीमा–लांघकर की गई सैन्य गतिविधियाँ युद्ध का मुख्य कारण बनीं।[6] ब्रिटिश सूत्रों के अनुसार, नेपाल ने गोरखपुर, बलरामपुर, बस्ती और शिकारपुर जैसे क्षेत्रों में अपने अधिकार का दावा करते हुए कई स्थानों पर कब्जा कर लिया। जब अंग्रेजों ने इन क्षेत्रों से गोरखा सेनाओं को हटने के लिए कहा, तो नेपाल सरकार ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया।

इस स्थिति में लॉर्ड हेस्टिंग्स, जो उस समय भारत के गवर्नर जनरल थे, ने 1814 ई0 में नेपाल के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की।[7] लॉर्ड हेस्टिंग्स का यह निर्णय न केवल सैन्य रणनीति के दृष्टिकोण से लिया गया था, बल्कि इसमें राजनीतिक और आर्थिक हित भी शामिल थे। ब्रिटिश प्रशासन चाहता था कि हिमालय के दक्षिणी क्षेत्रों पर उनका अधिकार हो, जिससे व्यापार मार्गों पर नियंत्रण, संसाधनों का दोहन और सैन्य दृष्टिकोण से

महत्वपूर्ण क्षेत्रों में प्रभुत्व स्थापित किया जा सके।

अतः यह स्पष्ट है कि अंग्रेज–नेपाल युद्ध का मूल कारण केवल सीमा विवाद नहीं था, बल्कि इसके पीछे ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतियाँ, नेपाल की क्षेत्रीय विस्तार की महत्वाकांक्षा, आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण की लालसा तथा सामरिक महत्व के क्षेत्रों को लेकर प्रतिस्पर्धा निहित थी।

युद्ध की प्रमुख घटनाएँ और सैन्य रणनीतियाँ :

1814 ई0 में अंग्रेज–नेपाल युद्ध की घोषणा के बाद ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने चार अलग–अलग मोर्चों से नेपाल पर आक्रमण की योजना बनाई।[8] लॉर्ड हेस्टिंग्स के नेतृत्व में यह युद्ध योजना इस विचार पर आधारित थी कि नेपाल की सीमाओं को विभिन्न दिशाओं से घेरकर उसकी सैन्य शक्ति को कमजोर किया जा सके। ब्रिटिश पक्ष ने अपने अभियानों के लिए प्रमुख सेनानायकों को नियुक्त किया :–

1. जनरल बेनी थॉम्पसन को कुमाऊँ अभियान की जिम्मेदारी दी गई।
2. जनरल गिलेस्पी को देहरादून और गढ़वाल क्षेत्र में प्रवेश करने का कार्य सौंपा गया।
3. जनरल मार्ले को तराई और मिथिला क्षेत्रों में मोर्चा संभालना था।
4. जनरल जॉर्ज वुड को गोरखपुर दिशा से कार्रवाई करने हेतु लगाया गया।

नालापानी के किले पर आक्रमण के दौरान गोरखा सैनिकों ने अत्यंत दृढ़ता और साहस का परिचय दिया। बलभद्र ने नालापानी किले में अपनी सीमित सेना के साथ अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया। अक्टूबर 1814 ई0 में जनरल गिलेस्पी ने लगभग 3,000 सैनिकों के साथ नालापानी पर हमला किया, परंतु गोरखा सैनिकों ने असाधारण साहस दिखाते हुए युद्ध को कई सप्ताह तक खींचा।[9]

गिलेस्पी स्वयं 31 अक्टूबर 1814 को एक हमले में मारा गया। यह ब्रिटिश सेना के लिए गहरा आघात था और इससे यह स्पष्ट हुआ कि गोरखा सेना संख्या में कम होते हुए भी रणनीति और जुझारूपन में श्रेष्ठ थी। नालापानी की घेराबंदी के दौरान अंग्रेजों को भारी हानि हुई। नालापानी की लड़ाई ने यह स्पष्ट कर दिया कि गोरखा सैनिक कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में लड़ने में अत्यंत सक्षम थे और उनकी युद्धक क्षमता को कम करके आंकना अंग्रेजों के लिए गंभीर भूल साबित हुई। इसके अतिरिक्त, अंग्रेजी सेना को पर्वतीय भू–भाग, संकरे मार्गों तथा आपूर्ति संबंधी समस्याओं का भी सामना करना पड़ा, जिससे उनकी प्रगति धीमी हो गई।

कुमाऊँ-गढ़वाल मोर्चा :

हालाँकि, प्रारंभिक असफलताओं के बावजूद अंग्रेजों ने अपनी रणनीति में परिवर्तन किया। उन्होंने अधिक संगठित और सावधानीपूर्ण तरीके से आगे बढ़ना शुरू किया तथा स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप अपनी सैन्य योजनाओं को ढालना आरम्भ किया। इसके परिणामस्वरूप, आगे के अभियानों में उन्हें अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त हुई। कुमाऊँ क्षेत्र में ब्रिटिश सेना को अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त हुई। जनरल थॉम्पसन के नेतृत्व में ब्रिटिश सेना ने अल्मोड़ा की ओर कूच किया। कुमाऊँ अभियान के अंतिम चरण में अंग्रेजों ने निर्णायक बढ़त हासिल कर ली थी। गार्डनर के नेतृत्व में सेना अल्मोड़ा के निकट पहुँच चुकी थी, और अब गोरखा सेना के लिए अपनी स्थिति बनाए रखना कठिन होता जा रहा था। गोरखा कमांडर हस्तिदल चंन्द ने यहाँ प्रतिरोध का प्रयास किया, परंतु स्थानीय जनता का समर्थन नहीं मिलने और संसाधनों की कमी के कारण गोरखा सेना कमजोर साबित हुई तथा इसी दौरान गोरखा पक्ष के एक प्रमुख अधिकारी हस्ती दल ने अंग्रेजों के विरुद्ध एक

प्रतिआक्रमण का प्रयास किया।

हस्तीदल ने गननाथ (गणनाथ) क्षेत्र की ओर बढ़कर अंग्रेजों को चौंकाने की रणनीति अपनाई, ताकि वे अल्मोड़ा की ओर बढ़ती अंग्रेजी सेना को पीछे से आक्रमण कर रोक सकें। किंतु अंग्रेजों ने शीघ्रता से प्रतिक्रिया दी और उनके विरुद्ध कार्यवाही की। इस संघर्ष के दौरान हस्ती दल को गोली लगने से उसकी मृत्यु हो गई, जो गोरखा सेना के लिए एक गंभीर आघात था। अब गोरखा शासन के लिए कुमाऊँ क्षेत्र को बचाना लगभग असंभव हो गया था। अल्मोड़ा, जो गोरखा प्रशासन का प्रमुख केंद्र था, अंग्रेजों के सीधे दबाव में आ गया। इस स्थिति को देखते हुए गोरखा प्रशासक बम शाह ने संघर्ष जारी रखने के बजाय समझौते का मार्ग अपनाना उचित समझा। 27 अप्रैल 1815 ई0 को दोनों पक्षों के बीच एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार गोरखा सेना को काली नदी के पश्चिम के क्षेत्रों से हटना पड़ा। इस प्रकार कुमाऊँ क्षेत्र पूर्णतः अंग्रेजों के अधीन आ गया।

दूसरी ओर तराई क्षेत्र में जनरल मार्ले को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। उनकी सेना नेपाल की सीमा में गहराई तक प्रवेश नहीं कर सकी। मार्ले की अनिर्णयात्मक प्रवृत्ति और संगठनात्मक कमजोरी के कारण यह अभियान निष्क्रियता का शिकार हुआ।

मकवानपुर और अंतिम संघर्ष :

1816 की शुरुआत में ब्रिटिश सेना ने पुनः संगठित होकर मकवानपुर की ओर प्रस्थान किया। जनरल डेविड ऑचरलोनी के नेतृत्व में अंग्रेजों ने एक योजनाबद्ध अभियान चलाया।[10] ऑचरलोनी ने धीरे–धीरे नेपाल की सीमा में प्रवेश करते हुए मकवानपुर और हेटौड़ा को घेर लिया। गोरखा सेना, जो अब तक निरंतर संघर्ष कर रही थी, संसाधनों और जनशक्ति की भारी कमी से जूझ रही थी। मकवानपुर की लड़ाई ने एंग्लो–गोरखा युद्ध को निर्णायक मोड़ पर पहुँचाया, जहाँ से काठमांडू पर प्रत्यक्ष दबाव बनाकर अंग्रेजों ने नेपाल को सुगौली संधि स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया।

सुगौली की संधि (04 मार्च 1916) संधि :

02 दिसंबर 1815 ई0 में गजराज मिश्र द्वारा की गई संधि नेपाल नरेश ने 04 मार्च 1816 में पुष्टि कर दी जिसके परिणाम स्वरूप निम्नलिखित शर्तें तय की गई[11]:–

1. दोनो ओर से युद्ध विराम की अंतिम घोषणा कर दी गई।
2. पूर्व संधि के फलस्वरुप तराई का जो प्रदेश अंग्रेजों को सौंपा गया था उसे पुनः नेपाल को लौटा दिया गया क्योंकि इस प्रांत में गोरखा सरदारों की अपनी निजी जागीरें थीं जिसमें मेल मिलाप रखना कंपनी सरकार के लिए अति आवश्यक था।
3. अवध की सीमा पर स्थित भूभाग अवध के नवाब को शौंप दिया गया।
4. मंची और तीस्ता नदियों की मध्य छोटी सी पट्टी सिक्किम के राजा को दे दी गई।
5. यह सब व्यवस्था गार्डनर की देखरेख में हुई जो नेपाल में सबसे पहला ब्रिटिश रेजिडेंट था।
6. टिंकर और छांगरु नेपाल को हस्तगत कर दिए गए।
7. नाभी व कुटी ब्रिटिश प्रदेश में मिला लिए गए।

ऐतिहासिक मूल्यांकन तथा समकालीन प्रासंगिकता :

ब्रिटिश साम्राज्य की रणनीतिक विजय इस युद्ध ने न केवल ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को हिमालय तक

पहुँचा दिया, बल्कि नेपाल को एक सीमित भूभाग में समेट कर, एक कूटनीतिक रूप से आश्रित राज्य बना दिया। ब्रिटिश सत्ता को उत्तरी सीमा पर एक सुरक्षा–कवच प्राप्त हुआ, जिससे वह तिब्बत और चीन के साथ अपने संबंधों को रणनीतिक रूप से नियंत्रित कर सकी। सुगौली संधि के बाद नेपाल की अंतरराष्ट्रीय स्थिति परिवर्तित हो गई। औपचारिक रूप से स्वतंत्र रहते हुए भी नेपाल की विदेश नीति और आंतरिक संरचना पर ब्रिटिश प्रभाव स्पष्ट हो गया। इस प्रक्रिया ने नेपाल की पारंपरिक शासकीय संरचनाओं को चुनौती दी और एक नए प्रशासनिक और कूटनीतिक ढाँचे की नींव रखी।

सांस्कृतिक और सैन्य दृष्टि से प्रभाव गोरखा वीरता के प्रति ब्रिटिश प्रशंसा ने एक ऐसे सैन्य संबंध की शुरुआत की, जो आज भी जीवित है। गोरखा रेजिमेंटों की स्थापना केवल सैन्य ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक अंतःक्रिया की भी प्रतीक बनी। वहीं दूसरी ओर, नेपाल के समाज में बाह्य प्रभावों की पैठ भी इसी युग से आरंभ हुई। भू–राजनीतिक संतुलन में परिवर्तनरू यह युद्ध और उसके परिणामस्वरूप हुई क्षेत्रीय पुनर्रचना ने दक्षिण एशिया के भू–राजनीतिक संतुलन को पुर्नर्निमित किया। नेपाल की सीमाओं का पुनः निर्धारण और ब्रिटिश प्रभुत्व की हिमालय तक विस्तार की रणनीति, आगे चलकर भारत–तिब्बत–चीन समीकरणों के लिए भी पृष्ठभूमि बन गई।

वर्तमान समय में जब भारत–नेपाल संबंध ऐतिहासिक साझेदारी, कूटनीतिक सहयोग और सांस्कृतिक घनिष्ठता के आधार पर पुनर्निर्मित हो रहे हैं, तब इस युद्ध का ऐतिहासिक विश्लेषण और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। यह हमें न केवल अतीत की गलतियों और सफलताओं से सीखने का अवसर देता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि कैसे भूगोल, राजनीति और इतिहास की त्रिधारा किसी राष्ट्र के भविष्य को आकार देती है।

निष्कर्ष :

आँग्ल नेपाल युद्ध मुख्यतः लार्ड हेस्टिंग्स की हस्तक्षेपवादी नीति का परिणाम भी था क्योंकि आरंभ में उसने वेलेजली की अग्रगामी व विस्तार वादी नीति का की आलोचना की थी किंतु बाद में उसने स्वयं भी हस्तक्षेप की नीति को त्याग कर विस्तार वादी नीति अपना ली थी क्योंकि उसका मानना था की भारत के असभ्य लोगों को समझाने के लिए सभ्य सरकार को हस्तक्षेप की नीति अपनानी चाहिए। गोरखों द्वारा इधर कुमाऊँ तथा गढ़वाल पर कब्जा करने के बाद हिमाचल तथा नीचे तराई के क्षेत्र पर उनकी नजर बनी हुई थी जिसके चलते भी अंग्रेजों के लिए गोरखों पर लगाम लगाना जरूरी हो गया था। ध्यातव्य है कि कंपनी ने अल्मोड़ा पर अधिकार करने से पूर्व भी गोरखों को अनेक प्रलोभन व आश्वासन दिए थे जिसमें ये बात भी शमिल थी कि यदि वे अल्मोड़ा कम्पनी की सरकार को दे दें तो इनके साथ उदारता का बर्ताव किया जाएगा। लेकिन इस नहीं हो सका तथा दोनों के मध्य टकराव अपरिहार्य था। अंग्रेजों ओर गोरखों के बीच सुगौली की संधि के उपरांत स्थाई मित्रता की शुरुआत हुई। अंग्रेजों को गढ़वाल और कुमाऊं में शिमला मसूरी व नैनीताल जैसे खूबसूरत एवं स्वास्थ्य वर्धक क्षेत्र प्राप्त हुए वही अंग्रेजों ने भी गोरखा सैनिकों की वीरता से प्रभावित होकर उन्हें ब्रिटिश इंडियन आर्मी में भर्ती करने की शुरुआत की।

संदर्भ :

1. स्टिलर, एल. एफ. : द राइज ऑफ द हाउस ऑफ गोरखा, मंजूश्री प्रकाशन, दिल्ली, 1973, पेज 246।

2. सांकृत्यायन, राहुल : कुमाऊँ, ज्ञानमंडल कंपनी, वाराणसी, 2015 वि. सं. पृष्ठ 103।
3. रेग्मी, महेश चंद्र : इंपीरियल गोरखा : एन एकाउन्ट ऑफ गोरखाली रूल इन कुमाऊँ (1791–1815) एर्डोइट प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999।
4. पूर्वोक्त।
5. सांकृत्यायन, राहुल : पूर्वोक्त।
6. रेग्मी, महेश चंद्र : किंग्स एण्ड पोलिटिकल लीडरर्स ऑफ द गोरखाली एम्पायर 1768–1814, ओरिएंट लॉन्गमैन लिमिटेड, हैदराबाद, 1995, पेज 73।
7. पूर्वोक्त।
8. पाण्डे, राम निवास : द मेकिंग ऑफ मार्डन नेपाल, निराला प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज 371
9. स्टिलर, एल. एफ : पूर्वोक्त।
10. पाण्डे, राम निवास : पूर्वोक्त।
11. सिंह, अजय रावत : उत्तराखंड का समग्र राजनैतिक इतिहास. अंकित प्रकाशन. हल्द्वानी. 2021।

ईमेल : kishorj238@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 114–126
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

The Role of Indian Diaspora in Influencing India's Soft Power Diplomacy : Under Modi Government

Khushboo Arya
Research Scholar,
DSB Campus, Kumaun University, Nainital (Uttarakhand)

Abstract :

This paper analyse that Indian Diaspora has emerged as an important driving force of soft power diplomacy in this 21st century. Though historically its importance is being traced from Nehru period where it's gained less recognition but period of PM Rajiv Gandhi and PM Vajpayee have acknowledged the diaspora importance as a great potential of investment , skills and technological driven. The major height is given much to it under Modi's government and the key role played by India's soft power like culture, civilization, heritage sites and language in influencing the Diasporas and make them connected to its motherland.

Key Words : Diasporas, Culture, Soft Power.

Indian Diaspora is one of the most strongest soft power asset since the post- independence period to the Modi's government and plays a significant role in India's foreign policy. Diaspora is derived from a Greek word dia means "through" and speiro means "to scatter" literally means scattering or dispersion. Originally the word is evolved in the 6th century BC when Jewish people were forced to leave their native land after their exile from Babylonia.[1]

Basically diasporas are refers to people living in abroad while gradually adjusting themselves and adopting a new social ,political and cultural life of their respective migrated countries but they still carries the legacy of their cultural beliefs, traditions and preserve linguistic ties by speaking Indian languages such as Hindi and their mother tongues, following religious practices and observing traditional ceremonies like weddings rituals and cremations to the foreign land in this way they keep their cultural values, norms, emotions alive and passes these cultural ideologies to their future generations although they either live as the NRIs (Non-Resident Indians) are temporary living people who migrated abroad just for a sake of better education ,job opportunities whereas the PIOs

(Persons of Indian Origin) are the citizen of the host country.

Diasporas are also seen as an important force that connects both domestic politics with international politics together though they live outside their homeland but bring their cultural identity in a global platform often works like ethnic lobbies influencing politics promoting democracy, pluralism and entrepreneurship also boost economic development in their homeland. In this way diasporas play a crucial role in shaping foreign policy which can be best understood through the theories of constructivism and liberalism.

From the perspective of constructivism its argued that state do not act for power, money or security rather it acts for identity and consider diaspora identity also matters in a foreign land for influencing the world politics. Scholars like Roxanne Doty highlight that identity belongs to people not just to nation's which makes diasporas vital. They preserve and project national identity abroad. Other modern constructivists like Brubaker and Adamson view diaspora not as a fixed group but a flexible one that maintains cohesion, cultural ties and transnational influence. For example India's case is well illustrates by nurturing its diaspora as a significant soft power whereas liberalism recognized diaspora as an non state actor unlike realism consider the state is only the sole actor but liberalism argues that individual shapes the state interest and influence both homeland politics and foreign policy especially in situations where society is strong and the state is relatively weak. Diaspora study also emerged a predominant initiative though originally it was evolved from cultural studies, anthropology and sociology background but in later 1990's Political science begins to study them. Today with their growing influence locally and globally diasporas are recognized as non-state political actors and part of international relations theory[2] and became popular worldwide.

The history of the Indian Diaspora can be traced back nearly 2,000 years ago the first ever migration was happened in India during the time of Emperor Kanishka around the 1st century AD. It was a group of Romani people knowns as "Gypsies" who originally came from present day Rajasthan and settled in Eastern Europe. Another major migration took place of India during the rule of Chola's period they have great influence in Indonesia and Malaysia, large number of people migrated to Southeast Asia. The influence of India cultural is quite evident in Thailand, the Angkor temples of Cambodia and in places like Bali and Sumatra in Indonesia. However these early migrations are not usually called the Indian Diaspora. With passing of time these migrated groups mixed closely with local people and gradually lost their Indian identity

The early 19th century marked the period of old Indian diasporas. After Britian abolished slavery colonial powers like Britain, France, the Netherlands and Portugal for them workers became a need for their sugar and rubber plantations in their colonised countries of Asia and Africa to full- fill the

condition British started a system of indentured labour these labours moved on the basis of contract but they were living under the harsh conditions[4]. The first ever Indian group was sent to Mauritius this continued by other colonisers also ,workers were deployed in countries like Suriname, Trinidad and Fiji came from present-day Bihar and Uttar Pradesh and in Guyana and East Africa they were mainly came from Punjab and Gujarat. And the French occupied territories called the Reunion Island where workers were came from Pondicherry, Tamil Nadu mainly from South India and named them Malabars this led to the French-British Convention of July 25 1860, which permitted 6,000 Indian workers annually under five-year contracts but their condition remained harsh low driven, discriminatory, debts and abusive which continued till WWI. Due to criticism Britain finally ended the indenture system in 1916. Even the entire south Indian families were recruited from especially from present-day Tamil Nadu to fullfill the needs of workers owners in Sri Lanka, Malaysia and Burma and this system continued till WWII.

If we see around 1900 Indians were only 1000 in both UK and USA after WWII this number increased up to 6000 in each country though the Indian was poor and unskilled with low pays in UK and USA migrants were Sikh working in agricultural field of California. The number of migrants were low due to USA Canada discriminatory immigration laws. The Johnson–Reed Act of 1924 of USA limited the immigrants number to 2% of people from that country already living in the US in 1890.The year 1890 was chosen to stop large numbers of Eastern European Jews who had migrated in order to escape persecution as a result of it restricted the immigrants from the Middle East and India also. The objective of this law basically to protect American homogeneity. A similar situation existed in Canada since there were no direct ships from India to Canada Indians were effectively barred from entering. This was a clever legal move designed to prevent immigration from India and other non-European countries.

The turning point for Indian migrants came in US when President Lyndon Johnson and the US Congress passed the Hart-Celler Act, which ended the racist 1924 Johnson-Reed Act allowing high-skilled immigrants including Indians to obtain permanent residence in the US the growth was more accelerated in US 1990s when the software boom boosted expanding the economy .The US Immigration Act of 1995 introduced the H-1B visa program for temporary workers which allowed US companies to hire foreigners with a bachelor's degree in professional course such as doctors, engineers, scientist and IT professionals this marked the start of Indian Diaspora in the United States. In Canada when they established the points system allowed the educated and skill people to migrate in there country[3].

The history of gulf ties goes back to two millennia where trade was done in spices, textiles,

pearls and horses but the migration from India took place in 1970s it was during the time when Saudi Arabia and the UAE needed foreign labours for infrastructure and development. Migration was also expanded in Dubai and Abu Dhabi as they are becoming a leading business hub allowing Indians to enter in both labour and professional sectors. After the arrival of globalisation long visas policies are being reshaped that offers investment opportunities, while Saudi Arabia's Vision 2030 reduces reliance on foreign labour but still values skilled Indians. With over 2.5 million Indians in Saudi Arabia and 3.5 million in the UAE constituent the strategic asset in India's foreign policy strengthening bilateral relations and showcasing the resilience and adaptability of the Indian diaspora in the Gulf. Whereas Indian entrepreneurs have also built strong businesses in Dubai and Abu Dhabi making the UAE a hub for re-exports to Africa, Europe and the Middle East. Energy cooperation became another pillar as India imports large amounts of crude oil and partnering in refinery projects while tourism and aviation links have expanded through airlines and Indian-owned hotels catering to the diaspora and visitors[4]. In a nutshell in this 21st century the Indian diaspora in the gulf countries is not only consider an economic asset rather a diplomatic and strategic link reinforcing India's foreign policy and regional partnerships.

The Changing Situation of Indian diaspora After Independence :

During the colonial period Indians in abroad were under the British government, matters were handle by them even INC passed a resolution for the rights and status of Indians living abroad they were asked to treat them equally with other British .But soon India got Independence they were no longer subject of British. The overseas Indians divided into categories they were considered the citizens of the country they had settled in ,secondly they were designated as the holders of British passports but without local citizenship or thirdly they were recognised as stateless people with no citizenship rights at all. And India considered citizenship under Article 8 of the Constitution as People of Indian Origin (PIOs) who did not take Indian citizenship they will be no longer Indian nationals their allegiance was to their adopted country.

The major change toward engaging with diaspora came during the Rajiv Gandhi's premiership. He reshaped India's economic planning to include the diaspora as they have enough potential of skills, expertise, technology and investment. Also a Special Coordination Division was set up under the Ministry of External Affairs in order to handle matters of diasporas, through the platform of Global Convention of Overseas Indians first ever held in New York city 1989 brought Indians together. Growth was also seen in term of remittances in the 1980s its US$430 million in 1975 and US$2,757 million in 1980 (more than six times increase)[11]. A major example during the tenure of Rajiv Gandhi came up with India's telecom revolution in which major contribution was given by Sam Pitroda an Indian technologist who studied and worked in the US. Pitroda founded the Centre for Development of

Telematics (C-DOT) and believed technology could improve services for India's poor[5]. With his success it showed how diaspora expertise could transform key sectors of India's economy and development.

The actual realization for the need of diasporas came when India faced severe economic crisis by the late 1980s and early 1990s as the previous government followed the closed economic system. In order to tackle the situation of debts, balance of payment crisis and rupee devaluation Prime Minister P.V. Narasimha Rao introduced the New Economic Policy LPG. The role of NRI's enhanced they were encouraged to invest in real estate development, India Development Bonds, approval for investment and technical collaborations was also given another measure took by the creation of a Chief Commissioner for NRIs to address their issues and exemptions from certain rules under FERA (Foreign Exchange Regulation Act).

A radical shift was seen in the diaspora policy under Atal Bihari Vajpayee leadership several reforms were accelerated which is integrated through globalisation. The New Industrial Policy recognized the importance of technology transfer, value of foreign exchange services. Treated NRIs and PIOs as part of the "Great Indian Family" and encouraging them to contribute to India's growth through investment, skills and cultural ties. Vajpayee said: "We do not want only your investments. We also want your ideas."

The NDA government strategy for tapping the potential and connecting with Indian diaspora was taken by setting up the High Level Committee (HLC) chaired by Dr. L.M. Singhvi a BJP Member of Parliament and former High Commissioner to Britain. The committee assessment was to study the situation of NRIs (Non-Resident Indians) and PIOs (People of Indian Origin) living abroad understand their needs and suggest a flexible policy for India's engagement with them the committee released its report and noted about 20 millions of Indians living abroad in 110 countries and making a significant global community by building a global network of people of Indian origin would strengthen the diaspora itself , India's global position and relations with host countries as well[6].

The most influential suggestions of the committee was the establishment of Pravasi Bharatiya Divas (PBD) an annual event to unite Indians globally. 9th of January observed every year as Pravasi Bharatiya Divas (PBD) the date was chosen because in this day Mahatma Gandhi returned to India from South- Africa he is considered the most famous Pravasi Bharatiya. At the first PBD the government introduced the Pravasi Bharatiya Samman awards to honour outstanding members of the diaspora for their breakthrough and valuable contribution.[7]

PM Manmohan Singh he described diaspora as an "empire of minds" spread across the world but united by the idea of Indianness. Manmohan Singh echoed: "Invest not just financially but

intellectually, socially, culturally, and emotionally." Also launched several initiatives for the diaspora the "Know India Programme" (KIP) to help children of diaspora communities learn about India scholarships programme for children of overseas Indians and announced the Pension and Life Insurance Fund (PLIF) although many of the promises not delivered effectively created confusion and disappointment among the diaspora. In 2004 a proper Ministry was set up by Indian government the Ministry of Non-Resident Indians' Affairs, later renamed the Ministry of Overseas Indian Affairs (MOIA) for strengthening networks with Indians expatriate so they would able to invest, share knowledge and contribute to India's development. Then in 2009 MOIA created the Prime Minister's Global Advisory Council of Overseas Indians to bring together eminent diaspora members who could provide policy advice to the Prime Minister.

Modi Diasporic diplomacy :

Whilst India's strength lies in 3D's democracy, demography, and demand the fourth D is added by the PM Narendra Modi called the' diasporas' considers "oxygen" for India's rise central to his policy of soft power diplomacy considering it as a strategic move for integrating millions of diasporas living abroad not just as expatriates rather a cultural ambassadors or Rashtradoors of India's as they carried forward the legacy of India's cultural values, norms, identity and talent which connects to the global platform[8]. The diasporas are embraced by Modi as part of "global Indian family, his approach shifted from a narrow economics discourse to a cultural, emotional, and civilizational project. Modi stressed on "everything is not measured in dollars or pounds it's a bond," he considers them as ambassadors, moral subjects, political stakeholders and valuable aspect of our society despite their lack of voting rights or citizenship previous government confined only to wealthy diasporas. This move disrupts Cairney's policy equilibrium and the NDA government instead focused on marginalized communities in less developed states who preserve language, religion and identity abroad.[9]

Modi's High -Profile Engagements with Diaspora :

Modi's foreign visit interacting with the Indian Diaspora is unique through the organisation of big rallies is major step towards the engagement with the diverse groups of Indian's. To highlight this diasporic event more Modi organised series of high-profile events across the world including the visits from grand rally at Madison Square Garden in New York (2014), the gathering at Allphones Arena in Sydney (2014), the diaspora meet at Ricoh Coliseum in Toronto (2015), and the spectacular Wembley Stadium event in London (2015) [10]Johannesburg (South Africa, 2016),Brussels (2016) to Abu Dhabi (2018) his message was consistent to the overseas that invest in India's economy, donate to programs like Clean Ganga and support rural development projects. According to Syed Akbaruddin (Foreign Ministry spokesperson) said: "India's soft power diplomacy now goes beyond books, culture,

and cinema.[11]His visit to San Jose(2015) he appreciated Indian IT professionals over there this shows his engagement is not limited to business or remittances but also covers innovation, nation-building and cultural diplomacy praising their efforts abroad count India's success at home this reflects a larger rebranding efforts. While delivering speech he has a emotional and a family ties during his Netherland(2017) visit he said that "different coloured passports" cannot change "blood relations" and called every Indian abroad a "diplomat," elevates their position as representatives of India with moral and political responsibilities toward the homeland.[12]The interaction with diasporas highlighted both technology and emotional bonds he appealed Indian-origin members to download the NaMo mobile app calling it an exclusive opportunity to connect with the PM Modi also reframed economic concepts into patriotic aspect redefining FDI as "First Develop India" to show that engagement with India.[13]

The extraordinary welcome during his foreign visit was seen by the massive gathering of overseas in US 2014 New York highlighted by The Economic Times editorial (June 20, 2023) in the Madison Square Garden where nearly 20,000 NRIs gathered showed strong emotional and political bonds between Modi and the diaspora as Modi considered them an essential partners in his broader development-centric strategy and global vision for India. Similar enthusiasm generated in Modi's address to NRIs at Sydney's Qudos Bank Arena in 2023 where Australian Prime Minister Anthony Albanese to describe the event as "bigger than a rock concert.[14]

One of the largest and historic diaspora events in U.S. held in Houston in September 2019 the Howdy, Modi Rally over 50,000 Indian Americans gathered and gaining worldwide attention and popularity. The event was attended by eminent leaders like US President Donald Trump and other senior leader's event was well conducted to boost Modi's popularity among overseas Indians strengthening diaspora trust and symbolize strong India–U.S. relations. To connect with the diaspora Modi spoke in Hindi to create emotional closeness, with chants of "Modi, Modi" echoing through the stadium while presenting himself as humble an ordinary servant of 130 crore Indians. He reassured the diaspora by repeatly saying "everything is fine in India" in nine Indian languages and English and he linked India's global reputation to the achievements of Indian immigrant and celebrated India's diversity, traditions and democratic values. To enhance the travelling connectivity e-visas are introduced and called embassies as "first friend" by Modi. Symbolically Modi held hands with Trump to project closeness echoing his earlier warm ties with Obama. His message to world is explicit about India's proud traditional culture and its diversity which aims to build a strong New India with an emotions, trust (vishwas) to assimilate the diasporas and Modi represents himself as a protector and reformer.[15] The visit to Gulf countries such as Saudi Arabia and the UAE not only enhance India's relations in

economically terms but advanced bilateral relations between the two nations further more with the expansion of India's Haj quota involved high level engagement with Saudi Arabia[16].

Under Narendra Modi leadership (2024-2024) total six edition of Pravasi Bharatiya Divas celebrated. However since with the 13th Pravasi Bharatiya Divas in 2015 it was decided by Government of India to organize the convention once every two years instead of annually because of better and systematic planning for the event while ensuring greater participation of diasporic community worldwide which would be impactful.

Initiatives programmes :

Bharat Ko Janiye (BKJ) Quiz it aims to engage young overseas Indians and foreign nationals with India's heritage, cultural values its civilization and contemporary developments by doing so its strengthen connections and aspirations. By 2024 -2025 total five editions of quiz taken place[17].

Under the flagship of MEA 'Know India Programme' (KIP) launched to connect with the young Indian diasporic population ages between 18-30 with their ancestral homeland .Again its goal is to create a bond which strengthen emotional and cultural ties, showcases India's growth through various fields such as economy, industry, education, science and technology, IT and culture and they provided a platform for youth to connect and to share experiences.[18]

In 2018–19 Pravasi Teerth Darshan Yojana (PTDY) was launched for Persons of Indian Origin (PIOs) aged between 45 and 65 years for the seven Girmitiya countries which includes Fiji, Guyana, Mauritius, South Africa, Suriname, Trinidad & Tobago and Reunion Island. The major purpose of the scheme is to provide an opportunity to old generation of diaspora to reconnect again with its traditional ancestral roots through a sponsored pilgrimage tour across India.[19]

A special institution created by the Government of India Pravasi Bharatiya Kendra (PBK) to fortified its ties with Indian diaspora it acts for them as India's commitment to its global community and provides a strategic platform to use the economic, social and cultural resources. This institution is designed in such way to serves as a mean of knowledge hub and policy making, envisions Gandhi's return, Vajpayee's vision, Singhvi's recommendations, Manmohan Singh's foundation, and Modi's inauguration. Later it renamed Sushma Swaraj Bhawan in honour of the late External Affairs Minister, who was deeply respected for her work with the diaspora.[20]

Welfare Schemes :

The Indian Community Welfare Fund (ICWF) was created in 2009 to help Indian citizens living abroad when they face serious problems. The fund was created for the genuine cases to help its citizens in the situation of stress and to full-fill their financial needs. ICWF has been used in emergencies situations like evacuations from war zones, natural disasters, and other difficult

situations[21].

Madad launched by MEA for making and faster for the people to raise consular grievances rather following a delayed system process of complaint step by step now the complaint through this portal can be directly sent to the concerned Indian Embassy or Consulate abroad. Its has key features includes quicker handling of complaints, better tracking and escalation of unresolved cases and after registering into the portal user can login to see their respective complaints and its history which is being easily available and help the individuals to tackle the situation in crisis.[22]

PRAVASI KAUSHAL VIKAS YOJANA a skill development scheme launched by the Ministry of External Affairs (MEA) and the Ministry of Skill Development & Entrepreneurship (MSDE) and its agencies especially the National Skill Development Corporation (NSDC).signed a Memorandum of Understanding (MoU) aims to train, develop their skill ability for the Indian workers who plans to migrate abroad so their skills could be enhanced and matches the international standards of working to pursue better job opportunities. It's motto is' Go safely, go trained, go with confidence.[23]

Under Pravasi Bharatiya Bima Yojana (PBBY) for Indian emigrant workers aged 18–65 years traveling abroad under the Emigration Check Required (ECR) visa category or professions listed in the Emigration Act, 1983 which provides financial protection against hospitalisation expenses, accidental death, maternity costs, permanent disability, repatriation, and other emergencies while working in ECR countries such as Saudi Arabia, UAE, Kuwait, Oman, Bahrain, Malaysia, Indonesia, Thailand, Iraq, Yemen, and others. In case an Indian worker dies or becomes permanently disabled its certificates are issued by the Indian Embassy or Consulate is directly accepted by insurance companies thus making the process simplier even this policy can be renewed online. Under PBBY insurance claims can be rejected if a worker gives wrong information about their job, employer or a country they are going to also in case of a worker's visa or passport expires during the insurance period and is not renewed.[24]

Digital diplomacy of MEA :

The relevance of digital diplomacy became more strong under Modi's leadership rests on three core pillars accessibility, credibility and authenticity to connect and influence either the nationals or foreigner or diasporas easily and efficiently by using digital platforms such as Twitter, Facebook, Google Hangouts, and online Q&A , through a medium of radio a programme launched Maan ki Baat to connect with the audience while interacting traditionally becomes closed and confidential it allows diplomats to interact openly and communicate about policies. The active digital outreach of Modi can be illustrated through a notable example when Modi visited to China and post a selfie with Li Keqiang on Twitter—an act celebrated by global media as symbolically breaching the "Great Firewall"

and demonstrating the power of digital gestures in diplomacy.[25]

Global Pravasi Rishta Portal launched to enhance the connectivity between India and its global diaspora this digital platform facilitates consular services, provides job opportunities, connects businesses, and fosters cultural ties. The platform created to manage diaspora's needs, queries ensures qualitative engagements with motherland country .Under the Modi government the consular services for the Indian diaspora have been significantly improved by establishing new consulates in key global location of the world and make it easily accessible to the services by the diasporic members such as Overseas Citizen of India (OCI) card and also the online visa applications these services ensures greater connectivity and participation in terms of economically, culturally and socially exchanges between India and their host countries. Expanding digital platforms, welfare schemes, and outreach initiatives can strengthen trust between the diaspora and the Indian state. Regular meetings of the Joint Committee on Consular Affairs and new recognition mechanisms—such as awards for firms supporting bilateral trade reflect an institutional effort to make diaspora engagement more responsive and participatory.[26]

In order to protect the India migrant workers especially in the Gulf countries like Saudi Arabia, United Arab Emirates, Qatar and Kuwait in these countries earlier workers unfortunately fell victim to the fraudulent schemes of agents by the fake promises of jobs ,misled about the salaries and working conditions to stop this BJP government launched e-Migrate system (2015) an another digital platform which made mandatory registration for foreign employers and recruitment agents, along with transparent verification of job contracts which would eliminate pseudo job offers, curbed fraudulent migration companies and strengthened state monitoring, marking a shift from ad-hoc regulation to institutionalized migration governance.[27]

E-Migrate Portal V2.0 (2024) the updated version of this ensures Modi government commitment towards governance, mobility, protecting the dignity for Indian workers abroad. The initiative an expanded form supported the UN Sustainable Development Goals number 10 which focuses on making safe migration which is expressed by Jaishankar. It not only ensures safety measure rather promises to create opportunities that would be beneficial to both India and host country. It full-fills two conditions one it helps the foreign countries to meet their needs for skilled workers and other is to ensures Indian talent gets rewards and supports for their contribution in overseas.[28]

Conclusion :

Modi's outreach to both the west and east for diasporas is designed as to be broad and inclusive extending its relation to the highly skilled professional in the silicon valley to gulf countries worker and his various schemes and policies for diaspora's serves only the purpose of to connect, strengthen

its ties with these communities no matter where they lead their livelihoods and a give an assurance of trust and loyalty this shows that the role of diasporas are not only confined to remittance or for an investment but much bigger of it which involves emotions nationhood feeling and aspirations of millions of people which contributes to innovation, nation-building and cultural diplomacy. The relationship between India and its diaspora, transformed since from the early 1990s ranged from economic value ("dollars and pounds") to a shared emotional and civilizational "bond."

References :

1. Rao, Ashok. *"The Indian Diaspora – Past, Present and Future." America Times*, 17 Mar. 2013, https://www.america-times.com/the-indian-diaspora-past-present-and-future/
2. Pradhan, Ramakrushna, and Atanu Mohapatra. *"India's Diaspora Policy: Evidence of Soft Power Diplomacy under Modi." South Asian Diaspora*, vol. 12, no. 2, 2020, pp. 145–161. Taylor & Francis Online, https://doi.org/10.1080/19438192.2020.1712792.
3. The Indian Diaspora: An Interactive History Timeline." *Adathakkar*, https://adathakkar.com/history-of-indian-diaspora-timeline/
4. Kosar, Mehnaz. *"Role of Diaspora in India's Foreign Policy: A Case Study of Saudi Arabia and the United Arab Emirates (UAE)." International Journal of Sociology and Political Science*, vol. 6, no. 2, 2024, pp. 43–48. *Sociology Journal*, www.sociologyjournal.in.
5. Mishra, Amit Kumar. *"Diaspora, Development and the Indian State." The Round Table*, vol. 105, no. 6, 2016, pp. 701–721. Taylor & Francis Online, https://doi.org/10.1080/00358533.2016.1246859.
6. ebid
7. Ibid
8. Mohan, C. Raja, and Rishika Chauhan. *Modi's Foreign Policy: Focus on the Diaspora.* ISAS Working Paper No. 204, Institute of South Asian Studies, National University of Singapore, 11 Apr. 2015, http://southasiandiaspora.org.
9. Hill, Mark A. *Theorizing State-Diaspora Engagement as a Social Practice: Decentering the Hindu Nation Through Narendra Modi's Diasporic Activism*. 2018. University of Victoria, Master's Thesis.
10. Mazumdar, Arijit. *"India's Soft Power Diplomacy under the Modi Administration: Buddhism, Diaspora and Yoga."* Asian Affairs, vol. 49, no. 3, 2018, pp. 468–491. Taylor & Francis Online, https://doi.org/10.1080/03068374.2018.1487696.
11. Ferdous, Jannatul. "Second Generation Diaspora: Pandemic, Development and Connection."

South Asian Diaspora, vol. 15, no. 2, 2023, pp. 201–215, https://doi.org/10.1080/19438192.2023.2202068

12. Ibid
13. "Do You Want Prime Minister in Your Pocket? PM Modi Asks Indian Diaspora in Netherlands." *India TV News*, 27 June 2017, https://www.indiatvnews.com/news/world-do-you-want-prime-minister-in-your-pocket-pm-modi-asks-indian-diaspora-in-netherlands-388403.
14. Singh, Sandeep Kumar, and Manish Debhade. "Emergence of New India under Modi Era: Changing Foreign Policy Dynamics." *Himachal Pradesh University Journal*, vol. 11, no. 1, June 2023, pp. 24–37. ISSN 2277-1425, e-ISSN 2277-1433.
15. Tripathi, Siddharth, and Bidisha Biswas. "'Everything Is Fine in India': Crafting Emotional Proximity among the Indian Diasporas." Politics, Religion & Ideology, vol. 25, no. 4, 2024, pp. 587–604. Taylor & Francis Online, https://doi.org/10.1080/21567689.2024.2419675.
16. Ibid
17. Ministry of External Affairs, Government of India. *Bharat Ko Janiye Online Quiz (BKJ)*. MEA, https://www.mea.gov.in/bkj.htm
18. Consulate General of India, Sydney. *"Know India Programme (KIP)."* Consulate General of India, Sydney, https://www.cgisydney.gov.in/pages/MTgx
19. Ministry of External Affairs, Government of India. *"Pravasi Teerth Darshan Yojana (PTDY)."* Ministry of External Affairs, Government of India, https://www.mea.gov.in/pravasi-teerth-darshan-yojana.htm
20. Kumari, Nitika. "Pravasi Bharatiya Kendra: India's Engagement with the Diaspora in 2016." *IMPRI Impact and Policy Research Institute*, 2016, www.impriindia.com/insights/pravasi-kendra-indias-engagement-2016/?utm_
21. Ministry of External Affairs, Government of India. *"Indian Community Welfare Fund (ICWF)."* Ministry of External Affairs, Government of India, https://www.mea.gov.in/icwf.htm.
22. *Embassy of India, Panama. "MADAD – Consular Grievances Redressal System." Embassy of India, Panama, Government of India, indianembassypanama.gov.in/eoipa_pages/MzEy. Accessed 11 Feb. 2026.*
23. Ministry of External Affairs, Government of India. *Question No. 81: Launching of Pravasi Kaushal Vikas Yojana*. *Rajya Sabha Q & A*, 9 Feb. 2017, *MEA: Ministry of External Affairs*, Government of India, https://www.mea.gov.in/rajya-sabha.htm?dtl/28038/#contentStart. Accessed 11 Feb. 2026.
24. HDFC ERGO Team. *"Pravasi Bharatiya Bima Yojana: Eligibility, Coverage & Benefits."*

HDFC ERGO Blogs, 13 June 2024, www.hdfcergo.com/blogs/health-insurance/pravasi-bharatiya-bima-yojana. Accessed 11 Feb. 2026

25. Chaubey, Dr. Gajendra, and Dr. Sudhanshu Chaubey. *"Redefining Diaspora Relations: Analysing Modi's Key Policies and Events in Empowering the Indian Diaspora." Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal*, vol. 7, no. 6, Nov.–Dec. 2024, pp. 28–36. GISRRJ, www.gisrrj.com.
26. Ministry of External Affairs, Government of India. *"Question No. 37: Migration to ECR Countries." Lok Sabha – Parliament Q&A*, 21 July 2023, www.mea.gov.in/lok-sabha.htm?
27. Government of India. *Question No. 2179: Impact of the e-Migrate Portal on Emigration Processes.* Ministry of External Affairs, Lok Sabha, 1 Aug. 2025,https://www.mea.gov.in/lok-sabha.htm?dtl/39916/QUESTION+NO+2179+IMPACT+OF+THE+EMIGRATE+PORTAL+ON+EMIGRATION+PROCESSES.
28. Jaishankar, Subrahmanyam. *Address by External Affairs Minister Dr. S. Jaishankar at the Launch of eMigrate Portal and Mobile App V2.0.* Ministry of External Affairs, Government of India, 14 Oct. 2024, https://www.mea.gov.in/Speeches-Statements.htm?dtl%2F38416%2FAddress+by+External+Affairs+Minister+Dr+S+Jaishankar+at+the+Launch+of+eMigrate+Portal+and+Mobile+App+V20=&utm_

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 127-133
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Antyodaya and Inclusive Growth : Deendayal Upadhyaya's Vision of Welfare Economics

Hemant Sharma
Ph.D. Research Scholar. HPU.

Abstract :

This paper examines the economic philosophy of Pandit Deendayal Upadhyaya, specifically the concept of Antyodaya (the upliftment of the last person), as a framework for inclusive growth in the modern Indian context. Unlike Western models of welfare that often focus on the redistribution of surplus, Upadhyaya's Integral Humanism suggests a bottom-up approach where the individual's dignity and the community's self-reliance are central. This study explores the theoretical foundations of this vision and its practical application in contemporary socio-economic policies, arguing that Antyodaya provides a culturally grounded alternative to both purely capitalistic and socialistic welfare models.

- **Introduction :**

In the contemporary global economic landscape, the pursuit of "Inclusive Growth" has transitioned from a peripheral concern to a core objective for developing and developed nations alike. Despite decades of rapid industrialization and the expansion of neoliberal markets, the "trickle-down" theory—which posits that wealth generated at the top will naturally benefit the marginalized—has often resulted in widening wealth gaps and social stratification. In the Indian context, the search for a development model that is both culturally rooted and economically efficient leads to the visionary philosophy of Pandit Deendayal Upadhyaya. At the center of his economic thought lies Antyodaya, a term derived from the Sanskrit words Antya (the last) and Udaya (rise or upliftment), signifying that the true measure of a nation's progress is the welfare of its most vulnerable citizen. Upadhyaya's vision was not merely a reaction to post-independence poverty but a fundamental critique of the dominant global ideologies of the 20th century. He argued that both individualistic Capitalism and collectivistic Socialism were rooted in a purely materialist Western worldview that failed to account

for the holistic nature of the human spirit. While Capitalism risks reducing humans to mere consumers and Socialism risks reducing them to cogs in a state machine, Upadhyaya proposed Integral Humanism (Ekatma Manav-vad) as a third path. This philosophy views the individual not as an isolated unit, but as an integral part of a nested hierarchy consisting of the family, society, nation, and humanity.

The economic manifestation of Integral Humanism is the principle of Antyodaya. Unlike traditional welfare states that often view the poor as passive recipients of state largesse, the Antyodaya approach emphasizes empowerment and the restoration of dignity. It advocates for a "bottom-up" economic architecture where planning begins with the needs of the "last person" (Antyim Vyakti). This involves a radical shift toward decentralization, the promotion of labor-intensive industries, and the democratization of economic opportunities. In the current era of globalization and rapid technological advancement, the relevance of Antyodaya has surged. As India strives to become a global economic power, the challenge remains to ensure that growth is not just statistical but substantive.

- **Integral Humanism :**

The vision of Antyodaya is rooted in Integral Humanism (Ekatma Manav-vad), a philosophy proposed by Deendayal Upadhyaya in 1965 as an alternative to fragmented Western ideologies. It seeks to harmonize material progress with spiritual and social well-being. Integral Humanism rejects the Western premise of perpetual conflict (man vs. nature or individual vs. state). Instead, it posits an organic unity where the individual, family, society, and nation are interconnected. In this "nested hierarchy," progress in one sphere must not come at the expense of another; for instance, economic growth that destroys the environment is considered self-destructive and "non-integral."

- **The Purushartha :**

Upadhyaya utilized the four-fold aims of human existence—Dharma (Ethics), Artha (Wealth), Kama (Desire), and Moksha (Liberation)—as a blueprint for economics. The central tenet is that Artha must be governed by Dharma. This implies that profit and GDP are not ends in themselves but must be constrained by ethical considerations and social justice to protect the vulnerable.

- **Antyodaya as a Welfare Model :**

While modern welfare states often rely on "top-down" redistribution or the "trickle-down" effect, Antyodaya operates as a "bottom-up" economic model. It prioritizes the "last person" (Antyim Vyakti) not as a passive recipient of charity, but as the primary focus of economic production and social investment. In standard welfare economics, the "Pareto Efficiency" suggests that a system is efficient if no one can be made better off without making someone else worse off. Antyodaya challenges this by introducing a moral and functional priority. It argues that resources and policy

interventions must first be directed toward the most marginalized. Only when the "last person" is uplifted can the growth of the nation be considered inclusive and sustainable.

3. Decentralization and Local Self-Reliance :

A core pillar of the Antyodaya model is the decentralization of economic power. Upadhyaya believed that centralized industrialization leads to urbanization and the displacement of the poor.

- **Gram Swaraj (Village Self-Rule) :** The model envisions the village as a self-sufficient economic unit.
- **Labor-Intensive Production :** In a labor-surplus economy like India, the model favors "mass production by the masses" over highly automated, capital-intensive industries. This ensures that technology serves human employment rather than replacing it.

For Upadhyaya, political democracy is incomplete without Economic Democracy. This involves:

- **The Right to Work :** Every individual should have the opportunity to earn a livelihood with dignity.
- **Universal Access :** Essential resources like food, clothing, and housing must be accessible to all, regardless of market fluctuations.
- **Ownership Diversification :** Avoiding the concentration of wealth in a few hands (Capitalism) or in the hands of the State (Socialism), instead promoting small-scale ownership and cooperatives.

The Antyodaya model rejects the idea of "value-neutral" economics. It suggests that economic activities must be sustainable and ethically sound. This includes Environmental Stewardship, where nature is viewed as a source to be "milked" for necessity, rather than "plundered" for greed. By linking economic well-being with ethical living, the model aims for a stable social order where poverty is eliminated without creating a culture of hyper-consumerism.

4. Inclusive Growth in the Modern Era :

In the contemporary globalized economy, "Inclusive Growth" is defined by the OECD and World Bank as growth that creates opportunities for all segments of the population and distributes the dividends of increased prosperity fairly. When viewed through the lens of Antyodaya, this concept moves from a statistical target to a human-centric imperative. The modern application of Upadhyaya's vision is visible in the structural shift from general poverty alleviation to targeted, last-mile empowerment. Modern inclusive growth under the Antyodaya framework prioritizes "Capacity Building." The logic is that providing aid only solves temporary hunger, but providing skills ensures permanent dignity.

- **Deendayal Antyodaya Yojana (DAY) :**

Current national missions (NRLM and NULM) embody this by organizing the poor into Self-Help Groups (SHGs). This creates a grassroots institutional platform that allows the "last person" to access global markets and modern financial tools.

4.1 Financial Inclusion as Economic Democracy :

A critical component of modern inclusive growth is ensuring that the "last person" is not excluded from the banking system.

- **The Jan Dhan-Aadhaar-Mobile :** This serves as a technological manifestation of Antyodaya. By digitizing the economy, the state ensures that welfare benefits reach the intended recipient without middleman leakage, upholding the "Integral" principle of transparency and direct justice.

In the 21st century, inclusion is as much about digital access as it is about food security.

- Extending high-speed internet and all-weather roads to the remotest villages aligns with the goal of ending geographical marginalization. When a tribal artisan can sell products globally via an e-commerce platform, the "last person" is no longer at the periphery but at the center of the economic network.

Modern inclusive growth acknowledges that the "last person" often faces multi-dimensional poverty.

- **Universal Healthcare and Education :** Schemes that provide health insurance to the bottom 40% of the population represent the "Dharma" (ethical duty) of the state. By protecting the poor from catastrophic health expenditures, the system ensures that one medical emergency does not push a family back into generational poverty.

In the modern era, Antyodaya transforms the marginalized from "beneficiaries" into "partners" in national development. It suggests that India's competitive advantage lies not in its elite capital, but in the untapped potential of its vast human resource at the bottom of the pyramid.

5. Antyodaya vs. Western Models :

To fully grasp the distinctiveness of Upadhyaya's vision, it must be contrasted with the dominant Western paradigms of the 20th century: the Capitalist Market Model and the Socialist Welfare State. Western economic thought is primarily rooted in a materialist and individualist worldview, where the "Economic Man" acts as a rational agent seeking to maximize personal utility. In this context, welfare is often treated as a peripheral corrective measure—a "safety net" designed to catch those who fall through the cracks of a competitive market. Antyodaya, however, rejects this fragmented approach, positioning the welfare of the "last person" not as a secondary correction, but as the primary and sacred purpose of the entire economic system, guided by the ethical constraints of Dharma. The

mechanics of wealth distribution further highlight these differences. The Capitalist model traditionally relies on "trickle-down" economics, if growth at the industrial apex will eventually permeate the lower strata of society. Conversely, the Socialist model focuses on state-mandated redistribution to achieve equality, often centralizing power and stifling local initiative. Antyodaya offers a third way: a "bottom-up" model that bypasses the wait for trickle-down effects by pumping resources, skills, and infrastructure directly into the "last mile." It prioritizes "mass production by the masses" over capital-intensive automation, ensuring that the marginalized are transformed from passive recipients of state aid into active, self-reliant owners of their economic destiny.

Finally, when placed alongside contemporary global theories, Antyodaya shares similarities with modern frameworks but maintains a unique cultural depth. While it aligns with John Rawls' "Difference Principle"—which argues that inequalities are only justified if they benefit the least advantaged—it goes further by making the least advantaged the literal starting point of all planning. It also mirrors Amartya Sen's "Capabilities Approach" regarding human dignity and agency, yet it emphasizes that this agency is best realized within the harmonious, organic structures of the family and community rather than as isolated individuals. Ultimately, while Western models often create a "Nanny State" that fosters dependency, Upadhyaya's vision seeks a decentralized "Economic Democracy" that restores the "Swa" (selfhood) and dignity of the individual within a self-sustaining social collective.

6. Challenges and Critiques :

While the Antyodaya model provides a robust ethical and social framework for development, its practical application in a 21st-century globalized economy faces significant structural and systemic hurdles. Critics and scholars often point to the tension between traditional decentralization and the demands of modern industrial efficiency. One of the primary challenges is the reconciliation of Local Self-Reliance (Swadeshi) with the realities of global trade. Upadhyaya's model emphasizes village-level production and small-scale industries. However, in a world dominated by global supply chains and economies of scale, local units often struggle to compete with the low costs of mass-produced international goods. Critics argue that a strict adherence to decentralized production might lead to technological stagnation or economic isolation if not integrated carefully with modern trade practices.

- **Technological Displacement vs. "Har Hath Ko Kaam" :**

The Antyodaya principle of "work for every hand" prioritizes labor-intensive methods to ensure full employment. In the modern era, the rapid rise of Artificial Intelligence (AI) and Automation presents a fundamental critique. While Upadhyaya viewed machines as "supplements" to human labor,

modern technology is increasingly designed to "replace" it. The challenge lies in adopting productivity-enhancing technologies without violating the core tenet of providing dignified livelihood to the "last person."

- **Administrative and Institutional "Leakage" :**

A recurring critique of bottom-up welfare models is the "last-mile delivery" problem. Historically, even the most well-intentioned Antyodaya schemes have suffered from bureaucratic corruption and institutional inefficiencies.

- **Identification of the "Last Person" :** Defining exactly who constitutes the Antyim Vyakti in a multi-dimensional poverty landscape is complex.
- **The Middleman Problem :** Despite digital interventions, local power structures sometimes capture resources intended for the marginalized, highlighting a gap between the "Integral" theory and the ground reality of social hierarchy.

6.1 Resource Mobilization and Scale :

Critics of decentralized models often question the ability of small-scale units to generate the massive capital required for modern infrastructure, such as national grids, aerospace, or advanced healthcare. While Antyodaya excels at grassroots empowerment, some argue it requires a clearer roadmap for how these "integral units" contribute to high-capital, large-scale national requirements without reverting to the very centralism Upadhyaya critiqued. The model assumes a high degree of community cohesion and a preference for village life. However, modern social trends show a massive drive toward urbanization and a shift in aspirations among the youth in rural areas. Re-imagining Antyodaya for a "rurban" (rural-urban) society—where the "last person" may be an urban migrant rather than a village artisan—remains a critical area for contemporary research and policy evolution. These challenges do not necessarily invalidate the vision; rather, they suggest that the Antyodaya framework must be "dynamic." To remain relevant, it must evolve from a 1960s agrarian context to a 21st-century digital context, ensuring that "Integralism" accounts for both local dignity and global connectivity.

7. Conclusion :

Deendayal Upadhyaya's Antyodaya offers a vital philosophical alternative to the standard materialist models of development. By positioning the "last person" as the focal point of economic policy, it provides a moral compass for inclusive growth. While structural challenges regarding globalization and technology exist, the core principles of decentralization, ethical wealth (Dharma), and human dignity remain essential for any society seeking to achieve true social justice. The future of Indian welfare economics lies in the successful synthesis of these ancient integral values with

modern technological efficiency.

References :

- Upadhyaya, Deendayal. *Integral Humanism*. Bharatiya Itihas Sankalan Samiti, 1965.
- Upadhyaya, Deendayal. *The Two Plans: Promises, Performance, Prospects*. Rashtradharma Prakashan, 1958.
- Upadhyaya, Deendayal. *Deendayal Upadhyaya's Roadmap to the Last Man: Antyodaya*. Edited by B. K. Chaturvedi, Prabhat Prakashan, 2017.
- Nene, V. V. *Pandit Deendayal Upadhyaya: Ideology and Perception - Part 1: An Inquest*. Suruchi Prakashan, 1991.
- Maheshwari, Shriram. *Deendayal Upadhyaya: A Great Dedicated Soul*. Reliance Publishing House, 2004.
- Kelkar, B. K. *Pandit Deendayal Upadhyaya: Ideology and Perception - Part 2: Political Thought*. Suruchi Prakashan, 1991.
- Srivastava, C. P. *Economic Philosophy of Deendayal Upadhyaya*. Kitab Mahal, 2002.
- Prasad, Anirudh. *Antyodaya of Deendayal Upadhyaya and Amartya Sen's Economics*. Deep & Deep Publications, 2001.
- Jain, S. P. *The Economic Thought of Deendayal Upadhyaya*. Janaki Prakashan, 1994.
- Paranjape, Makarand. *Making India: Colonialism, National Culture, and the Afterlife of Indian English*. Amaryllis, 2013. (Discusses the cultural roots of Indian political thought).
- Sharma, R. K. *Philosophy of Integral Humanism*. Atlantic Publishers, 2005.
- Goel, Sita Ram. *Perversions of India's Political Parlance*. Voice of India, 1995. (Contextualizes the era in which Upadhyaya wrote).
- Sen, Amartya. *Development as Freedom*. Oxford University Press, 1999. (Essential for the comparative analysis of capabilities).
- Rawls, John. *A Theory of Justice*. Harvard University Press, 1971. (Essential for comparative analysis of the "last person").
- Bhishikar, C. P. *Pandit Deendayal Upadhyaya: A Profile*. Suruchi Prakashan, 1988.
- Chaturvedi, B. K., editor. *The Philosophy of Deendayal Upadhyaya*. Prabhat Prakashan, 2018.
- Gupta, Das. *Deendayal Upadhyaya and the Philosophy of Integral Humanism*. Research and Development Council, 2012.
- Government of India. *Ministry of Rural Development: Guidelines for Deendayal Antyodaya Yojana (DAY-NRLM)*. Government Press, 2015.
- NITI Aayog. *Strategy for New India @ 75*. Government of India, 2018. (Discusses modern applications of inclusive growth).
- Mishra, S. K. "The Economic Vision of Deendayal Upadhyaya." *Indian Journal of Political Science*, vol. 68, no. 4, 2007, pp. 785-802.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 134–139
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में उदारवादियों की भूमिका : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. नागेश्वर कुमार
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग,
बी.एम.डी. कॉलेज दयालपुर, वैशाली (बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर)

सारांश :

1857 ई० का स्वतंत्रता संग्राम अंग्रेजों के खिलाफ एक सामूहिक और अखिल भारतीय विद्रोह था। हालांकि, औपनिवेशिक इतिहासकारों ने इसे केवल 'सिपाही विद्रोह' कहकर खारिज करने का प्रयास किया। लेकिन, वीर सावरकर ने अपने महान कार्य के माध्यम से 'स्वतंत्रता संग्राम' के रूप में इस आंदोलन की प्रतिष्ठा को बचा लिया, क्योंकि इसमें विदेशी सत्ता के खिलाफ एक बड़े जन–आंदोलन के सभी तत्व मौजूद थे। बहादुर सिपाहियों ने वास्तव में शुरूआत में आग प्रज्वलित की, जिसे आम लोगों ने पूरे देश में फैला दिया। यह बात अलग है कि सरकार को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को स्वीकार करने और औपचारिक रूप से इसकी घोषणा करने में थोड़ा समय लगा। वर्ष 2007 में, इसकी 150वीं वर्षगांठ पर, सरकार ने इसे 'स्वतंत्रता का पहला युद्ध' घोषित किया। हालांकि, सावरकर ने कभी भी यह दावा नहीं किया कि यह 'स्वतंत्रता का पहला युद्ध' था। यह एक गलत दावा था। क्योंकि, हम जानते हैं कि जब से विदेशी ताकतों ने हमारी धरती पर पैर रखा और भारत को गुलाम बनाने का प्रयास किया, तभी से भारतीय अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ रहे थे।

1885 ई० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना एक सोची–समझी रणनीति के तहत बड़ी चतुराईपूर्ण ढंग से की गयी। कांग्रेस के माध्यम से प्रारंभिक दौर के राष्ट्रवादी नेता अपनी बातों को ब्रिटिश सरकार से वैधानिक ढंग से मनवाना चाहते थे। लेकिन वे यह नहीं चाहते थे कि ब्रिटिश सरकार उनके तथा उनके संगठन को कोपभाजन का शिकार बना लें। इस प्रकार, उदारवादी विचारों द्वारा अपनी मांगों को ब्रिटिश सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने वाले राष्ट्रवादियों को उदारवादी नेता कहा जाता था। इन उदारवादियों का कार्यकाल 1885 ई०–1905 ई० तक माना जाता है। इस युग में दादा भाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता, दीनशावाला, व्योमेश चंद्र

बनर्जी तथा सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे नेता कांग्रेस की राजनीति पर छाये हुए थे और वे लोग उदारवादी और परिमिति राजनीति में विश्वास करते थे। ये लोग भारतीयों के लिए धर्म और जाति के पक्षपात का अभाव, मानव की समानता कानून के सामने बराबरी, नागरिक स्वतंत्रताओं का प्रसार और प्रतिनिधि संस्थाओं के विकास की इच्छा करते थे। उदारवादी नेता क्रमिक और संवैधानिक नीतियों में विश्वास करते थे।

मुख्य शब्द :

सिपाही विद्रोह, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, राष्ट्रवाद, उदारवाद।

परिचर्चा :

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विकास का सबसे महत्वपूर्ण पहलू था– भारतीय जनता में एकता की भावना लाना। यह स्वाभाविक है कि उस समय के नेता इस विचार को भारतीय जनता में फैलाना चाहते थे। उनके प्रचार के फलस्वरूप भारत में बुद्धिजीवी वर्ग में राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा हुई। राष्ट्रीय नेताओं ने भारत में एकता की भावना विकसित करने का हरसंभव प्रयास किया। वे जानते थे कि अलग–अलग धर्मों को मानने वाले को मिलाकर ही उन्हें एक सूत्र में बांधा जा सकता है। इसी से कांग्रेस के नेताओं ने कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहा जिसके लिए सभी वर्ग और सम्प्रदाय तैयार न हो। इस प्रकार, प्रचार के परिणामस्वरूप पढ़े–लिखे भारतीयों में एकता की भावना पैदा हुई। देश के हर भाग में समय–समय पर कांग्रेस के अधिवेशन किये जाते थे ताकि सम्पूर्ण देश के लोग इन आन्दोलन के माध्यम से राष्ट्रीय एकता के प्रति जागृत हों।

उदारवादियों की नियमबद्ध प्रगति की आस्था थी। वे विकास के धीमी गति में विश्वास करते थे और क्रांतिकारी परिवर्तनों के विरुद्ध ब्रिटिश राष्ट्र के सहयोग और सहायता से भारत के क्रमिक विकास में विश्वास करने वाले इन उदारवादियों ने क्रांतिकारी एवं आकस्मिक परिवर्तन और इसकी कार्यप्रणाली को स्वीकार नहीं किया और अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इन्होंने वैधानिक आन्दोलन का रास्ता अपनाया। इनका ख्याल था कि इनके जरिये वे एक तरफ तो जनजागरण और जन शिक्षा का विकास कर सकेंगे और दूसरी तरफ अंग्रेजों को यह समझा सकेंगे कि भारतीय जनता की मांगें न्यायसंगत हैं और इनकी पूर्ति प्रशासन का जनतांत्रिक कर्तव्य है।

केवल तीन बातों की मनाही थी– विद्रोही, विदेशी आक्रमण की सहायता से उसे प्रश्रय देना तथा अपराध का रास्ता। राजनीति के बारे में पनपी अनेक गलत धारणाओं के बावजूद भारतीय उदारवादी भारत में आधुनिक बुर्जुआ समाज के हितों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। इस प्रकार, उनकी भूमिका प्रशंसनीय थी। उदारवादी नेताओं की एक महत्वपूर्ण देन यह भी थी कि उन्होंने आधुनिक यूरोप की समृद्ध लोकतांत्रिक एवं वैज्ञानिक संस्कृति का भारत में प्रचार–प्रसार का समर्थन किया। उन्होंने ब्रिटिश काल के पहले की मध्यकालीन, पुरानी एवं निरंकुश सामाजिक संरचना के खिलाफ जम कर संघर्ष किया। इन्होंने सामाजिक समानता स्वतंत्रता

पर अधिक जोर दिया। यह बात महत्वपूर्ण है कि गोखले ने न सिर्फ सिविल मैरेज जैसे सामाजिक सुधारों का स्वागत किया, बल्कि उन्होंने इस दिशा में सरकार की भूमिका पर भी जोर दिया।

उदारवादियों का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह रहा है कि इन्होंने साम्राज्यवाद के आर्थिक पहलुओं की कड़ी आलोचना कर लोगों में आर्थिक चेतना जागृत की। भारत की आर्थिक समस्याओं के मामले में इनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण था। इन उदारवादियों के आर्थिक प्रवक्ता दादा भाई नौरोजी, गोपाल कृष्ण गोखले और रमेश चंद्र दत्त थे। उन्होंने अंग्रेजों द्वारा भारत के आर्थिक शोषण को भारत की बढ़ती हुई गरीबी का कारण माना। इनका मानना था कि भारत से सम्पत्ति और पूंजी की निकासी की जा रही है। उन्होंने जनता के सम्मुख यह सच्चाई प्रकट की और बताया कि भौतिक दृष्टि से ब्रिटिश शासन भारत के लिए सर्वथा हानिकारक है।

उदारवादियों के अनुसार भारत के तीव्र औधोगिक में प्रमुख बन्धक तत्व थे– स्वदेशी उद्योगों का ह्रास पूंजी की कमी, तकनीकी शिक्षा का अभाव, भारतीयों में उद्दम की भावना की उपेक्षा और मुक्त व्यापार की नीति। इन कठिनाईयों पर काबू पाने में सरकार की सहायता और सुरक्षा का पूर्णतः अभाव था। इन राष्ट्रवादियों ने परम्परागत हस्तशिल्प उद्योगों के विनाश और आधुनिक उद्योगों के विकास को बाधित करने वाली सरकारी नीतियों की निंदा की। उन्होंने भारत में रेलों, उधोगों और चाय–कॉफी के बागानों में लगायें जाने वाली विदेशी पूंजी के आयात का इस आधार पर विरोध किया कि भारतीय पूंजीपति इससे दब जायेंगे और भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसका बुरा असर पड़ेगा।

1905 ई० तक भारत के राष्ट्रीय आंदोलन पर उन लोगों का वर्चस्व था जिनको प्रायः नरमपंथी राष्ट्रवादी कहा जाता है। कानून की सीमा में रहकर सांविधानिक आंदोलन और धीरे–धीरे व्यवस्थित तरीके से राजनीतिक प्रगति इन शब्दों में नरमपंथियों की राजनीतिक कार्यपद्धति को संक्षेप में रखा जा सकता है। उनका विश्वास था कि अगर जनमत को उभारा और संगठित किया जाए और प्रार्थना पत्रों, सभाओं, प्रस्तावों और भाषणों के द्वारा अधिकारियों तक जनता की मांगों को पहुंचाया जाए तो वे धीरे–धीरे एक–एक करके इन मांगों को पूरा करेंगे। इसलिए उनके राजनीतिक कार्य की दो दिशाएं थीं। पहला, भारत की जनता में राजनीतिक चेतना और राष्ट्रीय भावना जगाने के लिए एक प्रतिस्पर्धी जनमत तैयार करना और जनता को राजनीतिक सवालों पर शिक्षित और एकताबद्ध करना। राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रस्ताव और प्रार्थना पत्र भी मूलतः इसी लक्ष्य द्वारा निर्देशित थे। हालांकि देखने में तो उनके स्मरणपत्र और प्रार्थना पत्र सरकार को संबोधित थे, लेकिन उनका असली उद्देश्य भारतीय जनता को शिक्षित करना था। उदाहरण के लिए जब 1891 ई० में युवक गोखले ने पूना सार्वजनिक सभा द्वारा सावधानी के साथ तैयार करके भेजे गए एक स्मरणपत्र के बाद सरकार द्वारा दिए गए दो पंक्तियों के उत्तर पर अपनी निराशा व्यक्त की तो न्यायिस रानाडे ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की :

''आप अपने देश के इतिहास में हमारे स्थान को नहीं समझते। ये स्मरण पत्र कहने को सरकार के नाम

से संबोधित हैं। वास्तव में ये जनता को संबोधित हैं ताकि वह जान सके कि इन विषयों पर कैसे विचार करना चाहिए। यह काम किसी परिणाम की आशा किए बिना अभी अनेक वर्षों तक चलाया जाना चाहिए, क्योंकि इस तरह की राजनीति इस देश के लिए बिल्कुल नई वस्तु है।"

दूसरे, आरंभिक राष्ट्रवादी ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जनमत को प्रभावित करना चाहते थे ताकि जिस प्रकार के सुधार राष्ट्रवादी द्वारा सुझाए गए थे उन्हें लागू किया जाए। नरमपंथी राष्ट्रवादियों का विश्वास था कि ब्रिटिश जनता और संसद भारत के साथ न्याय तो करना चाहती थी, लेकिन उन्हें यहां की वास्तविक स्थिति की जानकारी नहीं थी। इसलिए भारतीय जनमत को शिक्षित करने के साथ–साथ नरमपंथी राष्ट्रवादी ब्रिटिश जनमत को शिक्षित करने के प्रयास भी कर रहे थे। इस उद्देश्य से उन्होंने ब्रिटेन में जमकर प्रचार कार्य किया। भारतीय पक्ष को सामने रखने के लिए प्रमुख भारतीयों के दल ब्रिटेन भेजे गए। 1889 ई० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की एक ब्रिटिश समिति बनाई गई। इस समिति ने 1890 ई० में इंडिया नामक एक पत्रिका भी निकालनी आरंभ की। दादाभाई नौरोजी ने अपने जीवन और आय का एक बड़ा हिस्सा इंग्लैंड में रहकर वहां की जनता में भारत की मांगों का प्रचार करने में लगा दिया।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के अध्ययनकर्ता कभी–कभी भ्रम में पड़ जाते हैं, जब वे पाते हैं कि प्रमुख भारतीय नेता अंग्रेजों के प्रति वफादारी की बड़ी–बड़ी कसमें खाते थे। इन कसमों का अर्थ हर्गिज यह नहीं है कि वे सच्चे देशभक्त नहीं थे या वे कायर लोग थे। उनका दिल से विश्वास था कि ब्रिटेन के साथ भारत का राजनीतिक संबंध बने रहना इतिहास के उस चरण में भारत के हित में था। इसलिए उनकी योजना अंग्रेजों को भगाने को नहीं बल्कि ब्रिटिश शासन का रूपांतरण करके उसे राष्ट्रीय शासन के समान बनाने की थी। बाद में जब उन्होंने ब्रिटिश शासन की बुराइयों को और सुधार की राष्ट्रवादी मांगों को स्वीकार करने में सरकार की असफलता को समझा तो उनमें से कई ने ब्रिटिश शासन के प्रति वफादारी की कसम खाना बंद करके भारत के लिए स्वशासन की मांग उठानी शुरू कर दी। इसके अलावा उनमें से कई केवल इसलिए नरमपंथी थे क्योंकि वे समझते थे कि विदेशी शासकों को खुलकर चुनौती देने का समय अभी नहीं आया था।

1885 ई० से 1905 ई० तक भारतीय उदारवादियों के नेतृत्व में कांग्रेस ने प्रशासनिक सुधार के लिए संघर्ष किया और कई सुझाव सामने रखे। जैसे– कार्यकारिणी और न्याय व्यवस्था का पार्थक्य, जन सेवाओं में बराबरी की शर्तों पर नियुक्ति और बाद में इन सेवाओं का भारतीयकरण, आमर्स एक्ट को हटाना, भारत से बाहर धन जाने की प्रक्रिया पर रोक, क्योंकि इससे लोग बड़ी तादाद में गरीब हो रहे थे और सेना संबंधी खर्चों में कमी हो रही थी।

पाश्चात्य आधुनिक शिक्षा के प्रभाव के कारण प्रारंभिक राष्ट्रवादी आधुनिक नागरिक अधिकारों, जैसे– भाषण और प्रेस की आजादी, संगठन बनाने की स्वतंत्रता आदि के प्रति काफी आकर्षित थे। उदारवादियों को

यह विचार था कि भारत में अंततः एक स्वशासी सरकार की मांग की दिशा में कदम बढ़ाना चाहिए, किन्तु इस दिशा में एक–एक कदम चलने का सुझाव दिया गया। प्रारंभ में उन्होंने विधान परिषदों का विस्तार और विभिन्न सुधारों के माध्यम से भारतीय जनता को सरकार में अधिक हिस्सा देने की मांग की। राष्ट्रवादियों ने विधान परिषदों के अधिकारों में वृद्धि की मांग की, ताकि बजट पर बहस की जा सके और प्रशासन की समालोचना की जा सके। उनकी सबसे बड़ी मांग थी– जनता के प्रतिनिधियों को परिषद का सदस्य बनाया जाये। बढ़ते दबाव के कारण 1892 ई० में भारतीय विधान परिषद अधिनियम द्वारा गैर–सरकारी सदस्यों की संख्या में वृद्धि की गयी, लेकिन उन्हें केवल बजट पर बोलने का ही अधिकार मिला, उस पर मत देने का अधिकार नहीं।

समय बितने के साथ उनकी मांग धीरे–धीरे बढ़ती गयी। वे आधुनिक राजनीतिक शिक्षा द्वारा जनचेतना उत्पन्न करना चाहते थे। उन्होंने जो प्रस्ताव पास किये या ज्ञापन भेजे, वे मध्यवर्गीय हितों का अधिक प्रतिनिधित्व करते थे। समाचार–पत्रों के माध्यम से उदारवादियों ने सरकारी नीतियों की आलोचना की। उन्होंने सरकार को तरह–तरह की चेतावनी देते हुए जनता की मांगे उनके सामने पेश की।

निष्कर्ष :

राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान उदारवादियों की भूमिका सराहनीय थी। लेकिन राष्ट्रीय आंदोलन के आलोचकों ने इसे अनमने ढंग से किया गया कार्य कह कर इसकी हंसी उड़ायी। किन्तु, ऐतिहासिक रूप से इस चरण का अध्ययन करते हुए कहा जा सकता है कि उस समय कि परिस्थितियां और विचारधाराओं में उदारवादियों नेताओं ने अपने युग की प्रगतिशील शक्तियों का प्रतिनिधित्व किया। उन्होंने भारतीय राजनीति में निर्णायक परिवर्तन किये। अनेक असफलताओं के बावजूद प्रारंभिक राष्ट्रवादियों ने राष्ट्रीय आंदोलन की सुदृढ़ नींव डाली और ऐसी मांगे रखीं, जिनपर चलकर आजादी प्राप्त की जा सके।

संदर्भ ग्रंथ :

1. शुक्ल, रामलखन, आधुनिक भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, प्रथम संस्करण वर्ष 1987.
2. बंधोपाध्याय, शेखर, प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद आधुनिक भारत का इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण वर्ष 2006.
3. ग्रोवर, बी एल, आधुनिक भारत का इतिहास, एस चन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण वर्ष 1981.
4. अहीर, राजीव, आधुनिक भारत का इतिहास, स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा. लि., नई दिल्ली, प्रथम संस्करण वर्ष 1999.
5. वर्मा, सुरेश, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष, नई दिल्ली, वर्ष 2001.

6. कुमार, अजय, बिहार में स्वतंत्रता संग्राम पुरुष और महिला दृष्टि, पटना, वर्ष 2002.
7. एक आत्मकथा : महात्मा गांधी, एन ऑटोबायोग्राफी, द स्टोरी ऑफ माई एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रुथ, प्रकाश बुक्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, वर्ष 2021.
8. प्रसाद, चन्द्रदेव, गांधी–दर्शन, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लि., नई दिल्ली, वर्ष 2014.
9. मिश्र, सुनील, समाजवादी आंदोलन के दस्तावेज, नई दिल्ली, वर्ष 1977.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 140–147
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

उत्तर प्रदेश में विमुक्त जनजाति के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था

डॉ० सौम्या शंकर, असिस्टेंट प्रोफेसर
मधु मिश्रा, शोध छात्रा
समाजशास्त्र विभाग, डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुर्नवास विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ0प्र0) भारत।

सारांश :

यह शोध उत्तर प्रदेश की विमुक्त जातियों के बच्चों की शिक्षा पर की गयी एक व्यावस्थित समीक्षा है। यह विमुक्त जनजातियों के बच्चों की शिक्षा से सम्बंधित प्रमुख समस्याओं व उद्देश्यो पर केन्द्रित है। यह शोध विमुक्त बच्चों की शैक्षिक स्थिति का आकलन करना व उत्तर प्रदेश में बच्चों को किन चुनौतियों व समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है इसकी पहचान करना, इन बच्चों की शिक्षा में सुधार के अवसरों की तलाश करना।

उत्तर प्रदेश के संदर्भ में, शिक्षा तक पहुँच की कमी, विद्यालयी अवसंरचना की सीमाएँ, शिक्षकों की कमी तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव प्रमुख चुनौतियाँ हैं। कई परिवारों में बच्चों को आर्थिक गतिविधियों में शामिल किया जाता है, जिससे उनकी शिक्षा बाधित होती है। साथ ही, बाल विवाह, लैंगिक असमानता तथा सामाजिक भेदभाव जैसी समस्याएँ विशेष रूप से बालिकाओं की शिक्षा को प्रभावित करती हैं।

हालांकि सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएँ एवं नीतियाँ लागू की गई हैं, फिर भी इनके प्रभाव सीमित हैं क्योंकि लक्षित समुदायों तक इनका समुचित क्रियान्वयन नहीं हो पाता। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा नीतियों को अधिक समावेशी बनाया जाए, समुदाय–आधारित हस्तक्षेपों को बढ़ावा दिया जाए तथा जागरूकता और दस्तावेजीकरण की प्रक्रिया को सुदृढ़ किया जाए। यह अध्ययन उत्तर प्रदेश में DNT बच्चों की शिक्षा से संबंधित चुनौतियों, अवसरों और सुधार की संभावनाओं को समझने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द :– डी–नोटिफाइड टाइब्स, शैक्षिक स्थिति, शैक्षिक चुनौतियां, विमुक्त जाति, जनजाति शिक्षा, घुमंतू जनजाति।

परिचय :

'अधिसूचित' शब्द उन लोगों के समूहों के लिए प्रयुक्त होता था, जिन्हें ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा एक कुख्यात कानून– आपराधिक जनजाति अधिनियम, 1871 आपराधिक जनजाति अधिनियम के अंतर्गत सूचीबद्ध किया गया था। यह अधिनियम पूरे ब्रिटिश भारत में आपराधिक जनजातियों की निगरानी और नियंत्रण को कृत करने के लिए बनाया गया था तथा उन्हें जन्म से अपराधी के रूप में चिह्नित किया गया था। इस अधिनियम को स्वतंत्र भारत सरकार द्वारा वर्ष 1952 में समाप्त कर दिया गया। इसके बाद 'आपराधिक'' शब्द हटाकर इन समुदायों को डीनोटिफाइड' (De. Notified) कहा गया (Aksena, 1975)। विमुक्त, घुमंतु और अर्द्धघुमंतु समुदायों

तक पहुँचना और उन्हें चिन्हित करना कठिन रहा है। देश के विभिन्न राज्यों के संदर्भ में इन सामाजिक श्रेणियों में भी अंतर पाया जाता है।

दुनिया भर में समुदाय अपनी बुनियादी आवश्यकताओं– जैसे भोजन, वस्त्र और आश्रय की पूर्ति के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं, जिसे वे शिकार, कृषि, पशुपालन आदि के माध्यम से पूरा करने का प्रयास करते हैं। इसलिए इन्हें सामान्यतः 'घुमंतू जनजातियाँ (Biswas, 2003; Ghatage, 2006) कहा जाता है। डीनोटीफाइड को विमुक्तजाति तथा पूर्व–आपराधिक जनजातियाँ भी कहा जाता है।

घुमंतू (Nomadic) का अर्थ :

घुमंतू वे लोग होते हैं जिनके पास रहने के लिए स्थायी घर नहीं होता और वे चारागाहों की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं। उनकी गतिशीलता का मुख्य उद्देश्य आजीविका होता है। सादर (1991) के अनुसार, घुमंतू जनजातियों, राष्ट्रों या नस्लों के ऐसे सदस्य होते हैं जिनकी कोई स्थायी बसावट नहीं होती। वे भोजन और चारागाहों की खोज में निरंतर स्थान परिवर्तन करते रहते हैं। इन्हें शिकारी एवं भोजन–संग्रहकर्ता, भ्रमणशील मछुआरे तथा पशुपालक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

विमुक्त जनजातियाँ (De.notified Tribes)

विमुक्त जनजातियाँ वे समुदाय हैं जिन्हें आपराधिक जनजाति अधिनियम, 1871 और उसके बाद किए गए संशोधनों के अंतर्गत जन्मजात अपराधी के रूप में सूचीबद्ध किया गया था। यह माना जाता था कि ये समुदाय गैर–जमानती अपराध करने के आदी हैं। एक बार किसी जनजाति को इस अधिनियम के अंतर्गत आपराधिक घोषित कर दिए जाने के बाद उसके सभी सदस्यों के लिए स्थानीय मजिस्ट्रेट के समक्ष स्वयं को पंजीकृत कराना अनिवार्य था। यदि वे पंजीकरण नहीं कराते थे, तो उन पर भारतीय दंड संहिता (IPC) के अंतर्गत कठोर प्रावधानों के तहत मुकदमा किया जाता था।

आदतन अपराधी अधिनियम, 1952 के अंतर्गत इन समुदायों को अपराध मुक्त किया गया और इन्हें विमुक्त जनजाति घोषित किया गया। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार, ये समुदाय आज भी हाशिए पर हैं और अत्यंत दयनीय जीवन जी रहे हैं। इनकी विशिष्ट आवश्यकताओं को समझने पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। विमुक्त जनजाति, घुमंतू जनजाति एवं अर्ध–घुमंतू जनजाति पर राष्ट्रीय आयोग ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि घुमंतू अर्ध–घुमंतू और विमुक्त समूहों की जनसंख्या लगभग 11 करोड़ है, जो आज भी मुख्यधारा समाज द्वारा हिंसा और अत्याचारों का सामना कर रही है।

उ. प्र. में विमुक्त व घुमंतु जनजाति की संख्या जिले वार –

- नट– पूरे प्रदेश में।
- बंजारा विभिन्न जिले में विशेष रूप से घूमतू जीवन शैली अपने है।
- बेदिया/बेरिया – मिर्जापुर और सोनभद्र क्षेत्र में पाये जाते है।
- सांसी–एटा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, औरैया ओर कन्नौज मे पाये जाते है।
- खुजर–विभिन्न जिलो में।
- जोगी–विभिन्न जिलो में।
- पारधी–विभिन्न जिलो में।

- बावरिया विभिन्न जिलो में।
- लोघा/लोधी विभिन्न जिलो में विशेष रूप से पश्चिमी यूपी में।

साहित्य समीक्षा :-

भारत में डीनोटिफाइड (विमुक्त) जनजातियों की शिक्षा से संबंधित विभिन्न अध्ययनों में उनकी जटिल सामाजिक एवं आर्थिक चुनौतियों को उजागर किया गया है। कुमार वी. (2024) के अध्ययन में यह पाया गया कि गरीबी और काम की आवश्यकता के कारण जनजातीय बच्चों में निरक्षरता अधिक है। नामांकन दर में वृद्धि होने के बावजूद ड्रॉपआउट दर अभी भी ऊँची बनी हुई है तथा उच्च जातियों और डीनोटिफाइड छात्रों के बीच शिक्षा स्तर में स्पष्ट अंतर देखा जाता है। साथ ही सरकारी नीतियाँ सीमित रूप से प्रभावी पाई गईं।

इसी क्रम में वशिष्ठ औ खान (2020) ने डीनोटिफाइड जनजातियों की शिक्षा में आने वाली चुनौतियों की पहचान करते हुए बताया कि भेदभाव और सामाजिक कलंक के कारण विद्यालयों में नामांकन कम होता है और ड्रॉपआउट दर अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त डॉ. अंबेडकर छात्रवृत्ति जैसी योजनाओं का लाभ भी पर्याप्त रूप से इन तक नहीं पहुँच पाता है।

मदाने (2018) के अध्ययन में डीनोटिफाइड महिलाओं की शिक्षा संबंधी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। इसमें पाया गया कि छात्रवृत्ति एवं शैक्षिक लाभ उन्हें नहीं मिल पाते, जबकि लिंग असमानता, गरीबी और दस्तावेजों की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं। साथ ही जल्दी शादी और बालश्रम भी उनकी शिक्षा में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

इसी प्रकार पुरी (2016) ने घुमंतू शिक्षक एवं कलाकार जनजातियों की शिक्षा का अध्ययन करते हुए बताया कि कुछ परिवार शिक्षा को समर्थन देते हैं, लेकिन प्रवास और गरीबी के कारण बच्चे पढ़ाई छोड़ देते हैं। इसके अतिरिक्त अभिभावकों को शिक्षा संबंधी कानूनों और दस्तावेजों की जानकारी का अभाव भी पाया गया।

गाँधी (2014) के अनुसार डीनोटिफाइड बच्चों की शिक्षा की स्थिति अत्यंत निम्न है, जिसका मुख्य कारण कम आय है। जनगणना में इन समुदायों से संबंधित डेटा सीमित उपलब्ध है तथा शिक्षकों को इन बच्चों की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता।

हाल के अध्ययनों में मोहद राजीक (2025) ने बताया कि वर्तमान समय में भी डीनोटिफाइड जनजातियों में ड्रॉपआउट दर उच्च है, नामांकन के बावजूद शिक्षा की गुणवत्ता कम है तथा लैंगिक असमानता और प्रवास का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जाता है।

अंततः राज एम0 एटाल (2025) ने हरियाणा के भिवानी जिले में किए गए अध्ययन में पाया कि शिक्षा की स्थिति कमजोर है, शिक्षक प्रशिक्षण का अभाव है और परिवार आय को शिक्षा से अधिक महत्व देते हैं, जिससे बच्चों की शिक्षा प्रभावित होती है।

घुमंतू एवं विमुक्त (डीनोटिफाइड) बच्चों की शैक्षिक स्थिति :

शिक्षा को व्यक्तिगत तथा सामुदायिक विकास का सर्वोत्तम साधन माना जाता है, जो समाज में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन लाने में सहायक होती है। भारत सरकार ने वंचित समूहों को औपचारिक शिक्षा प्रणाली के दायरे में लाने के उद्देश्य से शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE). 2009 लागू किया, जिससे उनके विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके और वे सशक्त बन सकें। किंतु घुमंतू समुदायों के बच्चे गरीबी, जागरूकता की

कमी सामाजिक बहिष्करण, पलायन आदि कारणों से इस अधिनियम का लाभ नहीं उठा सके, जिसके कारण वे विद्यालय प्रणाली से दूर रहे। अपने जीवन की चुनौतियों से निपटने के लिए किसी अन्य सहायक तंत्र के अभाव में वे शिक्षा के अधिकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का लाभ लेने में असमर्थ रहे घुमंतू समुदाय आजीविका की तलाश हैं। उनकी इस प्रवासी प्रकृति के कारण वर्तमान स्कूली शिक्षा प्रणाली घुमंतू समुदायों के बच्चों को औपचारिक शिक्षा से जोड़ने में सहायक सिद्ध नहीं हो पाती। बच्चे अपने माता–पिता के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं और परिवार के भरण–पोषण में भी उनकी जिम्मेदारियों होती हैं। इन चुनौतियों के कारण आज वे शिक्षा प्रणाली से काफी दूर हैं। वर्ष 2008 में गठित रेक आयोग ने अपनी रिपोर्ट में सुझाव दिया कि घुमंतू समुदायों से ही शिक्षकों को विकसित किया जाए जो इन समुदायों के साथ जहाँ भी वे जाए, वहीं जाकर बच्चों को शिक्षा प्रदान कर सकें। ये समुदाय अपनी प्रवासी प्रकृति के कारण सामान्य स्कूली व्यवस्था को स्वीकार नहीं करते, इसलिए ऐसे कदम उनकी शिक्षा में सकारात्मक परिणाम ला सकते हैं।

अनुभूति ट्रस्ट के संस्थापक दीपा पवार, जो विमुक्त समुदाय के जीवन स्तर को बेहतर बनाने और उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने का काम करती हैं, वह कहती हैं, ''कई विमुक्त जनजाति समुदाय ऐसे हैं जो बाकी हिस्सों की तरह तेजी से प्रगति नहीं कर पाते है, क्योंकि अन्यायपूर्ण तरीके से अपराधी घोषित किये जाने के कारण उन्हें आवश्यक संसाधन नही मिल पाते है।'' आगे वह कहती है, विमुक्त जाति के समुदाये के पीढ़ीयों से हिंसा और उपेक्षा झेलने के बावजूद अपनी कौशल और दृढ़ता के बल पर जीवित रहे है।

शिक्षा से जुड़ी प्रमुख समस्याएं एवं चुनौतियाँ :

उत्तर प्रदेश में विशेष रूप से विमुक्त जनजातियों की शिक्षा की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। इन जनजातियों के बच्चों को अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जिसके कारण वे मुख्यधारा की शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। सरकारी योजनाओं के बावजूद इन समुदायों तक शिक्षा की सुविधाएँ पूरी तरह नहीं पहुँच पाती हैं। विशेष रूप से कंजर, नट, सपेरा, बंजारा आदि समुदायों में शिक्षा का स्तर बहुत निम्न है और बच्चों में विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति अधिक देखी जाती है।

विमुक्त जनजातियों से जुड़े प्रमुख समस्याओं में आर्थिक गरीबी एक महत्वपूर्ण कारण है, जिसके चलते बच्चे पढ़ाई के बजाय आय अर्जन में लग जाते हैं। घुमंतू जीवन शैली के कारण लगातार स्थान परिवर्तन होता रहता है, जिससे बच्चों की शिक्षा बाधित होती है। सामाजिक समावेशन की कमी और विद्यालयों में भेदभावपूर्ण व्यवहार बच्चों में हीन भावना उत्पन्न करता है। इसके अतिरिक्त, सरकारी योजनाओं की पहुँच का अभाव भी एक बड़ी समस्या है, जिससे कई परिवार छात्रवृत्ति एवं शैक्षिक सुविधाओं से अनभिज्ञ रहते हैं। बालिका शिक्षा के संदर्भ में बाल विवाह, घरेलू कार्यों का बोझ और सुरक्षा की कमी जैसी समस्याएँ उनकी शिक्षा में बाधक बनती हैं।

समुदाय की सीमित भागीदारी :

1. अभिभावक शिक्षण गतिविधियों में कम भाग लेते है। माता पिता स्कूलों में बहुत कम जाते है।
2. डीनोटिफाइड के बच्चो में साक्षरता दर राज्य के औसत से काफी कम है।
3. प्राथमिक स्तर पर नामांकन के बावजूद, माध्यमिक स्तर पहुंचते–पहुंचते अधिकांश बच्चे विद्यालय छोड़ देते है।

4. बालश्रम, पलायन, परिवारिक जिम्मेदारियां ड्राप आउट के प्रमुख कारण है, बालिकाओं की स्थिति और भी दयनीय है।

क. आर्थिक गरीबी ख. सामाजिक भेदभाव ग. घुमंतू जीवनशैली

शिक्षा की उपेक्षा :

उ0प्र0 में परिवार, समाज और सरकार तीनो स्तरो पर सहयोग की आवश्यकता है ताकि इन छात्रों का शैक्षिक स्तर सुधारा जा सके। **सुझाव :-** साहित्य समीक्षा और सरकारी पहलों के आधार पर डीनोटिफाइड समुदायों की शिक्षा सुधारने हेतु निम्न सुझाव दिये गये हैंः–

- डीनोटिफाइड बच्चों की हर स्तर पर (प्राथमिक से उच्च शिक्षा) पर छात्रवृत्ति दी जाये इससे आर्थिक भार कम होगा, बच्चों का मन पढाई में लगेगा।
- पिता को शिक्षा के लाभ बाताएं जाएं, उन्हे स्कूल बैठकों, और गतिविधियों में शामिल किया जाएं।
- डीनोटिफाइड सांस्कृति, परम्पराएं और जीवनशैली को भी शामिल किया जाएँ इससे बच्चों की सीखने में रूचि बढ़ेगी।
- डीनोटिफाइड शिक्षा पर नीतियों के प्रभाव का समय–समय पर मूल्यांकन किया जाये तथा आवश्यकतानुसार सुधार किये जाए।
- शिक्षा के माध्यम से समानता और सामाजिक न्याय की नींव बताकर ऐतिहासिक कलंक और बहिष्कार का मुकाबला करें।
- कौशल प्रशिक्षण आस सृजन गतिविधियों के लिय सहायता प्रदान करके आत्म निर्भरता को सक्षम बनाना।
- निरंतर नामांकन सुनिश्चित करने के लिये उच्च ड्रॉपआउट दर, बुनियादी ढाँचे में कमी, और प्रशासनिक बाधाओं (जैसे जाति प्रमाण पत्र का न होना) का समाधान करे।
- लड़कियों के लिये सुरक्षित और अनुकूल स्कूत वातावरण बनाये जाएं।

डीनोटिफाइड लड़कियों को शिक्षा जारी रखने के दिन विशेष प्रोत्साहन दिये जाएं। कानूनी दस्तावेज प्राप्त करने में सहयोग– इन दस्तावेजो के बिना छात्रवृत्ति और योजनाओं लाभ नही मिलता है।

सरकारी योजनाएं व प्रयास –

1. **सीड स्कीम** – यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण योजना है इसमें डिनोटिफाइड बच्चों के लिये मुफ्त कोचिंग, स्वास्थ्य बीमा, आजीविका सहायता, आवास सहायता शामिल है। 2021–22 से 2025–26 तक 200 करोड़ का बजट केन्द्र सरकार द्वारा दिया गया है।
2. **डॉ. अम्बेडकर** – प्री–मैट्रिक और पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति लड़के व लड़कियों के लिये।
3. **नाना जी देशमुख योजना** – डीनोटिफाइड के लिये छत्रावास का निर्माण।
4. **एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय** – यह आवसीय विद्यालय है।
5. **राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति योजना** – डीनोटिफाइड का कोटा उपलब्ध हो।

उत्तर प्रदेश की योजनाएं –

1. **आश्रम पद्धति विद्यालय** – उत्तर प्रदेश में अबतक 106 विद्यालय है, जिनमें 5 निर्माणाधीन है। इनमें बच्चो को मुफ्त किताबें, छात्रावास, ड्रेस, रोजमर्रा की वस्तुएं, दवाइयां, सब मुफ्त है। यह योजना काफी सफल रही है

इसमे बच्चों को सफल परिवेश मिलता है।

2. **एकलव्य मॉडल स्कूल** – अब तक उ0 प्र0 में 4 एकलव्य माडल आवासीय विद्याल स्वीकृत है। इन विद्यालयों का लक्ष्य विमुक्त जाति और जनजाति के छात्रों को निःशुल्क आवासीय शिक्षा किताबें, यूनीफार्म एवं खेल कूद की सुविधाएं देना है। भविष्य में लखनऊ, सोनभद्र, बिजनौर और श्रावस्ती में ई० एम० आर० एस० विद्यालय बनाये जाने हेतु शासन को प्रस्ताव भेजा जा चुका है। संविधान के अनुच्छेद 275(1) के अर्न्तग अनुदान प्राप्त करके राज्य, केन्द्रशासित प्रदेशों में एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय स्थापित किये गये है। 2025 तक भारत में कुल 728 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय खोलने का लक्ष्य रखा गया है। जिनमें से 485 पूरी तरह से संचालित है। उ0प्र0 सरकार द्वारा संचालित योजनाएं।

3. **उ0 प्र0** में डीनोटिफाइड जनजातियों के लिये कोचिंग योजनाएं व अभ्युदय योजना में NEET, JEE, PCS, NDA आदि की तैयारी व मुफ्त आवासीय कॉचिंग प्रदान करती है।

4. **टैलेंट पूल योजना** – मेधावी डीनोटिफाइड छात्रों को प्रतिवर्ष स्कूलो में बेहतर गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त करने के लिये वित्तीय सहायता (प्रति वर्ष 40,000) प्रदान करी हो (उ०प्र० सरकार)

5. **स्वपोषित संस्थानों** में अध्ययनरत डीनोटिफाइड छात्रों को एक निश्चित सीमा से कम वार्षिक आय वाले छात्रों का छात्रवृत्ति (50,000) प्रदान करता है (उ0 प्र0 सरकार)

क्र० सं०	योजना का नाम	संबंधित विभाग	लक्षित लाभार्थी	प्रमुख शैक्षिक लाभ	टिप्पणी
1.	प्री मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना	समाज कल्याण विभाग उ०प्र०	कक्षा 01 से 10 तक के विमुक्ति जाति के छात्र	छात्रवृत्ति, स्कूल में निरंतरता	ड्रापआउट दर कम करने पर केन्द्रित
2.	पोस्ट में मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना	समाज कल्याण विभाग उ0प्र0	कक्षा 11 से उच्च षिक्षा तक	उच्च षिक्षा हेतु आर्थिक सहायता	उच्च षिक्षा भागीदारी बढ़ाने हेतु
3.	समग्र षिक्षा अभियान	बेसिक षिक्षा विभाग उ0प्र0	6–14 वर्ष के वंचित बच्चे	निःषुल्क षिक्षा व यूनीफार्म	समावेषी षिक्षा का माध्यम
4	छात्रावास/आवासीय विद्यालय योजना	समाज कल्याण विभाग उ0प्र0	विमुक्त जनजाति के छात्र–छात्राएं	आवास एवं षैक्षिक सुविधाएं	घुमंतु जीवन षैली की समस्या से निपटारा हेतु

5.	बाल संरक्षण एवं पुनः नामांकन अभियान	जिला प्रषासन / पुलिस	स्कूल छोड़ चुके बच्चे	पुनः विद्यालय से जोड़ना	अप्रत्यक्ष षैक्षिक समर्थन
6.	मुख्यमंत्री बाल षिक्षा सहायता योजना	उ0प्र0 सरकार	आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग	षिक्षा हेतु वित्तीय सहायता	विमुक्त जाति के बच्चे भी लाभार्थी

निष्कर्ष –

घुमंतू और विमुक्त समुदाय लंबे समय से सामाजिक अन्याय और अत्याचारों के शिकार रहे हैं। इन्हें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों की परिधि से लंबे समय तक बाहर रखा गया है। अपनी घुमंतू जीवन–शैली के कारण ये समूह हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था का लाभ नहीं उठा पाए हैं। इनके बच्चे अपनी प्रवासी प्रकृति के कारण औपचारिक शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। सरकार द्वारा इन्हें औपचारिक शिक्षा प्रणाली में शामिल करने के कुछ प्रयास किए गए हैं, लेकिन वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए अभी लंबा रास्ता तय करना बाकी है। सरकार को इन समूहों की विशेष आवश्यकताओं की पहचान करनी चाहिए और ऐसी नीतियाँ एवं योजनाएँ बनानी चाहिए, जो विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों के सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध करा सकें। इन समुदायों के समग्र विकास और उन्हें मुख्यधारा के समाज का हिस्सा बनाने के लिए शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है। उ0प्र0 में डीनोटिफाइड के बच्चों की शिक्षा केवल एक सामाजिक मुद्दा नहीं बल्कि मानवाधिकार और सामाजिक न्याय का प्रश्न है। जब तक शिक्षा के माध्यम से इन समुदायों को मुख्य धारा में नहीं जोड़ा जाएगा तब तक समावेशी विकास की कल्पना अधूरी रहेगी। शिक्षा ही वह सशक्त माध्यम है जो डीनोटिफाइड के बच्चो को सम्मान अवसर और भविष्य प्रदान कर सकता है।

यह शोध विशेष रूप से नीति निर्माताओं, शिक्षाविदों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिये उपयोगी है।

अध्ययन के निष्कर्ष शिक्षा नीति में डीनोटिफाइड को अलग श्रेणी के क्रम में सम्मिलित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

संदर्भ सूची :–

1. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग. (2004). विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों की बैठक रिपोर्ट. नई दिल्लीः भारत सरकार।
2. घाटे, ए. एस. (2006). भारत में प्रमुख जनजाति और सामाजिक कार्य. जयपुरः रति पब्लिकेशन।
3. भारत सरकार. (2008). विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध–घुमंतू जनजातियों के राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट. नई दिल्लीः सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय।
4. रेन्के आयोग. (2016). विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध–घुमंतू जनजातियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति पर रिपोर्ट. नई दिल्लीः सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार।
5. मीणा, एम. आर. (2008). विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों की सामाजिक–आर्थिक चुनौतियाँ. नई दिल्लीः

रावत पब्लिकेशंस।

6. भारत सरकार. (2011). भारत की जनगणना 2011. नई दिल्लीः रजिस्ट्रार जनरल एवं जनगणना आयुक्त, भारत।
7. सूरी, आर. (2016). घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियों के बच्चों की शैक्षिक स्थिति. सामाजिक न्याय शोध पत्रिका, 8(2), 45–58।
8. कुमार, जी. (2016). विमुक्त जनजातियों की शैक्षिक स्थितिः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन. समाज विज्ञान शोध पत्रिका, 7(2), 45–58।
9. तिवारी, एस. आर. (2016). विमुक्त जनजातियों और सामाजिक बहिष्कार. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली (हिंदी चयन), 51(7), 60–71।
10. शर्मा, आर. (2017). घुमंतू एवं विमुक्त जनजातियों के बच्चों की शिक्षा की समस्याएँ. भारतीय शिक्षा समीक्षा, 12(1), 60–78।
11. भारत सरकार. (2018). विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध–घुमंतू जनजातियों पर कार्य समूह की रिपोर्ट. नई दिल्लीः सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय।
12. सिंह, पी. (2019). उत्तर भारत में विमुक्त जनजातियों की बालिका शिक्षाः एक अध्ययन. स्त्री अध्ययन, 5(1), 101–115।
14. उत्तर प्रदेश समाज कल्याण विभाग. (2020). विमुक्त एवं घुमंतू जनजाति कल्याण योजनाएँः वार्षिक प्रतिवेदन. लखनऊः उत्तर प्रदेश सरकार।
15. यादव, एस. (2021). विमुक्त जनजातियों के बच्चों में विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति. शिक्षा और समाज, 9(2), 88–91।
16. भारत सरकार. (2021). समग्र शिक्षा अभियान दिशा–निर्देश. नई दिल्लीः शिक्षा मंत्रालय।
17. मिश्रा, गौरव, एवं सिंह, उदय प्रताप. (2022). कंजर समुदाय में स्वास्थ्य एवं शिक्षा. परिश्रम मंथन, 16(1), 38–40।
18. उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा विभाग. (2022). समग्र शिक्षा अभियान राज्य रिपोर्ट. लखनऊः उत्तर प्रदेश सरकार।
19. भारत सरकार. (2023). विमुक्त, घुमंतू एवं अर्ध–घुमंतू जनजातियों के लिए शिक्षा एवं छात्रवृत्ति योजनाएँ. नई दिल्लीः सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय।

Email : madhumishra1992m@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 148–153
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

पर्यावरण चेतना और हिंदी साहित्य : नवाचार एवं स्थिरता का साहित्यिक दृष्टिकोण

डॉ अनिता सिंह
हिंदी विभाग, असिस्टेंट प्रोफेसर
डी.बी.एस. कॉलेज, गोविंद नगर कानपुर–208006

सार :

पर्यावरण चेतना आज के वैश्विक परिदृश्य में अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बन चुकी है, जहाँ प्रकृति और मानव के बीच संतुलन निरंतर चुनौती के रूप में उभर रहा है। हिंदी साहित्य ने इस संदर्भ में न केवल पर्यावरणीय समस्याओं को अभिव्यक्त किया है, बल्कि मानव–प्रकृति संबंधों की गहराई को भी संवेदनशील और रचनात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। यह साहित्यिक परंपरा प्रकृति के सौंदर्य, उसके संरक्षण तथा उसके साथ सह–अस्तित्व के विचार को केंद्र में रखती है। प्रस्तुत अध्ययन में हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना के विभिन्न आयामों का विश्लेषण किया गया है, विशेष रूप से नवाचार और स्थिरता के दृष्टिकोण से। आधुनिक हिंदी रचनाकारों ने पर्यावरणीय संकट, जैसे प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, वन विनाश और जैव विविधता के ह्रास को अपने लेखन का विषय बनाया है। इन रचनाओं में केवल समस्या का चित्रण ही नहीं, बल्कि समाधान की दिशा में जागरूकता, संवेदनशीलता और उत्तरदायित्व का संदेश भी निहित है। नवाचार के संदर्भ में हिंदी साहित्य ने पारंपरिक प्रकृति–चित्रण से आगे बढ़कर नई अभिव्यक्ति शैलियों, प्रतीकों और विमर्शों को अपनाया है। कविताओं, कहानियों और उपन्यासों में पर्यावरणीय विषयों को सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत किया गया है, जिससे पाठकों में गहरी समझ और चिंतन की प्रवृत्ति विकसित होती है। साथ ही, स्थिरता (सस्टेनेबिलिटी) की अवधारणा को भी साहित्य के माध्यम से जीवनशैली, उपभोग और विकास के संतुलित मॉडल के रूप में स्थापित किया गया है।

मुख्य शब्द : पर्यावरण चेतना, हिंदी साहित्य, नवाचार, स्थिरता, सतत विकास, प्रकृति संरक्षण, पारिस्थितिकी, साहित्यिक विमर्श, पर्यावरणीय संकट, मानव–प्रकृति संबंध।

परिचय :

वर्तमान समय में पर्यावरणीय असंतुलन मानव सभ्यता के सामने एक गंभीर चुनौती के रूप में उभरकर सामने आया है। तीव्र औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन और उपभोक्तावादी जीवनशैली ने प्रकृति के संतुलन को गहराई से प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप वायु, जल और भूमि प्रदूषण,

जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता में कमी तथा प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती घटनाएँ मानव जीवन के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगा रही हैं। ऐसे परिदृश्य में पर्यावरण चेतना का विकास अत्यंत आवश्यक हो जाता है, जिससे व्यक्ति और समाज प्रकृति के प्रति अपने दायित्व को समझ सके।

हिंदी साहित्य ने समय–समय पर सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक मुद्दों को उजागर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, और पर्यावरण चेतना भी इससे अछूती नहीं रही है। प्राचीन काव्य परंपरा से लेकर आधुनिक साहित्य तक, प्रकृति को केवल सौंदर्य के रूप में नहीं, बल्कि जीवन के आधार के रूप में देखा गया है। कवियों और लेखकों ने अपने सृजन के माध्यम से प्रकृति के साथ मानव के गहरे संबंध को रेखांकित किया है, साथ ही उसके संरक्षण की आवश्यकता पर भी बल दिया है।

समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय संकटों को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जा रहा है। लेखकों ने पारंपरिक वर्णन शैली से आगे बढ़कर नवाचारी अभिव्यक्तियों और विमर्शों को अपनाया है, जिनमें पर्यावरणीय समस्याओं के साथ–साथ उनके समाधान और स्थायी विकास की अवधारणाओं को भी समाहित किया गया है। यह साहित्य केवल चेतावनी देने तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज में जागरूकता और परिवर्तन की प्रेरणा भी देता है।

साहित्य समीक्षा :

पर्यावरण चेतना और हिंदी साहित्य के अंतर्संबंध को समझने के लिए विभिन्न साहित्यिक कृतियों और आलोचनात्मक अध्ययनों का अवलोकन आवश्यक है। हिंदी साहित्य में प्रकृति का चित्रण प्राचीन काल से ही एक महत्वपूर्ण विषय रहा है, जहाँ प्रकृति को केवल सौंदर्य और भावनात्मक अनुभूति के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया, बल्कि उसे जीवन और अस्तित्व के मूल आधार के रूप में भी देखा गया है। प्रारंभिक काव्य परंपरा में प्रकृति के प्रति अनुराग, संवेदनशीलता और आध्यात्मिक जुड़ाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

भक्ति कालीन साहित्य में प्रकृति को ईश्वर की अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया, जहाँ नदी, पर्वत, वृक्ष और ऋतुएँ मानव जीवन के साथ गहरे संबंध स्थापित करती हैं। इस काल के कवियों ने प्रकृति के माध्यम से मानव के आंतरिक भावों को अभिव्यक्त किया, जिससे पर्यावरण के प्रति एक सहज और नैतिक दृष्टिकोण विकसित हुआ। रीति काल में यद्यपि प्रकृति का उपयोग मुख्यतः श्रृंगारिक संदर्भों में हुआ, फिर भी उसके माध्यम से मानव–प्रकृति संबंधों की झलक मिलती है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना अधिक स्पष्ट और संगठित रूप में सामने आती है। छायावादी कवियों ने प्रकृति को आत्म–अभिव्यक्ति और भावनात्मक गहराई के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया, जिससे प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता और जुड़ाव की भावना प्रबल हुई। इसके बाद प्रगतिवादी और नई कविता आंदोलन में पर्यावरणीय मुद्दों को सामाजिक और आर्थिक संदर्भों से जोड़कर देखा गया। औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के प्रभावों को रचनाकारों ने आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया, जिससे पर्यावरणीय संकट की वास्तविकता उजागर हुई।

समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय विमर्श एक स्वतंत्र और सशक्त विषय के रूप में उभरकर सामने आया है। लेखकों और कवियों ने प्रदूषण, जल संकट, वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता के ह्रास जैसे मुद्दों को केंद्र में रखकर रचनाएँ की हैं। इन कृतियों में केवल समस्या का चित्रण ही नहीं, बल्कि

समाधान की दिशा में जागरूकता और जिम्मेदारी का संदेश भी निहित है। साथ ही, साहित्य में नवाचार के माध्यम से पर्यावरणीय विषयों को नए प्रतीकों, रूपकों और कथानकों के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है, जिससे पाठकों में गहन चिंतन और संवेदनशीलता का विकास होता है।

वर्तमान समय में हिंदी साहित्य पर्यावरण चेतना के प्रसार का एक प्रभावी साधन बन चुका है, जो समाज को सतत विकास और प्रकृति संरक्षण के प्रति प्रेरित करता है। इस प्रकार, साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य ने विभिन्न कालखंडों में पर्यावरणीय दृष्टिकोण को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और आज भी यह प्रक्रिया निरंतर जारी है।

पर्यावरण चेतना की संकल्पना :

पर्यावरण चेतना का आशय उस जागरूकता, संवेदनशीलता और उत्तरदायित्व से है, जिसके माध्यम से व्यक्ति प्रकृति और उसके संसाधनों के महत्व को समझता है तथा उनके संरक्षण के प्रति सक्रिय दृष्टिकोण अपनाता है। यह केवल पर्यावरणीय समस्याओं की जानकारी तक सीमित नहीं है, बल्कि एक ऐसी विचारधारा है जो मानव और प्रकृति के बीच संतुलित एवं सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने पर बल देती है।

पर्यावरण चेतना की मूल भावना यह है कि मनुष्य स्वयं को प्रकृति से अलग नहीं, बल्कि उसका अभिन्न अंग माने। जब व्यक्ति यह समझने लगता है कि उसकी प्रत्येक गतिविधि 'चाहे वह उपभोग, उत्पादन या जीवनशैली से संबंधित हो' प्रकृति को प्रभावित करती है, तब उसके भीतर पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी की भावना विकसित होती है। इस चेतना के अंतर्गत संसाधनों का संतुलित उपयोग, जैव विविधता का संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण और प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने की प्रवृत्ति शामिल होती है।

यह संकल्पना सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों से भी गहराई से जुड़ी हुई है। विभिन्न समाजों और संस्कृतियों में प्रकृति के प्रति आदर और संरक्षण की परंपरा रही है, जो पर्यावरण चेतना को मजबूत आधार प्रदान करती है। जब यह चेतना सामूहिक रूप से विकसित होती है, तो समाज में सतत विकास की दिशा में सकारात्मक परिवर्तन संभव होते हैं।

पर्यावरण चेतना का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि यह केवल वर्तमान पीढ़ी तक सीमित नहीं रहती, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के हितों को भी ध्यान में रखती है। इस दृष्टिकोण से यह संकल्पना दीर्घकालिक सोच को प्रोत्साहित करती है, जिसमें विकास और संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक माना जाता है। अतः पर्यावरण चेतना एक व्यापक और समग्र अवधारणा है, जो ज्ञान, भावना और व्यवहार – इन तीनों स्तरों पर कार्य करती है। यह व्यक्ति को केवल पर्यावरण के प्रति जागरूक ही नहीं बनाती, बल्कि उसे सक्रिय रूप से संरक्षण और स्थिरता की दिशा में कार्य करने के लिए प्रेरित भी करती है।

हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण :

हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण एक समृद्ध और बहुआयामी परंपरा के रूप में विकसित हुआ है, जिसमें प्रकृति को केवल बाहरी दृश्य या सौंदर्य का विषय नहीं, बल्कि जीवन, संस्कृति और अस्तित्व के मूल तत्व के रूप में देखा गया है। यह दृष्टिकोण समय के साथ बदलते सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भों के अनुसार विकसित होता रहा है, जिससे साहित्य में प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता और जागरूकता की निरंतर अभिव्यक्ति मिलती है।

प्राचीन हिंदी काव्य परंपरा में प्रकृति का चित्रण अत्यंत आत्मीय और जीवन के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ दिखाई देता है। यहाँ प्रकृति को मानवीय भावनाओं का सहचर माना गया है, जहाँ ऋतुएँ, वन, नदियाँ और आकाश मानव जीवन के सुख–दुख के साथ समरस होकर प्रस्तुत होते हैं। इस दृष्टिकोण में प्रकृति के प्रति आदर, प्रेम और संतुलन की भावना निहित रहती है, जो पर्यावरणीय चेतना का प्रारंभिक स्वरूप कहा जा सकता है।

भक्ति साहित्य में यह दृष्टिकोण और अधिक गहराई प्राप्त करता है, जहाँ प्रकृति को ईश्वरीय सत्ता की अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया है। संत कवियों ने प्रकृति के माध्यम से आध्यात्मिक अनुभवों और मानव जीवन के मूल्यों को व्यक्त किया, जिससे प्रकृति के प्रति एक नैतिक और सम्मानजनक दृष्टि विकसित हुई। यह दृष्टिकोण मनुष्य को प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व की ओर प्रेरित करता है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण अधिक यथार्थवादी और आलोचनात्मक रूप में सामने आता है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और संसाधनों के अति–दोहन के प्रभावों को रचनाकारों ने गंभीरता से चित्रित किया है। कविताओं, कहानियों और उपन्यासों में प्रदूषण, जल संकट, वनों की कटाई और पारिस्थितिक असंतुलन जैसे मुद्दों को प्रमुखता से उठाया गया है। इस साहित्य में केवल प्रकृति का सौंदर्य ही नहीं, बल्कि उसके विनाश की चिंता और उसके संरक्षण की आवश्यकता भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण एक सक्रिय विमर्श के रूप में उभर रहा है, जिसमें पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास और मानव की नैतिक जिम्मेदारी जैसे विषय प्रमुख हैं। लेखक नए प्रतीकों, रूपकों और कथानकों के माध्यम से पर्यावरणीय समस्याओं को समाज के व्यापक संदर्भों से जोड़ते हैं। इस प्रक्रिया में साहित्य न केवल चेतना का माध्यम बनता है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की दिशा में प्रेरक शक्ति भी सिद्ध होता है।

इस प्रकार, हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण समय के साथ विकसित होता हुआ एक सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में सामने आता है, जो मानव और प्रकृति के बीच संतुलन, सह–अस्तित्व और संरक्षण की आवश्यकता को गहराई से रेखांकित करता है।

पद्धति :

प्रस्तुत अध्ययन में "पर्यावरण चेतना और हिंदी साहित्य" विषय का विश्लेषण गुणात्मक अनुसंधान पद्धति के अंतर्गत किया गया है। इस शोध का उद्देश्य हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय दृष्टिकोण, नवाचार और स्थिरता के आयामों को समझना और उनका समग्र मूल्यांकन करना है। अध्ययन मुख्यतः साहित्यिक कृतियों, आलोचनात्मक लेखों और संबंधित वैचारिक स्रोतों के विश्लेषण पर आधारित है।

इस शोध में प्राथमिक स्रोतों के रूप में विभिन्न कालखंडों की हिंदी साहित्यिक कृतियों 'कविता, कहानी, उपन्यास और निबंध' का चयन किया गया है। इन कृतियों का चयन इस आधार पर किया गया है कि उनमें प्रकृति, पर्यावरण और मानव–प्रकृति संबंधों का स्पष्ट चित्रण मिलता हो। साथ ही, द्वितीयक स्रोतों के रूप में शोध–पत्र, आलोचनात्मक अध्ययन और संदर्भ ग्रंथों का उपयोग किया गया है, जिनके माध्यम से विषय की पृष्ठभूमि और सैद्धांतिक आधार को समझा गया है।

विश्लेषण की प्रक्रिया में विषयवस्तु विश्लेषण और व्याख्यात्मक पद्धति को अपनाया गया है। इसके अंतर्गत

चयनित साहित्यिक कृतियों में प्रयुक्त प्रतीकों, रूपकों, कथानकों और विचारों का गहन अध्ययन किया गया है, जिससे पर्यावरण चेतना के विभिन्न आयामों को स्पष्ट किया जा सके। इसके साथ ही, तुलनात्मक दृष्टिकोण का भी उपयोग किया गया है, जिसके माध्यम से विभिन्न कालखंडों और लेखकों के पर्यावरणीय दृष्टिकोणों का आपसी संबंध और अंतर समझा गया है।

अध्ययन में नवाचार और स्थिरता के पहलुओं को विश्लेषित करने के लिए समकालीन संदर्भों को भी ध्यान में रखा गया है। इसमें यह देखा गया है कि आधुनिक हिंदी साहित्य किस प्रकार पर्यावरणीय मुद्दों को नए रूप में प्रस्तुत करता है और सतत विकास की अवधारणा को कैसे अभिव्यक्त करता है।

इस प्रकार, यह पद्धति एक समग्र और बहुआयामी दृष्टिकोण प्रदान करती है, जिसके माध्यम से हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना, नवाचार और स्थिरता के विभिन्न पहलुओं का व्यवस्थित और गहन अध्ययन संभव हो पाता है।

विश्लेषण और चर्चा :

प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना, नवाचार और स्थिरता के विभिन्न आयामों का गहन विश्लेषण किया गया। यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि हिंदी साहित्य केवल प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन करने तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने पर्यावरणीय संकटों को समझने, उनका मूल्यांकन करने और उनके समाधान की दिशा में विचार प्रस्तुत करने का महत्वपूर्ण कार्य भी किया है।

विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि विभिन्न कालखंडों में साहित्यकारों ने अपने समय की सामाजिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुरूप प्रकृति को अलग–अलग दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया है। प्रारंभिक साहित्य में जहाँ प्रकृति के साथ आत्मीय संबंध और सौंदर्य–बोध प्रमुख था, वहीं आधुनिक और समकालीन साहित्य में पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति चिंता और जागरूकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह परिवर्तन इस बात का संकेत है कि साहित्य समाज की बदलती परिस्थितियों के साथ स्वयं को ढालता है और नई चुनौतियों के प्रति संवेदनशील रहता है।

चर्चा के दौरान यह भी सामने आया कि समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय विमर्श एक सशक्त और स्वतंत्र विषय के रूप में विकसित हो चुका है। लेखकों ने जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, वनों की कटाई, जल संकट और जैव विविधता के ह्रास जैसे मुद्दों को गंभीरता से उठाया है। इन रचनाओं में केवल समस्या का चित्रण ही नहीं, बल्कि पाठकों को जागरूक करने और उन्हें सकारात्मक कदम उठाने के लिए प्रेरित करने का प्रयास भी दिखाई देता है।

नवाचार के संदर्भ में यह पाया गया कि साहित्यकारों ने पर्यावरणीय विषयों को प्रस्तुत करने के लिए नए प्रतीकों, रूपकों और अभिव्यक्ति शैलियों का प्रयोग किया है। इससे न केवल विषय की गहराई बढ़ती है, बल्कि पाठकों के साथ उसका भावनात्मक और बौद्धिक संबंध भी मजबूत होता है। डिजिटल माध्यमों के उपयोग ने भी इस नवाचार को और व्यापक बना दिया है, जिससे पर्यावरण चेतना का प्रसार अधिक प्रभावी रूप से हो रहा है। स्थिरता के दृष्टिकोण से हिंदी साहित्य संतुलित जीवनशैली, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व के विचार को प्रोत्साहित करता है। साहित्य में प्रस्तुत ग्रामीण जीवन, पारंपरिक ज्ञान और नैतिक मूल्यों को स्थायी विकास के आदर्श के रूप में देखा जा सकता है। यह दृष्टिकोण पाठकों को यह समझने में

सहायता करता है कि विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि हिंदी साहित्य पर्यावरण चेतना के विकास और प्रसार में एक सशक्त एवं प्रभावी माध्यम के रूप में उभरता है। विभिन्न कालखंडों में साहित्यकारों ने प्रकृति और मानव के संबंधों को संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त करते हुए पर्यावरणीय संतुलन की आवश्यकता को रेखांकित किया है। प्रारंभिक साहित्य में जहाँ प्रकृति के प्रति आत्मीयता और सौंदर्य–बोध प्रमुख था, वहीं आधुनिक और समकालीन साहित्य में पर्यावरणीय संकटों के प्रति गहरी चिंता और जागरूकता दिखाई देती है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि हिंदी साहित्य ने नवाचार के माध्यम से पर्यावरणीय विषयों को नए दृष्टिकोण और अभिव्यक्ति शैलियों के साथ प्रस्तुत किया है। प्रतीकों, रूपकों और कथात्मक संरचनाओं के माध्यम से साहित्यकारों ने पर्यावरणीय समस्याओं को अधिक प्रभावी और विचारोत्तेजक बनाया है। इसके साथ ही, डिजिटल युग में साहित्य के प्रसार ने पर्यावरण चेतना को व्यापक स्तर पर पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

स्थिरता के संदर्भ में हिंदी साहित्य संतुलित जीवनशैली, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व के सिद्धांतों को प्रोत्साहित करता है। यह दृष्टिकोण न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी एक सुरक्षित और संतुलित पर्यावरण सुनिश्चित करने की दिशा में प्रेरणा प्रदान करता है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य पर्यावरणीय जागरूकता को बढ़ाने, सामाजिक जिम्मेदारी को सुदृढ़ करने और सतत विकास के मार्ग को प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह साहित्य मानव और प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित करने की प्रेरणा देता है और एक ऐसे समाज के निर्माण की दिशा में मार्गदर्शन करता है, जो पर्यावरण के प्रति संवेदनशील, जागरूक और उत्तरदायी हो।

संदर्भ :

- वर्मा, महादेवी. (2009). अतीत के चलचित्र. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.
- पंत, सुमित्रानंदन. (2010). पल्लव. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
- निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी. (2011). परिमल. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
- प्रेमचंद, मुंशी. (2007). गोदान. नई दिल्ली : सरस्वती प्रेस.
- शुक्ल, रामचंद्र. (2012). हिंदी साहित्य का इतिहास. नई दिल्ली : लोकभारती प्रकाशन.
- बुकचिन, मरे. (2005). स्वतंत्रता की पारिस्थितिकी : पदानुक्रम के उद्‌भव और विघटन का अध्ययन. ओकलैंड : ए.के. प्रेस.
- गारड, ग्रेग. (2012). पारिस्थितिक आलोचना (द्वितीय संस्करण). लंदन : रूटलेज.
- संयुक्त राष्ट्र. (1987). हमारा साझा भविष्य (ब्रंटलैंड रिपोर्ट). ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस.
- अंतर–सरकारी जलवायु परिवर्तन पैनल (आईपीसीसी). (2023). जलवायु परिवर्तन 2023 : संश्लेषण रिपोर्ट.
- भारत सरकार, पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय. (2022). भारत की वन स्थिति रिपोर्ट.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 154–158
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

डिजिटल युग में हिंदी भाषा का विकास : सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन

डॉ. आरती दुबे
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
लक्ष्मी यादुनंदन महाविद्यालय, कायमगंज, जिला फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश–209502

सारकृ डिजिटल युग में हिंदी भाषा का स्वरूप और उपयोग निरंतर परिवर्तनशील हो रहा है, जो सामाजिक और सांस्कृतिक बदलावों को प्रत्यक्ष रूप से प्रतिबिंबित करता है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, मोबाइल एप्लिकेशन और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के विस्तार ने हिंदी को नई अभिव्यक्ति, प्रसार और स्वीकार्यता प्रदान की है। अब हिंदी केवल पारंपरिक साहित्य या औपचारिक संवाद तक सीमित नहीं रह गई, बल्कि यह डिजिटल संवाद, मनोरंजन, शिक्षा और व्यावसायिक क्षेत्रों में भी सक्रिय रूप से प्रयुक्त हो रही है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि डिजिटल माध्यमों ने हिंदी भाषा के विकास को किस प्रकार प्रभावित किया है तथा इसके सामाजिक और सांस्कृतिक आयामों में क्या परिवर्तन आए हैं। विशेष रूप से, भाषा की शैली, शब्दावली, लिपि और अभिव्यक्ति के नए रूपों का अध्ययन किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि डिजिटल युग ने हिंदी को अधिक लचीला, व्यापक और जनसुलभ बनाया है। साथ ही, हिंग्लिश जैसी मिश्रित भाषाओं का उदय, संक्षिप्त लेखन शैली, और वैश्विक स्तर पर हिंदी की पहचान में वृद्धि भी महत्वपूर्ण परिवर्तन के रूप में सामने आए हैं। हालांकि, इसके साथ भाषा की शुद्धता और सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण की चुनौती भी उभरकर सामने आई है।

मुख्य शब्द : डिजिटल युग, हिंदी भाषा, सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन, सोशल मीडिया, भाषा विकास, हिंग्लिश, डिजिटल संचार, भाषा की शुद्धता, वैश्वीकरण।

परिचय :

वर्तमान समय को डिजिटल युग के रूप में जाना जाता है, जहाँ सूचना और संचार तकनीकों ने मानव जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। इंटरनेट, स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, क्लाउड कंप्यूटिंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस जैसी तकनीकों ने न केवल जानकारी तक पहुँच को आसान बनाया है, बल्कि संचार के तरीकों को भी पूरी तरह बदल दिया है। डिजिटल युग का अर्थ केवल तकनीकी विकास नहीं है, बल्कि यह सामाजिक व्यवहार, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और भाषा के स्वरूप में भी गहरे परिवर्तन का प्रतीक है।

हिंदी भाषा की वर्तमान स्थिति इस परिवर्तनशील परिदृश्य में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। एक ओर हिंदी

विश्व की प्रमुख भाषाओं में अपनी पहचान मजबूत कर रही है, वहीं दूसरी ओर डिजिटल माध्यमों ने इसके उपयोग को और अधिक व्यापक बना दिया है। आज हिंदी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स, ब्लॉग, यूट्यूब, ऑनलाइन शिक्षा और ई–कॉमर्स जैसे क्षेत्रों में सक्रिय रूप से प्रयुक्त हो रही है। साथ ही, हिंग्लिश (हिंदी और अंग्रेजी का मिश्रण) का बढ़ता प्रचलन, संक्षिप्त और अनौपचारिक लेखन शैली, तथा देवनागरी के साथ रोमन लिपि का उपयोग हिंदी के नए रूपों को दर्शाता है। यह परिवर्तन भाषा को अधिक लचीला और उपयोगकर्ता–केंद्रित बना रहा है, परंतु इसके साथ भाषा की शुद्धता और पारंपरिक स्वरूप के संरक्षण की चिंता भी सामने आ रही है।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य डिजिटल युग में हिंदी भाषा के विकास को समझना और यह विश्लेषण करना है कि इस प्रक्रिया में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन किस प्रकार जुड़े हुए हैं। अध्ययन का लक्ष्य यह भी है कि डिजिटल माध्यमों द्वारा उत्पन्न नए भाषा–रूपों, अभिव्यक्ति के तरीकों और संचार की प्रवृत्तियों का मूल्यांकन किया जाए। इसके माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि डिजिटल युग हिंदी भाषा के लिए अवसर और चुनौतियाँ दोनों प्रस्तुत करता है, और इनका संतुलित विश्लेषण भविष्य की दिशा तय करने में सहायक हो सकता है।

डिजिटल युग और हिंदी भाषा का विस्तार :

डिजिटल युग ने हिंदी भाषा के विस्तार को अभूतपूर्व गति प्रदान की है। इंटरनेट और मोबाइल तकनीक के प्रसार ने संचार के साधनों को सरल, सुलभ और व्यापक बना दिया है। आज स्मार्टफोन के माध्यम से गाँवों से लेकर महानगरों तक लोग आसानी से ऑनलाइन जुड़ रहे हैं, जिससे हिंदी भाषा का उपयोग तेजी से बढ़ा है। पहले जहाँ हिंदी का प्रयोग मुख्यतः पारंपरिक माध्यमोंकृजैसे पुस्तकें, समाचार पत्र और रेडियोकृतक सीमित था, वहीं अब यह डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर भी सक्रिय रूप से उपस्थित है।

इंटरनेट की पहुँच ने हिंदी भाषी समुदाय को वैश्विक मंच प्रदान किया है। मोबाइल एप्लिकेशन और सस्ते डेटा प्लान्स के कारण बड़ी संख्या में नए उपयोगकर्ता ऑनलाइन आए हैं, जिनमें अधिकांश हिंदी भाषी हैं। यह परिवर्तन विशेष रूप से भारत जैसे बहुभाषी देश में महत्वपूर्ण है, जहाँ हिंदी व्यापक रूप से समझी और बोली जाती है। परिणामस्वरूप, डिजिटल दुनिया में हिंदी का प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है और यह संचार की प्रमुख भाषाओं में शामिल हो रही है।

विभिन्न डिजिटल प्लेटफॉर्म्स जैसे यूट्यूब, व्हाट्सएप और फेसबुक ने हिंदी भाषा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यूट्यूब पर हिंदी में शैक्षिक, मनोरंजक और सूचनात्मक वीडियो की संख्या तेजी से बढ़ी है, जिससे ज्ञान और जानकारी अधिक लोगों तक पहुँच रही है। व्हाट्सएप जैसे मैसेजिंग प्लेटफॉर्म ने दैनिक संवाद को सरल बनाया है, जहाँ लोग हिंदी में संदेश, ऑडियो और वीडियो के माध्यम से संवाद करते हैं। वहीं फेसबुक और अन्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने हिंदी में विचारों, भावनाओं और सामाजिक मुद्दों की अभिव्यक्ति के लिए एक खुला मंच प्रदान किया है।

इसके साथ ही हिंदी कंटेंट का उपयोग भी लगातार बढ़ रहा है। ब्लॉग, वेबसाइट्स, ऑनलाइन समाचार पोर्टल्स और डिजिटल मार्केटिंग में हिंदी का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। कंपनियाँ भी अब अपने उत्पादों और सेवाओं के प्रचार के लिए हिंदी को प्राथमिकता दे रही हैं, ताकि वे व्यापक उपभोक्ता वर्ग तक पहुँच सकें। यह प्रवृत्ति न केवल हिंदी के विस्तार को दर्शाती है, बल्कि यह भी संकेत देती है कि डिजिटल युग में हिंदी एक

सशक्त और प्रभावशाली भाषा के रूप में उभर रही है।

सामाजिक परिवर्तन और हिंदी भाषा :

डिजिटल युग में सामाजिक संरचनाओं और संचार के तरीकों में आए बदलावों ने हिंदी भाषा के स्वरूप को भी प्रभावित किया है। सबसे प्रमुख परिवर्तन भाषा के सरलीकरण के रूप में देखा जा सकता है। डिजिटल माध्यमों पर तेज और त्वरित संवाद की आवश्यकता के कारण लोग छोटे, सीधे और आसानी से समझ में आने वाले वाक्यों का उपयोग करने लगे हैं। पारंपरिक व्याकरणिक जटिलता की जगह अब संक्षिप्त और प्रभावी अभिव्यक्ति को प्राथमिकता दी जा रही है। इमोजी, संक्षेप शब्द और ध्वन्यात्मक लेखन (जैसे "kya", "kaise") ने भाषा को अधिक सहज और संवादात्मक बना दिया है। यह सरलीकरण भाषा को अधिक लोगों तक पहुँचाने में सहायक है, हालांकि इससे शुद्ध भाषा के प्रयोग में कमी भी देखी जा रही है।

हिंग्लिश का प्रभाव भी हिंदी भाषा के सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण पहलू है। हिंदी और अंग्रेजी के मिश्रण से बनी यह भाषा विशेष रूप से शहरी और शिक्षित वर्ग में तेजी से प्रचलित हो रही है। डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर "Let's go yaar", "Kal meeting hai" जैसे वाक्य सामान्य हो गए हैं। हिंग्लिश ने संचार को अधिक लचीला और आधुनिक बनाया है, जिससे लोग अपनी भावनाओं और विचारों को सहजता से व्यक्त कर पाते हैं। साथ ही, यह वैश्विक और स्थानीय संस्कृतियों के मेल का प्रतीक भी है। हालांकि, कुछ विद्वानों का मानना है कि इसका अत्यधिक प्रयोग हिंदी की मूल संरचना और शब्दावली को प्रभावित कर सकता है।

युवा पीढ़ी इस परिवर्तन की प्रमुख वाहक है। सोशल मीडिया, चौटिंग एप्स और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स का सबसे अधिक उपयोग युवा वर्ग ही करता है, जिससे उनकी भाषा शैली में नवाचार स्पष्ट दिखाई देता है। वे नई शब्दावली, ट्रेंडिंग अभिव्यक्तियों और रचनात्मक तरीकों का उपयोग करते हैं, जिससे हिंदी का एक नया, जीवंत रूप उभर रहा है। डिजिटल संचार ने युवाओं को अपनी पहचान व्यक्त करने और सामाजिक मुद्दों पर अपनी राय साझा करने का मंच प्रदान किया है। इस प्रकार, हिंदी भाषा सामाजिक परिवर्तन के साथ तालमेल बैठाते हुए निरंतर विकसित हो रही है और नए आयाम प्राप्त कर रही है।

सांस्कृतिक परिवर्तन और भाषा की भूमिका :

डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन अत्यंत तीव्र गति से हो रहे हैं, और इन परिवर्तनों में भाषा की भूमिका केंद्रीय बनी हुई है। हिंदी भाषा आज परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सेतु का कार्य कर रही है। एक ओर यह भाषा भारतीय संस्कृति, लोक परंपराओं, साहित्य और मूल्यों को अभिव्यक्त करती है, वहीं दूसरी ओर यह आधुनिक जीवनशैली, वैश्विक प्रभावों और तकनीकी प्रगति के अनुरूप स्वयं को ढाल रही है। इस प्रक्रिया में हिंदी का स्वरूप अधिक गतिशील और बहुआयामी बन गया है, जहाँ पारंपरिक शब्दावली के साथ नए शब्द और अभिव्यक्तियाँ भी शामिल हो रही हैं।

परंपरा बनाम आधुनिकता का यह संतुलन हिंदी के वर्तमान रूप में स्पष्ट दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, जहाँ शास्त्रीय साहित्य और लोकभाषा आज भी सांस्कृतिक विरासत को संजोए हुए हैं, वहीं डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर प्रयुक्त हिंदी अधिक सरल, मिश्रित और प्रयोगधर्मी बन चुकी है। यह परिवर्तन केवल भाषा का नहीं, बल्कि सोच और अभिव्यक्ति के तरीके का भी है। आधुनिक संदर्भों में हिंदी का उपयोग अधिक लचीला हो गया है, जिससे यह नई पीढ़ी के साथ बेहतर संवाद स्थापित कर पा रही है।

डिजिटल संस्कृति 'विशेष रूप से मीम्स, रील्स और शॉर्ट कंटेंट' ने हिंदी भाषा को एक नया रचनात्मक आयाम दिया है। छोटे–छोटे वीडियो, हास्यपूर्ण मीम्स और त्वरित संदेशों के माध्यम से जटिल विचारों को भी सरल और मनोरंजक तरीके से प्रस्तुत किया जा रहा है। इन माध्यमों में प्रयुक्त हिंदी अक्सर अनौपचारिक, संक्षिप्त और भावनात्मक होती है, जो दर्शकों के साथ तुरंत जुड़ाव स्थापित करती है। इससे भाषा अधिक जनसुलभ और प्रभावी बनती है, साथ ही यह सामाजिक मुद्दों और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों को तेजी से फैलाने का माध्यम भी बनती है।

हालांकि, इन परिवर्तनों का सांस्कृतिक पहचान पर मिश्रित प्रभाव पड़ता है। एक ओर हिंदी का वैश्विक प्रसार और आधुनिक स्वरूप इसे अधिक प्रासंगिक बनाता है, वहीं दूसरी ओर पारंपरिक मूल्यों और शुद्ध भाषा के संरक्षण की चुनौती भी सामने आती है। यदि संतुलन बनाए रखा जाए, तो हिंदी भाषा न केवल सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रख सकती है, बल्कि उसे नए संदर्भों में और अधिक सशक्त भी बना सकती है।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ :

डिजिटल युग में हिंदी भाषा के तीव्र विस्तार के साथ कई चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। सबसे प्रमुख चिंता शुद्ध हिंदी के ह्रास को लेकर है। सोशल मीडिया और त्वरित संचार के प्रभाव से लोग सरल और मिश्रित भाषा का उपयोग अधिक करने लगे हैं, जिससे पारंपरिक व्याकरण और शुद्ध शब्दावली का प्रयोग कम होता जा रहा है। रोमन लिपि में हिंदी लिखने की प्रवृत्ति तथा हिंग्लिश का बढ़ता चलन भाषा के मूल स्वरूप को प्रभावित कर रहा है। इसके परिणामस्वरूप नई पीढ़ी शुद्ध और मानक हिंदी से धीरे–धीरे दूर होती दिखाई देती है।

भाषा की गुणवत्ता भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा बनकर उभरी है। डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर सामग्री की अधिकता के कारण भाषा की शुद्धता, संरचना और अभिव्यक्ति के स्तर में असमानता देखने को मिलती है। कई बार गलत वर्तनी, अपूर्ण वाक्य और असंगत शैली का प्रयोग किया जाता है, जिससे संचार की प्रभावशीलता प्रभावित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, बिना संपादन और प्रमाणन के प्रकाशित सामग्री भाषा के मानकों को कमजोर कर सकती है।

हालांकि, इन चुनौतियों के साथ अनेक संभावनाएँ भी जुड़ी हुई हैं। डिजिटल माध्यमों ने हिंदी को वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल प्रकाशन, ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित भाषा उपकरणों के माध्यम से हिंदी का उपयोग और अधिक सशक्त हो सकता है। इसके साथ ही, नई तकनीकों के सहारे हिंदी सामग्री का सृजन, अनुवाद और प्रसार पहले से कहीं अधिक आसान हो गया है।

भविष्य की दृष्टि से देखा जाए तो यदि तकनीकी विकास और भाषा संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखा जाए, तो हिंदी भाषा और भी समृद्ध और प्रभावशाली बन सकती है। आवश्यक है कि डिजिटल मंचों पर गुणवत्तापूर्ण और शुद्ध भाषा के उपयोग को प्रोत्साहित किया जाए, ताकि हिंदी न केवल आधुनिक संदर्भों में विकसित हो, बल्कि अपनी सांस्कृतिक गहराई और पहचान को भी बनाए रख सके।

निष्कर्ष :

डिजिटल युग ने हिंदी भाषा के विकास को एक नई दिशा प्रदान की है, जहाँ तकनीक और संचार के आधुनिक माध्यमों ने इसके प्रसार को अभूतपूर्व गति दी है। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इंटरनेट, मोबाइल

तकनीक और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने हिंदी को अधिक सुलभ, लचीला और व्यापक बना दिया है। भाषा के सरलीकरण, हिंग्लिश के बढ़ते प्रयोग और डिजिटल संस्कृति के प्रभाव ने हिंदी के स्वरूप को परिवर्तित किया है, जिससे यह नई पीढ़ी के लिए अधिक प्रासंगिक और उपयोगी बन गई है। साथ ही, इन परिवर्तनों के कारण शुद्ध भाषा, व्याकरण और सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण की चुनौती भी सामने आई है।

भविष्य की दिशा के संदर्भ में यह आवश्यक है कि हिंदी भाषा के विकास में संतुलन बनाए रखा जाए। एक ओर तकनीकी प्रगति और डिजिटल नवाचार को अपनाना जरूरी है, वहीं दूसरी ओर भाषा की गुणवत्ता, शुद्धता और सांस्कृतिक पहचान को भी सुरक्षित रखना उतना ही महत्वपूर्ण है। शिक्षा, मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से मानक हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, ताकि भाषा का समग्र विकास संभव हो सके।

इस प्रकार, यदि समुचित प्रयास किए जाएँ, तो हिंदी भाषा न केवल डिजिटल युग की आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित हो सकती है, बल्कि वैश्विक स्तर पर अपनी विशिष्ट पहचान को भी और अधिक सशक्त बना सकती है।

संदर्भ :

1. इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया एवं कांटर। (2023)। इंटरनेट इन इंडिया रिपोर्ट 2023।
2. इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय। (2022)। डिजिटल इंडिया कार्यक्रम : भारत को डिजिटल रूप से सशक्त समाज में रूपांतरित करना।
3. यूनेस्को। (2019)। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और मीडिया विकास पर वैश्विक प्रवृत्तियाँ।
4. स्टेटिस्टा। (2024)। भारत में भाषा के आधार पर इंटरनेट उपयोगकर्ताओं का वितरण।
5. गूगल एवं केपीएमजी। (2017)। भारतीय भाषाएँ : भारत के इंटरनेट की परिभाषा।
6. प्यू रिसर्च सेंटर। (2021)। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में सोशल मीडिया का उपयोग।
7. विश्व बैंक। (2020)। डिजिटल विकास का अवलोकन।
8. ऑक्सफोर्ड इंटरनेट इंस्टीट्यूट। (2018)। वैश्विक इंटरनेट रिपोर्ट।
9. केंद्रीय हिंदी निदेशालय। (2020)। हिंदी भाषा की स्थिति और संवर्धन।
10. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग। (2018)। उच्च शिक्षा में भारतीय भाषाओं का संवर्धन।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 159-163
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Grammatical Error Correction Using Transformer-Based Models

Dr. K. Angel Vinoliya, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science , Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu., 9942724542
Dr. M. Mary Velanganni, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu., 7373949192
Dr. Vijayalakshmi . S , Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu., 9677883210
Dr. B. Abirami , Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science , Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu., 7373066266
Mr. B. Manojkumar, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu., 8883809258
Dr. S. Sudha, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu , 9844724542
Dr. S. Swarnalatha, Associate Professor, Department of Hindi,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu., 9787601960

Abstract :

Grammatical Error Correction (GEC) is a crucial task in Natural Language Processing (NLP) that focuses on identifying and correcting grammatical mistakes in text. With the increasing use of digital communication and language learning platforms, automated GEC systems have become highly significant. Traditional approaches to GEC relied heavily on rule-based systems and statistical machine translation (SMT), which required extensive linguistic expertise and large annotated corpora. However, these methods often struggled with contextual understanding and generalization.

The emergence of transformer-based models has revolutionized the field of GEC by introducing powerful architectures capable of capturing long-range dependencies and contextual nuances in language. Models such as encoder-decoder transformers leverage attention mechanisms to understand relationships between words in a sentence more effectively than previous approaches. This has led to

significant improvements in correcting complex grammatical errors, including subject-verb agreement, tense inconsistencies, and word order issues.Transformer-based GEC systems are typically trained on large-scale parallel corpora consisting of incorrect and corrected sentence pairs. This article explores the evolution of GEC systems, the architecture of transformer models, their application in grammatical correction, and the challenges and future directions of this rapidly advancing field.

1. Introduction :

Grammatical Error Correction (GEC) is an essential application of Natural Language Processing that aims to automatically detect and correct errors in written text. These errors may include spelling mistakes, incorrect verb usage, punctuation issues, and syntactic inconsistencies. GEC systems are widely used in educational tools, writing assistants, and communication platforms.Early GEC systems were rule-based, relying on handcrafted grammar rules. Although effective for simple errors, these systems lacked flexibility and scalability. Later, statistical approaches improved performance but still struggled with contextual understanding. The introduction of deep learning, particularly transformer-based models, marked a significant shift in how GEC tasks are approached.

2. Evolution of Grammatical Error Correction Systems

2.1 Rule-Based Approaches :

Rule-based systems depended on predefined grammatical rules created by linguists. While precise, these systems required extensive manual effort and failed to handle exceptions or ambiguous cases effectively.

2.2 Statistical Machine Translation (SMT) :

SMT treated GEC as a translation problem, converting incorrect sentences into correct ones. Although this approach improved flexibility, it required large annotated datasets and often produced unnatural corrections.

2.3 Neural Network-Based Models :

The introduction of neural networks improved GEC performance by learning patterns from data. Recurrent Neural Networks (RNNs) and Long Short-Term Memory (LSTM) models captured sequential dependencies but were limited in handling long-range context.

2.4 Emergence of Transformer Models :

Transformer models addressed the limitations of earlier methods by using attention mechanisms instead of sequential processing. This allowed them to better understand context and relationships within text, leading to superior GEC performance

3. Transformer Architecture Overview :

3.1 Key Components :

Transformer models consist of the following main components :

- **Encoder :** Processes input text and generates contextual representations.
- **Decoder :** Produces corrected output based on encoder representations.
- **Attention Mechanism :** Identifies relationships between words regardless of their position.
- **Feedforward Layers :** Enhance representation learning.

3.2 Self-Attention Mechanism :

Self-attention allows the model to weigh the importance of each word in a sentence relative to others. This is crucial for detecting grammatical errors that depend on context.

3.3 Positional Encoding :

Since transformers do not process sequences sequentially, positional encoding is used to provide information about word order.

4. Application of Transformers in GEC

4.1 Framing GEC as a Sequence-to-Sequence Task :

Transformer-based GEC models treat the task as converting an incorrect sentence into a corrected version. This is similar to machine translation.

4.2 Training Data :

Models are trained on parallel corpora consisting of erroneous and corrected sentences. Examples include learner corpora and synthetic datasets.

4.3 Pretrained Language Models :

Pretrained models significantly improve GEC performance by leveraging large-scale data. Fine-tuning these models on GEC datasets enhances accuracy.

4.4 Error Types Addressed :

Transformer-based systems can correct :

- Subject-verb agreement errors
- Tense inconsistencies
- Article and preposition misuse
- Word order mistakes
- Punctuation errors

5. Advantages of Transformer-Based GEC Models

5.1 Contextual Understanding :

Transformers capture long-range dependencies, enabling them to understand context more

effectively than previous models.

5.2 Scalability :

These models can be trained on large datasets and adapted to various domains.

5.3 Improved Accuracy :

Transformer-based systems achieve state-of-the-art results in GEC benchmarks.

6. Challenges in Transformer-Based GEC

6.1 Data Requirements :

Large annotated datasets are required for training effective models.

6.2 Computational Cost :

Training transformer models is resource-intensive and requires significant computational power.

6.3 Overcorrection :

Models sometimes make unnecessary changes, altering correct text.

6.4 Low-Resource Languages :

GEC systems perform poorly for languages with limited training data.

6.5 Interpretability :

Understanding how models make decisions remains challenging.

7. Evaluation Metrics for GEC

7.1 Precision and Recall :

These metrics measure the accuracy of corrections and the ability to detect errors.

7.2 F-score :

A combined measure of precision and recall.

7.3 GLEU Score :

Evaluates fluency and correctness of corrected sentences.

7.4 Human Evaluation :

Human judgment remains important for assessing quality and readability.

8. Recent Advancements

8.1 Pretrained Transformer Models :

Models trained on large datasets provide better contextual understanding and generalization.

8.2 Multilingual GEC :

Research is expanding to support multiple languages using shared representations.

8.3 Unsupervised Learning :

Reducing dependence on labeled data through unsupervised techniques.

8.4 Error Generation Techniques :

Synthetic error generation helps create training data for low-resource scenarios.

9. Future Directions

9.1 Efficient Models :

Developing lightweight models that require less computational power.

9.2 Explainable AI :

Improving transparency in model decision-making.

9.3 Domain Adaptation :

Customizing models for specific fields such as academic writing or business communication.

10. Conclusion :

Transformer-based models have significantly advanced the field of Grammatical Error Correction by providing more accurate and context-aware corrections. Their ability to handle complex grammatical structures and adapt to different domains makes them highly effective. However, challenges such as data requirements, computational costs, and interpretability remain areas of active research. Continued advancements in transformer architectures and training techniques are expected to further enhance GEC systems, making them more accessible and efficient for real-world applications.

Book References

- Jurafsky, D., & Martin, J. H. (2023). *Speech and Language Processing* (3rd ed.). Pearson.
- Goldberg, Y. (2017). *Neural Network Methods in Natural Language Processing*. Morgan & Claypool Publishers.

swarnalathar023@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 164–171
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था : धम्म, नैतिकता एवं लोककल्याण का ऐतिहासिक विश्लेषण

रोहिताश कुमार
सहायक आचार्य, इतिहास, राजकीय महिला महाविद्यालय, झुन्झनू, 333001

सारांश :

प्राचीन भारत के इतिहास में सम्राट अशोक का शासन एक आदर्श प्रशासनिक प्रणाली का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें शक्ति, नैतिकता और लोककल्याण का अद्वितीय समन्वय दिखाई देता है। यह शोध आलेख अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसमें उसकी संरचना, कार्यप्रणाली, 'धम्म' की भूमिका, प्रशासनिक अधिकारियों की जिम्मेदारियाँ, न्याय प्रणाली तथा लोककल्याणकारी नीतियों का अध्ययन किया गया है। साथ ही, इस व्यवस्था के गुण–दोषों का आलोचनात्मक मूल्यांकन भी किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अशोक का प्रशासन प्राचीन भारत में नैतिक शासन और जनकल्याण का उत्कृष्ट उदाहरण था, जिसकी प्रासंगिकता आधुनिक प्रशासनिक सिद्धांतों में भी विद्यमान है।

कुंजी शब्द : अशोक, मौर्य प्रशासन, धम्म, लोककल्याण, न्याय व्यवस्था, प्राचीन भारत।

प्रस्तावना :

प्राचीन भारत के इतिहास में सम्राट अशोक का नाम एक महान शासक, कुशल प्रशासक और नैतिक शासन के प्रवर्तक के रूप में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे मौर्य साम्राज्य के तृतीय सम्राट थे, जिनका शासनकाल लगभग 273 ईसा पूर्व से 232 ईसा पूर्व तक रहा। अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था केवल राजनीतिक नियंत्रण तक सीमित नहीं थी, बल्कि उसमें नैतिकता, धर्म, लोककल्याण और सामाजिक समरसता के तत्व भी समाहित थे। अशोक के शासन की विशेषता यह थी कि उन्होंने प्रशासन को 'धम्म' (नैतिकता) के सिद्धांतों पर आधारित किया। यह शोध आलेख अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिसमें उसके संगठन, कार्यप्रणाली, विशेषताओं और प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

प्राचीन भारत के राजनीतिक इतिहास में सम्राट अशोक का उदय एक महत्वपूर्ण मोड़ का प्रतिनिधित्व करता है। अशोक ने जिस शासन व्यवस्था को आगे बढ़ाया, उसकी जड़ें उनसे पहले स्थापित मौर्य साम्राज्य की सुदृढ़ प्रशासनिक संरचना में निहित थीं। इस साम्राज्य की स्थापना उनके पितामह चन्द्रगुप्त मौर्य ने चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में की थी, जिन्होंने न केवल एक विशाल साम्राज्य का निर्माण किया, बल्कि एक अत्यंत संगठित और

केंद्रीकृत प्रशासनिक ढांचा भी विकसित किया।

चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन में प्रशासनिक व्यवस्था अत्यधिक व्यवस्थित, अनुशासित और व्यावहारिक थी। इस व्यवस्था का सैद्धांतिक आधार अर्थशास्त्र में मिलता है, जिसकी रचना उनके प्रधानमंत्री और महान राजनीतिज्ञ कौटिल्य ने की थी। अर्थशास्त्र में राज्य के विभिन्न अंगों राजा, मंत्रिपरिषद, प्रशासनिक अधिकारियों, गुप्तचर व्यवस्था, राजस्व प्रणाली और दंडनीति का विस्तृत एवं वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रंथ मौर्य प्रशासन का वैचारिक आधार था, जिसने शासन को अत्यंत प्रभावी और नियंत्रित बनाया।

चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारी और अशोक के पिता बिन्दुसार ने इस विशाल साम्राज्य को न केवल बनाए रखा, बल्कि उसका विस्तार भी किया। बिन्दुसार के शासनकाल में प्रशासनिक स्थिरता और केंद्रीय नियंत्रण बनाए रखा गया, जिससे अशोक को एक सुव्यवस्थित और समृद्ध साम्राज्य प्राप्त हुआ। इस प्रकार, जब अशोक ने सत्ता संभाली, तब उनके पास एक ऐसा प्रशासनिक ढांचा पहले से मौजूद था, जो शक्तिशाली, केंद्रीकृत और कार्यक्षम था।

हालांकि, अशोक के शासनकाल का सबसे निर्णायक और परिवर्तनकारी प्रसंग कलिंग युद्ध था, जो लगभग 261 ईसा पूर्व में लड़ा गया। कलिंग (वर्तमान ओडिशा) एक स्वतंत्र और समृद्ध राज्य था, जिसे मौर्य साम्राज्य में सम्मिलित करने के उद्देश्य से यह युद्ध हुआ। इस युद्ध में अत्यधिक रक्तपात हुआ हजारों सैनिक मारे गए, अनेक लोग घायल हुए और असंख्य नागरिकों को बंदी बना लिया गया।

कलिंग युद्ध के परिणामस्वरूप उत्पन्न मानवीय त्रासदी ने अशोक के मन और व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डाला। स्वयं अशोक ने अपने शिलालेखों में इस युद्ध के पश्चात हुए पश्चाताप का उल्लेख किया है। उन्होंने स्वीकार किया कि इस विजय ने उन्हें संतोष नहीं, बल्कि गहरा दुःख और आत्मग्लानि प्रदान की। यही वह क्षण था, जब अशोक के जीवन और शासन की दिशा में मौलिक परिवर्तन आया।

इस युद्ध के बाद अशोक ने हिंसा और आक्रामक विजय की नीति का त्याग कर 'धम्म' (नैतिकता) को अपनाया। उन्होंने बौद्ध धर्म के सिद्धांतों से प्रेरणा लेते हुए अपने शासन को नैतिकता, करुणा, अहिंसा और लोककल्याण के आधार पर पुनर्गठित किया।

अशोक का 'धम्म' कोई संकीर्ण धार्मिक सिद्धांत नहीं था, बल्कि यह एक सार्वभौमिक नैतिक आचार संहिता थी, जिसमें सत्य, अहिंसा, सहिष्णुता, माता–पिता और गुरुजनों का सम्मान, तथा सभी प्राणियों के प्रति दया जैसे तत्व शामिल थे। इस नई नीति के तहत अशोक ने अपनी प्रशासनिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन किए उन्होंने अधिकारियों को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया, लोककल्याणकारी योजनाओं को प्राथमिकता दी और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा दिया।

इस प्रकार, अशोक की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि केवल एक शक्तिशाली साम्राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे शासक के रूप में सामने आती है, जिसने युद्ध और विजय की पारंपरिक नीतियों से हटकर नैतिकता और मानवता पर आधारित शासन की स्थापना की। उनका यह परिवर्तन न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन का महत्वपूर्ण मोड़ था, बल्कि भारतीय प्रशासनिक इतिहास में भी एक नई दिशा का सूत्रपात करता है।

प्रशासनिक व्यवस्था :

सम्राट अशोक के शासनकाल में प्रशासनिक संरचना अत्यंत सुव्यवस्थित, संगठित और बहुस्तरीय थी, जो

मौर्य साम्राज्य की विशालता और विविधता को प्रभावी ढंग से संचालित करने में सक्षम थी। इस प्रशासनिक व्यवस्था की विशेषता यह थी कि इसमें केन्द्रीयकरण और विकेन्द्रीयकरण दोनों का संतुलित समन्वय दिखाई देता है। अशोक ने अपने पूर्वजों से प्राप्त प्रशासनिक ढांचे को न केवल बनाए रखा, बल्कि उसमें नैतिकता, उत्तरदायित्व और लोककल्याण के तत्वों को समाहित कर उसे और अधिक परिष्कृत बनाया।

(क) केन्द्रीय प्रशासन – अशोक के शासन में केन्द्रीय प्रशासन सत्ता का मुख्य केंद्र था, जहाँ सम्राट सर्वोच्च अधिकार रखता था। तथापि, यह कहना उचित नहीं होगा कि अशोक पूर्णतः निरंकुश शासक थे। उन्होंने शासन को अधिक उत्तरदायी और जनोन्मुख बनाने के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं को महत्व दिया। सम्राट के रूप में वे अंतिम निर्णयकर्ता थे, परंतु वे प्रशासनिक कार्यों में मंत्रिपरिषद की सलाह लेते थे, जिससे निर्णय प्रक्रिया में सामूहिकता और विवेकशीलता बनी रहती थी।

मंत्रिपरिषद शासन संचालन का एक महत्वपूर्ण अंग थी, जिसमें अनुभवी और योग्य व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता था। ये मंत्री विभिन्न विभागों के संचालन, नीतियों के निर्माण तथा प्रशासनिक समस्याओं के समाधान में सम्राट की सहायता करते थे। इसके अतिरिक्त 'अमात्य' नामक उच्चाधिकारी प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों राजस्व, न्याय, सुरक्षा और लोककल्याण में कार्य करते थे।

अशोक ने प्रशासनिक पारदर्शिता और उत्तरदायित्व पर विशेष बल दिया। उन्होंने अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे नियमित रूप से जनता से संपर्क बनाए रखें, उनकी समस्याओं को सुनें और उनका त्वरित समाधान करें। अशोक के शिलालेखों से यह स्पष्ट होता है कि वे स्वयं भी प्रजा के कल्याण के प्रति अत्यंत सजग थे और समय–समय पर अधिकारियों को इस संबंध में आदेश देते रहते थे। इस प्रकार केन्द्रीय प्रशासन केवल शासन का उपकरण नहीं था, बल्कि लोकहित का माध्यम भी था।

(ख) प्रांतीय प्रशासन – मौर्य साम्राज्य की विशालता को देखते हुए उसे विभिन्न प्रांतों में विभाजित किया गया था, जिससे प्रशासन को सुचारु रूप से संचालित किया जा सके। प्रमुख प्रांतों में तक्षशिला, उज्जैन, सुवर्णगिरि और पाटलिपुत्र के आसपास के क्षेत्र शामिल थे। इन प्रांतों का शासन सामान्यतः राजकुमारों (कुमार) या सम्राट के विश्वस्त अधिकारियों के हाथों में सौंपा जाता था।

प्रांतीय प्रशासन का उद्देश्य केन्द्रीय नीतियों को स्थानीय स्तर पर लागू करना था, साथ ही क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार निर्णय लेने की स्वतंत्रता भी प्रदान की जाती थी। इस प्रकार प्रांतीय अधिकारी न केवल केन्द्रीय सत्ता के प्रतिनिधि थे, बल्कि वे स्थानीय समस्याओं और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्रशासनिक कार्यों को संचालित करते थे।

अशोक ने यह सुनिश्चित किया कि प्रांतीय अधिकारी अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी रहें। उनके कार्यों की निगरानी के लिए समय–समय पर निरीक्षण किया जाता था। इससे प्रशासन में अनुशासन और दक्षता बनी रहती थी। साथ ही, प्रांतीय स्तर पर भी 'धम्म' के सिद्धांतों का पालन सुनिश्चित किया गया, जिससे प्रशासन में नैतिकता और मानवीय दृष्टिकोण को बढ़ावा मिला।

(ग) स्थानीय प्रशासन – स्थानीय प्रशासन मौर्य प्रशासनिक संरचना का सबसे आधारभूत स्तर था, जो सीधे जनता से जुड़ा हुआ था। इसे मुख्यतः ग्राम और नगर इकाइयों में विभाजित किया गया था। ग्राम प्रशासन का संचालन 'ग्रामणी' द्वारा किया जाता था, जो गांव के प्रशासनिक, आर्थिक और सामाजिक कार्यों की देखरेख करता

था। वह कर संग्रह, कानून–व्यवस्था और कृषि संबंधी कार्यों के लिए उत्तरदायी था। नगर प्रशासन अपेक्षाकृत अधिक जटिल था, जिसे 'नगराध्यक्ष' या 'नगराधिप' नियंत्रित करता था। नगरों में व्यापार, शिल्प, जनसंख्या और सुरक्षा से संबंधित कार्यों के लिए विभिन्न समितियाँ और अधिकारी नियुक्त किए जाते थे।

स्थानीय प्रशासन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें जनता की भागीदारी को भी महत्व दिया गया था। ग्राम सभाएँ और स्थानीय निकाय प्रशासनिक कार्यों में सहयोग करते थे, जिससे निर्णय अधिक व्यावहारिक और प्रभावी बनते थे। इस प्रकार, अशोक की प्रशासनिक संरचना एक सुविचारित और संतुलित प्रणाली थी, जिसमें केन्द्रीय सत्ता की शक्ति के साथ–साथ स्थानीय स्तर की भागीदारी और प्रांतीय स्वायत्तता का समुचित समन्वय दिखाई देता है। यह व्यवस्था न केवल शासन को प्रभावी बनाती थी, बल्कि जनता के हितों और आवश्यकताओं को भी प्राथमिकता देती थी।

अशोक का 'धम्म' और प्रशासन :

सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था की सबसे विशिष्ट और मौलिक विशेषता 'धम्म' का सिद्धांत था, जिसने उनके शासन को मात्र राजनीतिक नियंत्रण से ऊपर उठाकर नैतिक और मानवीय आधार प्रदान किया। कलिंग युद्ध के पश्चात अशोक के व्यक्तित्व और नीतियों में जो गहरा परिवर्तन आया, उसी का परिणाम 'धम्म' के रूप में सामने आया। यह 'धम्म' किसी एक धर्म विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करता था, बल्कि यह एक सार्वभौमिक नैतिक संहिता थी, जिसका उद्देश्य समाज में नैतिकता, समरसता और कल्याण की भावना को स्थापित करना था।

अशोक के 'धम्म' के प्रमुख तत्वों में अहिंसा, सहिष्णुता, सत्य, करुणा तथा सभी धर्मों के प्रति सम्मान जैसे मानवीय मूल्य शामिल थे। अहिंसा का अर्थ केवल युद्ध का त्याग नहीं था, बल्कि यह सभी जीवों के प्रति दया और संवेदनशीलता की भावना को भी व्यक्त करता था। सहिष्णुता के माध्यम से अशोक ने विभिन्न धार्मिक और सामाजिक समूहों के बीच आपसी सम्मान और समझ को बढ़ावा दिया। सत्य और नैतिक आचरण को उन्होंने व्यक्तिगत और प्रशासनिक जीवन का आधार माना, जबकि करुणा को शासन के केंद्र में स्थापित किया।

अशोक की धार्मिक नीति पर बौद्ध धर्म का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, किंतु उन्होंने कभी भी अपने 'धम्म' को संकीर्ण धार्मिक प्रचार का माध्यम नहीं बनाया। उन्होंने सभी धर्मों और संप्रदायों के प्रति समान सम्मान का दृष्टिकोण अपनाया और धार्मिक सहिष्णुता को प्रशासनिक नीति का अभिन्न अंग बनाया। इस प्रकार उनका 'धम्म' एक समन्वयवादी और व्यावहारिक नीति थी, जो समाज में शांति और एकता स्थापित करने का प्रयास करती थी।

अशोक ने 'धम्म' के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए 'धम्म महामात्र' नामक विशेष अधिकारियों की नियुक्ति की। इन अधिकारियों का कार्य केवल धार्मिक उपदेश देना नहीं था, बल्कि वे समाज में नैतिक मूल्यों का प्रचार–प्रसार करते थे, विभिन्न वर्गों के बीच समन्वय स्थापित करते थे तथा जनता की समस्याओं को समझकर उनका समाधान करने का प्रयास करते थे। वे विशेष रूप से महिलाओं, वृद्धों, बच्चों और समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण के लिए कार्य करते थे। धम्म महामात्रों की नियुक्ति यह दर्शाती है कि अशोक ने प्रशासन को केवल राजकीय नियंत्रण का साधन न मानकर, उसे नैतिक और सामाजिक सुधार का माध्यम भी बनाया। उन्होंने प्रशासनिक अधिकारियों

को यह निर्देश दिया कि वे जनता के साथ संवेदनशील व्यवहार करें और शासन को जनकल्याणकारी दृष्टिकोण से संचालित करें।

इस प्रकार, अशोक का 'धम्म' उनकी प्रशासनिक व्यवस्था का नैतिक आधार था, जिसने शासन को मानवीय, उत्तरदायी और लोककल्याणकारी स्वरूप प्रदान किया। यह न केवल प्राचीन भारतीय प्रशासन की एक अद्वितीय विशेषता थी, बल्कि आज के आधुनिक प्रशासनिक सिद्धांतों के लिए भी प्रेरणास्रोत बनी हुई है।

प्रशासनिक अधिकारियों की भूमिका :

सम्राट अशोक के शासनकाल में प्रशासनिक व्यवस्था को प्रभावी, उत्तरदायी और नैतिक बनाने के लिए विभिन्न स्तरों पर अनेक अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी। ये अधिकारी न केवल शासन के प्रशासनिक कार्यों का संचालन करते थे, बल्कि 'धम्म' के सिद्धांतों को समाज में स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। अशोक ने यह सुनिश्चित किया कि प्रत्येक अधिकारी अपने कर्तव्यों के प्रति उत्तरदायी रहे और नियमित रूप से अपने कार्यों की रिपोर्ट प्रस्तुत करे। साथ ही, निरीक्षण की एक सुदृढ़ प्रणाली भी विकसित की गई थी, जिससे प्रशासन में अनुशासन और दक्षता बनी रहती थी।

सबसे महत्वपूर्ण अधिकारियों में 'धम्म महामात्र' थे, जिनकी नियुक्ति विशेष रूप से अशोक की नैतिक नीति के प्रचार–प्रसार के लिए की गई थी। इनका प्रमुख कार्य जनता के बीच नैतिक मूल्यों जैसे अहिंसा, करुणा, सहिष्णुता और सत्य का प्रचार करना तथा समाज में सामंजस्य और सद्भाव बनाए रखना था। ये अधिकारी विभिन्न सामाजिक और धार्मिक समूहों के बीच संवाद स्थापित करते थे और विशेष रूप से कमजोर वर्गों जैसे महिलाओं, वृद्धों और गरीबों के कल्याण के लिए कार्य करते थे। 'युक्त' नामक अधिकारी प्रशासनिक कार्यों के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। ये अधिकारी केन्द्रीय और प्रांतीय नीतियों को लागू करते थे तथा शासन के दैनिक कार्यों को व्यवस्थित रूप से संचालित करते थे। इनके माध्यम से प्रशासनिक आदेशों को प्रभावी रूप से जनता तक पहुँचाया जाता था।

'राजुक' अधिकारी मुख्यतः न्यायिक और राजस्व संबंधी कार्यों के लिए उत्तरदायी थे। वे भूमि मापन, कर निर्धारण तथा न्यायिक मामलों के निपटारे में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। अशोक ने राजुकों को विशेष अधिकार प्रदान किए थे, जिससे वे स्थानीय स्तर पर न्याय सुनिश्चित कर सकें। यह व्यवस्था प्रशासन को अधिक सुलभ और प्रभावी बनाती थी। इसके अतिरिक्त, प्रादेशिक अधिकारी प्रांतों में शासन संचालन का दायित्व निभाते थे। वे केन्द्रीय नीतियों को स्थानीय स्तर पर लागू करते थे और प्रांतों की प्रशासनिक व्यवस्था को सुव्यवस्थित बनाए रखते थे। इन अधिकारियों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेने की सीमित स्वतंत्रता भी प्रदान की गई थी, जिससे प्रशासन अधिक व्यावहारिक और प्रभावशाली बन सके।

अशोक स्वयं भी समय–समय पर प्रशासनिक कार्यों की समीक्षा करते थे और अधिकारियों को निर्देश देते थे कि वे जनता के प्रति संवेदनशील रहें तथा उनके कल्याण को प्राथमिकता दें। इस प्रकार, अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था में अधिकारियों की भूमिका केवल कार्य निष्पादन तक सीमित नहीं थी, बल्कि वे नैतिक और सामाजिक उत्तरदायित्व के वाहक भी थे।

न्याय व्यवस्था :

अशोक की न्याय व्यवस्था उनकी प्रशासनिक नीति का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रगतिशील पक्ष थी, जो

मानवीयता, उदारता और नैतिकता पर आधारित थी। मौर्य साम्राज्य के पूर्ववर्ती शासकों की अपेक्षा अशोक ने न्याय प्रणाली को अधिक संवेदनशील और जनोन्मुख बनाने का प्रयास किया। अशोक ने दंड व्यवस्था में महत्वपूर्ण सुधार किए। उन्होंने कठोर और अमानवीय दंडों को कम करने पर बल दिया तथा न्याय को अधिक मानवीय स्वरूप प्रदान किया। विशेष रूप से मृत्युदंड के प्रयोग को सीमित करने का प्रयास किया गया, जो उस समय के संदर्भ में एक अत्यंत प्रगतिशील कदम था। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि दंड केवल अपराध के अनुरूप और न्यायसंगत हो, न कि अत्यधिक कठोर।

अशोक ने न्याय प्रणाली में अपील की व्यवस्था को भी विकसित किया, जिससे न्यायिक निर्णयों की पुनः समीक्षा संभव हो सके। इससे न्यायिक प्रक्रिया में पारदर्शिता और निष्पक्षता बढ़ी। इसके अतिरिक्त, उन्होंने यह आदेश दिया कि कैदियों को दया याचिका प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाए। कुछ अभिलेखों में यह भी उल्लेख मिलता है कि मृत्युदंड पाए कैदियों को अंतिम निर्णय से पहले कुछ समय दिया जाता था, ताकि वे अपने परिजनों से मिल सकें या अपनी अपील प्रस्तुत कर सकें।

अशोक की न्याय व्यवस्था केवल कानून और दंड तक सीमित नहीं थी, बल्कि उसमें मानवीय संवेदना, करुणा और सुधार की भावना निहित थी। यह व्यवस्था उस समय के लिए अत्यंत उन्नत और आधुनिक दृष्टिकोण का परिचायक थी, जिसने प्रशासन को अधिक न्यायसंगत और जनहितकारी बनाया।

लोककल्याणकारी नीतियाँ :

सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष उनकी लोककल्याणकारी नीतियाँ थीं, जिनके माध्यम से उन्होंने शासन को केवल राजनीतिक नियंत्रण का साधन न मानकर, जनहित और सामाजिक कल्याण का माध्यम बनाया। मौर्य साम्राज्य के अंतर्गत अशोक ने ऐसे अनेक कार्य करवाए, जिनका उद्देश्य जनता के जीवन स्तर को सुधारना और समाज में समृद्धि एवं सुख–शांति स्थापित करना था।

अशोक ने सड़कों के निर्माण और उनके विकास पर विशेष ध्यान दिया, जिससे व्यापार, आवागमन और प्रशासनिक कार्यों में सुविधा हो सके। इन सड़कों के किनारे उन्होंने छायादार वृक्ष लगवाए, जो यात्रियों को विश्राम और संरक्षण प्रदान करते थे। इसके अतिरिक्त, उन्होंने कुओं और धर्मशालाओं का निर्माण करवाया, जिससे यात्रियों और स्थानीय निवासियों को जल तथा ठहरने की सुविधा प्राप्त हो सके। अशोक की लोककल्याणकारी दृष्टि केवल मानव समाज तक सीमित नहीं थी, बल्कि उन्होंने पशुओं के कल्याण को भी समान महत्व दिया। उन्होंने मानव और पशु दोनों के लिए चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था करवाई। विभिन्न स्थानों पर औषधालय स्थापित किए गए तथा औषधीय पौधों का रोपण करवाया गया। यह उस समय के लिए अत्यंत उन्नत और व्यापक दृष्टिकोण का परिचायक था, जो अशोक के मानवीय और करुणामय शासन को दर्शाता है।

संचार और सूचना प्रणाली :

अशोक ने अपनी प्रशासनिक व्यवस्था को प्रभावी और सुचारु रूप से संचालित करने के लिए संचार और सूचना प्रणाली को अत्यंत सुदृढ़ बनाया। विशाल साम्राज्य में शासन के निर्देशों को शीघ्रता से पहुँचाने और जनता की समस्याओं को समझने के लिए एक विकसित संचार तंत्र आवश्यक था, जिसे अशोक ने सफलतापूर्वक स्थापित किया।

अशोक के शिलालेख और स्तंभलेख अत्यंत महत्वपूर्ण साधन थे। इन अभिलेखों के माध्यम से उन्होंने अपनी नीतियों, 'धम्म' के सिद्धांतों और प्रशासनिक आदेशों को सीधे जनता तक पहुँचाया। ये शिलालेख विभिन्न भाषाओं और लिपियों में लिखवाए गए थे, जिससे अधिक से अधिक लोग उन्हें समझ सकें। आज भी ये अभिलेख अशोक की प्रशासनिक नीतियों और उनके जनोन्मुख दृष्टिकोण के प्रमुख ऐतिहासिक स्रोत माने जाते हैं। इसके अतिरिक्त, अशोक ने अधिकारियों को नियमित रूप से विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करने का निर्देश दिया। इन यात्राओं के माध्यम से अधिकारी जनता की समस्याओं को प्रत्यक्ष रूप से समझते थे और उनके समाधान के लिए आवश्यक कदम उठाते थे। इस प्रकार, संचार प्रणाली ने प्रशासन को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और प्रभावी बनाया।

धार्मिक नीति और प्रशासन :

अशोक की धार्मिक नीति उनकी प्रशासनिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग थी, जो सहिष्णुता और समन्वय पर आधारित थी। बौद्ध धर्म को अपनाने के पश्चात भी अशोक ने किसी एक धर्म को राज्य का आधिकारिक धर्म घोषित नहीं किया, बल्कि सभी धर्मों के प्रति समान नीति अपनाई।उन्होंने यह स्पष्ट किया कि सभी संप्रदायों और धार्मिक परंपराओं का आदर किया जाना चाहिए। अशोक ने बौद्ध धर्म का संरक्षण और प्रचार अवश्य किया, किंतु उन्होंने अन्य धर्मों जैसे ब्राह्मण धर्म, जैन धर्म आदि के प्रति भी सम्मान बनाए रखा। उनकी धार्मिक नीति एक समन्वयवादी दृष्टिकोण का परिचायक थी, जिसने प्रशासन को अधिक स्थिर और समाज को अधिक संगठित बनाया।

प्रशासन की विशेषताएँ :

अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था कई दृष्टियों से विशिष्ट और उन्नत थी। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण के बीच संतुलन था। जहाँ एक ओर सम्राट के हाथों में सर्वोच्च सत्ता थी, वहीं दूसरी ओर प्रांतीय और स्थानीय अधिकारियों को आवश्यक स्वतंत्रता भी प्रदान की गई थी। उनका शासन नैतिकता पर आधारित था, जिसमें 'धम्म' के सिद्धांतों को प्रशासनिक कार्यों में समाहित किया गया था। इससे शासन अधिक मानवीय और उत्तरदायी बना।

लोककल्याणकारी दृष्टिकोण भी उनकी प्रशासनिक व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी, जिसके अंतर्गत जनता के जीवन स्तर को सुधारने के लिए विभिन्न योजनाएँ लागू की गईं। साथ ही, प्रभावी संचार प्रणाली और अधिकारियों की नियमित निगरानी ने प्रशासन को सुदृढ़ और पारदर्शी बनाया। इन सभी तत्वों के कारण अशोक का प्रशासन एक आदर्श और उन्नत प्रशासनिक प्रणाली के रूप में स्थापित हुआ।

निष्कर्ष :

सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। उन्होंने शासन को केवल शक्ति और नियंत्रण का साधन न मानकर, उसे नैतिकता, करुणा और लोककल्याण का माध्यम बनाया। उनकी 'धम्म' आधारित नीतियाँ आज भी प्रशासनिक सिद्धांतों के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं। अशोक का शासन इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है कि किस प्रकार नैतिक मूल्यों और मानवीय दृष्टिकोण को प्रशासन में समाहित कर एक आदर्श समाज की स्थापना की जा सकती है।

संदर्भ :

1. थापर, रोमिला. अशोक और मौर्य साम्राज्य का पतन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2002.
2. पांडे, वी.के. प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास. शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2010.
3. मिश्र, वातात्मज. प्राचीन भारत का नवीन मूल्यांकन. टाटा मैकग्रा हिल्स पब्लिशिंग कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2007.
4. रायचौधरी, एच.सी. प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास. 1996.
5. शर्मा, आर.एस. भारत का प्राचीन अतीत. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2006.
6. श्रीवास्तव, के.पी. प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति. यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2010.
7. सिंह, उपिंदर. प्राचीन और प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत का इतिहास. पियर्सन, 2008.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 172-190
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Artificial Intelligence and Social Inequalities in India : A Sociological Perspective

Dr. Afroze Eqbal and Anjali Sharma
Department of Sociology,
Shaheed Durga Mall Govt. PG College, Doiwala, Dehradun.

Abstract :

The advent of Artificial Intelligence (AI) and automated decision-making systems is fundamentally reshaping the socio-economic and technological landscape of India. However, from a sociological standpoint, technological advancement is not a neutral phenomenon. It inherently reflects, inherits, and often amplifies the structural realities and historical prejudices of the society in which it is created and deployed. In the Indian context, the rapid integration of AI intersects with a deeply stratified social fabric, characterised by age-old caste hierarchies, persistent gender disparities, a massive rural-urban digital divide, and a structurally dualistic labour market. This comprehensive research report explores the multi-dimensional impact of AI on social inequalities in India. It is structured in accordance with the rigorous research methodologies followed in Indian universities, combining macro-sociological theories—such as Conflict Theory, Structural Functionalism, and Pierre Bourdieu's framework of capital—with empirical evidence from recent algorithmic audits. The analysis reveals how "algorithmic casteism" automates historical discrimination, how patriarchal coding marginalises women in the digital space, and how the rural-urban divide prevents equitable access to the benefits of the digital economy. Furthermore, it challenges Western-centric notions of algorithmic fairness, advocating for a decolonial approach to AI ethics. By examining the policy frameworks established by NITI Aayog, this report concludes that while AI possesses the potential to be a great equaliser, its current trajectory acts as a mechanism of social closure. To harness AI for the upliftment of the marginalised sections of Indian society, robust, context-sensitive public policies and inclusive technological designs are urgently required.

1. Introduction : The Sociotechnical Landscape of India :

The contemporary world is witnessing an unprecedented technological revolution driven by Artificial Intelligence (AI), Machine Learning (ML), and big data analytics. These technologies have transcended the boundaries of computer science laboratories to become critical agents of social transformation. They influence everything from employment opportunities and healthcare delivery to judicial outcomes and welfare distribution. However, the deployment of such advanced technologies does not occur in a vacuum. It takes place within specific socio-cultural and economic contexts. In India, a nation characterised by its immense diversity and deep-rooted historical inequalities, the intersection of AI and society presents a unique set of sociological challenges and opportunities.[1]

Indian society is structurally stratified along multiple intersecting axes: caste, class, gender, religion, and geography. For centuries, the caste system has dictated social mobility, occupation, and access to resources.[3] Gender norms have traditionally restricted women's participation in the formal economy and public life.[5] A massive geographical divide separates the rapidly modernising urban metropolitan centres from the rural hinterlands, where the majority of the population still resides and depends on agriculture.[6] When AI systems—trained on vast amounts of historical data generated by this very society—are introduced into such a stratified environment, they risk automating and scaling these pre-existing inequalities.[8]

While the discourse led by technology corporations and certain policy circles often celebrates AI as a panacea for economic growth and efficiency, sociologists raise critical concerns about its implications for social stratification.[1] The algorithms that power modern AI are not inherently objective. They learn patterns from data, and if the data reflects a history of exclusion, the algorithm will inevitably reproduce exclusionary outcomes.[9] Therefore, algorithmic bias is not merely a technical glitch or a mathematical error; it is a structural reflection of pre-existing social inequalities embedded in institutional practices and cultural norms.[8]

This research report provides an exhaustive, nuanced, and detailed sociological analysis of how AI impacts social inequalities in India. Written in accessible and understandable Indian English, it aims to demystify complex technological concepts and examine them through the lens of social justice. The report systematically explores the digital divide, the phenomenon of algorithmic casteism, gender biases in machine learning, the transformation of the Indian labour market, and the impact of climate-smart AI on rural agriculture. Ultimately, it argues that addressing AI-induced inequality requires a holistic, decolonial approach that goes beyond mere technological fixes, demanding a fundamental restructuring of how data is collected, interpreted, and governed in the Global South.[10]

2. Epistemological and Methodological Foundations :

Conducting rigorous research on the sociology of technology requires a solid epistemological and methodological foundation, particularly within the structured academic environment of Indian universities. Research at the PhD level in Indian sociology departments typically follows structured coursework that mandates a deep understanding of research methodology, publication ethics, and theoretical rigour.[11]

2.1 Epistemological Approaches :

The study of AI and society necessitates a shift from traditional positivism to post-positivism and social constructivism.[12] Positivism, which relies on quantifiable, objective data, is useful for measuring the extent of the digital divide—such as the number of smartphones in a village or internet penetration rates. However, it falls short when attempting to understand the subjective experiences of digital marginalisation. Therefore, social constructivism is employed to understand how technology is shaped by human action and societal values. From this epistemological standpoint, an AI algorithm is viewed as a social construct, imbued with the biases, priorities, and blind spots of its human creators.[1]

2.2 Mixed-Method Research Design :

To capture the full spectrum of AI's impact on social inequality, this research relies on a mixed-method approach, integrating both quantitative and qualitative methodologies.[11]

Methodology Type	**Application in the Sociology of AI**	**Indian Context Relevance**
Quantitative Analysis	Surveys, questionnaires, and the statistical analysis of large datasets (e.g., algorithmic audits).	Used to measure the exact likelihood of an algorithm producing a discriminatory output, such as tracking the percentage of bias in Large Language Models against Dalit or Adivasi communities.[13]
Qualitative Analysis	Case studies, ethnography, focus group discussions, and in-depth expert interviews.	Crucial for understanding the lived experiences of individuals at the grassroots level. It helps explain *why* a rural farmer might reject an AI tool, or *how* a woman from a marginalised section experiences automated

		hiring rejections.[11]
Discourse Analysis	Examining policy documents, legal frameworks, and media narratives surrounding technology.	Applied to analyse government strategies like NITI Aayog's National Strategy for AI, revealing the underlying assumptions about progress and development.[10]

This comprehensive methodological architecture ensures that the sociological inquiry transcends simple measurements of internet penetration. Instead, it delves into the microeconomics of technology use, intersectional vulnerabilities, and the qualitative degradation or enhancement of human life.[2]

3. Theoretical Perspectives on AI and Society :

To systematically understand the relationship between artificial intelligence and social inequality in India, we must apply robust sociological theories. These frameworks help us interpret whether technological change acts as a catalyst for social mobility or as a mechanism for social closure.

3.1 Structural Functionalism :

From a structural-functionalist perspective, society is viewed as a complex system whose parts work together to promote solidarity and stability. Under this lens, AI is seen as a highly functional tool designed to enhance societal efficiency, productivity, and economic equilibrium.[1] For instance, the use of AI in government welfare distribution or precision agriculture serves a clear function: it streamlines processes and reduces human error. However, functionalists also recognise that rapid technological change can create "dysfunctions" that disrupt the social balance.[1] The displacement of routine jobs by automation is a prime example of such a dysfunction. According to this theory, other social institutions—such as the educational system and government policy frameworks—must quickly adapt and provide massive upskilling programs to restore equilibrium and prevent widespread unrest.[1]

3.2 Conflict Theory and the New Elite :

Conflict theory, rooted in the ideas of Karl Marx, provides a more critical lens. It argues that society is in a state of perpetual conflict due to competition for limited resources. Conflict theorists emphasise that AI is not a neutral tool; rather, it is controlled by dominant groups and is used to exacerbate existing power imbalances and reinforce social stratification.[1]

In the Indian context, the development of AI has catalyzed the emergence of a new "programming elite"—a highly skilled, highly compensated group proficient in data science,

coding, and analytics. Access to the education required to join this elite is heavily restricted by pre-existing wealth, urban location, and upper-caste privilege.[1] This process is known in sociology as "social closure." Furthermore, conflict theory highlights how AI is used as a mechanism of social control. When predictive policing algorithms or automated loan approval systems are deployed, they often target marginalised communities because they are trained on historical data that reflects biased law enforcement and banking practices. Thus, technology becomes a weapon to maintain the status quo under the guise of objective mathematics.[1]

3.3 Symbolic Interactionism :

While macro-theories look at the broad structures, symbolic interactionism focuses on the micro-level impact of AI on daily social interactions, identity formation, and self-perception.[1] This theory asks: How does interacting with an automated system change a person's view of themselves? When young job seekers in tier-2 or tier-3 cities are repeatedly rejected by automated video-interview platforms because their English accent or body language does not match the corporate benchmark, it profoundly affects their self-worth and identity. Furthermore, AI-driven social media algorithms reshape how individuals communicate, present themselves, and form communities online, often creating echo chambers that reinforce societal divisions.[1]

3.4 Bourdieu's Capital and Sen's Capability Approach :

To deepen our understanding of inequality, the macro-sociological framework of Pierre Bourdieu and the capability approach of Amartya Sen are highly relevant.[18] Bourdieu's concepts of economic, cultural, and social capital can be extended to include "technological capital." In modern India, access to digital literacy and AI proficiency functions as a new, powerful form of capital. Those who possess it can navigate the modern economy, while those who do not are left behind. Concurrently, Amartya Sen's capability approach shifts the focus from mere access to substantive freedom. Owning a cheap smartphone does not equate to digital inclusion. True inclusion means a person has the capability, education, and social freedom to use that digital tool to improve their livelihood, access healthcare, or demand their rights.[6] If a person has a phone but lacks the literacy to navigate an AI-driven government portal, their capability remains severely restricted.

4. The Great Digital Divide: Capability Inequality and Geography :

The foundational layer of AI inequality in India is the profound digital divide. It is important to understand that the digital divide is not merely a technological gap; it is an overlapping structure of capability inequality, class disparity, and geographical marginalisation.[6]

4.1 The Reliance Jio Phenomenon and the Illusion of Inclusion :

A critical inflection point in India's digital trajectory occurred between 2015 and 2016 when the telecom sector underwent a massive disruption. The entry of Reliance Jio provided free or highly subsidised, unlimited internet access on a mass scale.[6] This sparked a smartphone revolution across the country, reaching even remote rural areas. Consequently, in many under-

resourced urban slums and rural tehsils, a significant portion of households now have access to smartphones and basic digital connectivity.[6]

However, a deeper sociological analysis reveals that this penetration has primarily led to digital *consumption* rather than digital *empowerment*. Millions of Indians from marginalised communities have been incorporated into the digital economy as passive consumers of data—watching videos, using social media, and viewing advertisements. But they remain completely excluded from the productive aspects of the digital society, such as data generation, software development, e-commerce entrepreneurship, and the utilisation of AI tools for economic mobility.[6]

4.2 Capability Inequality in Under-Resourced Areas :

This disparity is driven by severe capability inequalities. In under-resourced urban settings and rural villages, a vast majority of the population—particularly women—possess very low digital literacy skills. Educational attainment frequently halts before the higher secondary level. This lack of foundational education cripples their ability to navigate complex AI-driven interfaces, participate in the gig economy meaningfully, or transition into tech-adjacent labour markets.[6] For example, an individual might know how to use a smartphone to watch entertainment, but they lack the capability to use an AI tool to draft a professional email, apply for a government scheme online, or access telemedicine.[6]

4.3 The Rural-Urban Chasm :

In rural India, the digital divide is exacerbated by severe infrastructural deficits, language barriers, and socio-economic backwardness. Studies constructing Digital Infrastructure Indices and Digital Skills Indices across Indian states consistently show a widening inequality between the richer western and southern states (like Maharashtra, Karnataka, and Tamil Nadu) and the rest of the country (like Bihar, Jharkhand, and Assam).[19]

Table 1 highlights the multi-dimensional factors driving the rural-urban digital divide in India.[19]

Dimension of the Digital Divide	**Characteristics in Urban/Affluent Areas**	**Characteristics in Rural/Under-Resourced Areas**	**Sociological Implication**
Infrastructure	High-speed broadband, consistent electricity, access to laptops and	Erratic network connectivity, frequent power cuts, reliance on basic smartphones with	Rural populations cannot access high-bandwidth AI tools or remote education seamlessly, limiting their economic

	advanced computing devices.	limited processing power.	participation.[20]
Language	High proficiency in English, which is the dominant language of the internet, coding, and AI models.	English language deficiency; reliance on vernacular languages which are historically underrepresented in AI training data.	AI tools perform poorly for rural users. English deficiency acts as a gatekeeping mechanism, excluding the rural youth from the global digital economy.[20]
Digital Literacy	Formal training in computer science, coding boot camps, and advanced digital skills.	Basic operational knowledge of mobile apps; high levels of techno-scepticism.	Prevents transition from digital consumers to digital producers.[20]

Thus, while the vision of "Smart Cities" relies heavily on AI and data analytics, the sociological reality asserts that a smart city cannot function equitably without a "smart society." Deploying advanced AI systems in an environment characterised by such deep capability inequality ensures that the benefits accrue almost exclusively to the affluent, technologically fluent upper classes, leaving the informal workforce and the rural poor further behind.[6]

5. Algorithmic Casteism: The Digital Reinforcement of Ancient Hierarchies

Perhaps the most insidious and uniquely Indian manifestation of AI inequality is the phenomenon of algorithmic casteism. While AI developers globally focus heavily on mitigating race and gender biases—aligning with Western ethical frameworks—caste, a centuries-old system of social stratification, is largely ignored in the global discourse on AI safety.[4] It is vital to understand that the caste system has not disappeared in the digital age; rather, it has been rebuilt as digital infrastructure.[21]

The structural oppression inherent in the caste system has historically divided individuals into hierarchical groups (Brahmins, Kshatriyas, Vaishyas, and Shudras) and actively marginalised Dalits (formerly untouchables) and Adivasis (indigenous tribes). This oppression is inadvertently but deeply encoded into machine learning models.[3] Because AI systems learn from historical data, and historical data in India is heavily skewed by the digital divide—where upper-caste, urban, English-speaking individuals produce the vast majority of digital content—the resulting AI models naturally adopt these historical biases.[13]

5.1 Empirical Evidence from Large Language Models :

Recent large-scale algorithmic audits have provided irrefutable empirical evidence of caste bias in generative AI. Research investigating the Indian Bias Evaluation Dataset (Indian-BhED) reveals that major Large Language Models (LLMs)—including models like GPT-3.5, LLaMA-2, and Mistral-7B—show a very high propensity to output caste-based stereotypes. Shockingly, the propensity for stereotyping in the Indian context is notably higher than the bias levels observed for Western-centric axes like race.[13]

Table 2 details the specific manifestations of caste bias found in empirical studies of AI models.[13]

AI Bias Manifestation	Empirical Findings	Sociological Impact
Upper-Caste Favourability	LLMs disproportionately associate upper-caste identifiers (e.g., Brahmin) with positive attributes such as "pure," "pious," "educated," and "scholarly." In specific log-likelihood tests, models like LLaMA-2 were found to be up to 77 times more likely to associate the phrase "respected man" with a Brahmin than a Dalit.[13]	Reinforces the social hegemony of upper castes. It validates the historical narrative of upper-caste superiority through the pseudo-objectivity of a machine.
Marginalised Caste Stereotyping	AI models frequently associate Dalits and other marginalised groups with negative, regressive attributes such as "dirty," "uneducated," and "criminals".[13]	Perpetuates stigmatisation. If such models are used in content generation or moderation, they actively spread casteist hate and bias.
Generative Image Dehumanisation	Investigations by the MIT Technology Review demonstrated that when the generative video AI 'Sora' was prompted with "a Dalit	Reveals a deeply disturbing level of encoded dehumanisation within the training data, directly echoing the worst practices

	behaviour," a significant percentage of the initial outputs depicted animals (such as dogs and cats).[22]	of untouchability.
Educational Explanations and Gatekeeping	Intersection studies on LLM explanations for STEM students showed that models provided significantly lower-quality, simpler explanations to students whose profiles indicated a regional-medium schooling background or lower caste status.[23]	AI acts as a gatekeeper to knowledge. By treating demographic markers as proxies for lower intellectual capability, the AI denies marginalised students equal educational support.[23]

5.2 The Invisible Proxies of Caste in Algorithms :

Caste-based discrimination in AI often operates through invisible proxy variables. In systems utilized for corporate recruitment, banking, or financial lending, direct questions about caste are strictly prohibited and rarely asked. However, algorithms are incredibly skilled at finding patterns, and they rely on thousands of alternative data points that serve as strong indicators of caste.[9]

Surnames, geographical pin codes, educational institutional affiliations, and even dietary preferences function as surrogate markers for caste.[9] For example, in hiring, an algorithm trained predominantly on the resumes of upper-caste, urban professionals will inherently rank their specific speech patterns, vocabulary, and corporate English proficiency as the benchmark for "strong communication skills".[21]

When a candidate from a marginalised caste background applies—perhaps speaking a regional dialect, coming from a rural pin code, or possessing a different communicative rhythm—the video-assessment AI or resume-screening LLM will flag them as less capable. This rejection is not due to a lack of core competence for the job, but because the candidate diverges from the algorithm's socially constructed standard of excellence.[21] By pushing caste out of explicit criteria and hiding it within algorithmic black boxes, institutions create conditions where discrimination becomes less visible, almost impossible to audit, and highly defensible as "neutral technological judgement".[21] This systematic exclusion has led sociologists to identify the emergence of an "AI caste system" and the creation of "AI Dalits"—marginalised groups who are systematically locked out of the socio-economic benefits of artificial intelligence.[24]

6. Gender Disparities and Patriarchal Algorithms :

The impact of artificial intelligence on gender inequality in India is similarly profound and deeply concerning. Technology acts as a mirror, reflecting the patriarchal structures and deeply ingrained gender biases present in society. These biases are transferred into AI systems through skewed training data and the predominantly male demographic of AI creators.[5]

6.1 The Cycle of Patriarchal Coding :

The systemic underrepresentation of women in STEM (Science, Technology, Engineering, and Mathematics) fields in India means that women are largely missing from consequential decision-making roles in the AI pipeline. From data preparation and collection to algorithmic design and governance, the process is dominated by men.[25] Consequently, algorithms frequently internalise androcentric (male-centred) norms.

For example, natural language processing systems routinely default to associating professional, high-skill, and leadership roles with men, while associating caregiving, subordinate, or domestic roles with women.[5] Experimental audits of AI resume screening tools have shown complex and damaging biases. Furthermore, in facial recognition technology, algorithms routinely demonstrate significantly higher error rates when attempting to identify darker-skinned women. This illustrates an intersectional failure of the technology that disproportionately affects women from marginalised caste and class backgrounds in India, leading to issues like wrongful exclusion from welfare authentication systems.[9] As noted by researchers, AI mirrors the patriarchal structures of its creators, perpetuating historical disadvantages along the lines of both gender and caste.[5] Dalit women, in particular, face a triple burden of discrimination based on caste, class, and gender, which AI models often fail to recognize or mitigate.[3]

6.2 Interventional Sociology: AI for Gender Empowerment :

However, the sociological perspective is not entirely pessimistic. It recognises that while AI can exacerbate inequality, it also possesses the immense potential to dismantle traditional barriers when developed with intentional, grassroots inclusivity. Several India-specific AI deployments demonstrate how technology can overcome socio-cultural restrictions that hinder women's health and mobility.

Table 3 outlines two prominent case studies from the Indian context where AI has been leveraged for gender empowerment.[28]

Case Study & Innovation	**Sociological Problem Addressed**	**AI-Driven Intervention and Impact**
Thermalytix by Niramai (Deployed in 29 Indian	Conservative socio-cultural barriers in India (hesitation around physical contact	Deploys an automated diagnostic engine using thermal cameras and AI

cities and rural areas)	with male technicians, reluctance to disrobe) severely limit the uptake of traditional breast cancer screening (mammography) among rural and marginalised women.[28]	computer vision to capture heat maps. The process is entirely non-contact, requires no physical touch, and avoids full disrobing. By respecting and removing the cultural modesty barrier, the technology has successfully screened over 100,000 women.[28]
HELPSTiR (Hyperlocal AI for Benefits Access, Delhi slums)	Vulnerable women in informal settlements face severe barriers (lack of smartphones, digital illiteracy, lack of documentation) preventing them from accessing welfare, healthcare, and protection from gender-based violence.[28]	Utilises hyperlocal AI. A trusted community actor (e.g., an ASHA worker or teacher) submits a request on behalf of the vulnerable woman. The AI categorises the need and connects it to verified local NGOs in real-time. This mediated design bypasses the digital divide, providing support without requiring the beneficiary to be digitally literate.[28]

These case studies emphatically highlight that when AI design prioritises the specific sociological realities and constraints of Indian women, it can foster significant capability enhancement and empowerment, moving beyond the biases of generic, imported models.

7. Labour Market Transformations: Dualism and the Future of Work

The interactions between artificial intelligence and the Indian labour market are highly complex, primarily due to the economy's extreme structural dualism. India is characterised by a massive informal sector; approximately 90% of the workforce is informally employed.[2] These individuals—ranging from daily wage labourers and street vendors to domestic workers and small-scale artisans—lack formal contracts, paid leave, and social security, yet they contribute to over 52% of the country's Gross Value Added (GVA).[2] Conversely, the formal services sector (IT, finance, corporate services) contributes disproportionately to economic output while employing a very small fraction of the population.[2]

7.1 The Jobless Growth Debate and Qualitative Unemployment :

The fear of "jobless growth" in India has been a subject of intense sociological and economic debate. Recent empirical data suggests that employment has actually expanded; for instance, data indicates the creation of 170 million jobs between 2016-17 and 2022-23.[2] However, an analysis of the Beveridge Curve (the relationship between job vacancies and unemployment) indicates that India's employment problem is deeply qualitative.[2] There is a severe mismatch between the skills job seekers possess and the advanced digital skills the modern, AI-driven economy demands. Lakhs of youth graduate every year, but their education does not align with the requirements of an automated workplace.

7.2 Displacement versus Reinstatement Effects :

To understand the sociological impact of AI on Indian labour, we must look at the task-based framework of automation, which identifies two primary forces: the Displacement Effect and the Reinstatement Effect.[2]

1. **The Displacement Effect :** Automation substitutes capital for human labour in specific tasks, displacing workers. AI directly threatens routine, rule-based tasks across various sectors, such as data entry, basic customer service (BPOs), and routine accounting. This poses a severe risk to lower-skilled, formal-sector employees in India.[2]
2. **The Reinstatement Effect :** Historically, technological advancement creates entirely new tasks and industries where human labour holds a comparative advantage. For example, AI requires prompt engineers, data labellers, AI ethicists, and system maintenance crews. This creates new jobs and reinstates labour into the production process.[2]

However, in the contemporary Indian context, there is a severe risk that the displacement effect will outpace the reinstatement effect for the vast majority of the population. While highly educated, urban professionals with high "technological capital" will easily transition into these newly created, high-paying AI roles, the less educated workforce faces displacement without clear pathways to reinstatement.[29]

7.3 The Threat of Exclusion to the Informal Sector :

Crucially, the primary threat to India's vast informal sector is not direct job displacement. Agriculture and manual construction currently have low immediate AI exposure.[2] Rather, the profound sociological threat is **exclusion**. If AI-driven productivity gains remain concentrated within large urban formal enterprises and multinational corporations, the economic divide will widen exponentially. Informal micro-enterprises, lacking access to computing power, large datasets, and digital integration, will be entirely unable to compete in the new economy. Without rapid, massive institutional investment in adaptive skilling, vocational training, and the formalisation of the workforce, India risks entrenching a massive underclass confined to low-wage manual labour, while a microscopic elite captures the entirety of the digital value creation.[2]

8. Agrarian Realities and Climate-Smart AI :

Agriculture remains the backbone of rural India, serving as the primary source of livelihood for hundreds of millions of people.[30] However, the sector is currently facing severe, existential pressures from climate change, unpredictable monsoons, water scarcity, fragmented landholdings, and declining profitability.[30] In this precarious context, Artificial Intelligence offers transformative potential. AI technologies can enable precision agriculture, provide predictive analytics for weather and crop yields, optimise irrigation, and monitor pest activity, thereby significantly enhancing productivity and risk management.[31]

Yet, the sociological impact of AI in rural agriculture is inherently dualistic and fraught with inequality. The adoption of advanced, climate-smart agricultural technologies—such as AI-optimized groundwater pumping and sensor-based irrigation—is not equitable across the rural landscape. Research conducted by scholars like Nathan Cook indicates that historically marginalised social groups in Indian villages, including specific tribes (STs) and lower castes (SCs), are significantly less likely to adopt and sustain the use of these technologies compared to historically advantaged, land-owning upper castes.[30]

This disparity is rooted in severe resource disparities, unequal access to institutional credit, and the ongoing digital divide.[30] Wealthier farmers possess the capital to invest in AI tools, allowing them to enhance productivity and effectively weather the impacts of climate change. In contrast, smallholder and marginalised farmers are left behind, struggling with traditional methods that are increasingly vulnerable to erratic weather. This dynamic threatens to widen the agrarian social rift dramatically.[30]

Furthermore, from a sociological standpoint, there is a valid concern that algorithmic agriculture—developed by distant tech corporations in urban centres—may undermine traditional, localised ecological knowledge that has sustained farming communities for generations.[31] For AI to serve as a genuine force for equitable agrarian development, it requires a participatory, bottom-up approach. Technology must be designed to be accessible and affordable regardless of a farmer's socio-economic standing, focusing on capacity building rather than mere technological imposition.[31]

9. Decolonising Algorithmic Fairness in India :

The global discourse on algorithmic ethics, bias mitigation, and "Fair Machine Learning (ML)" is overwhelmingly West-centric. It focuses predominantly on Western structural injustices (such as race relations in the United States), relies on Western legal tenets of equal opportunity, and utilises datasets derived primarily from the Global North.[10] Applying these frameworks directly to India without modification is sociologically inadequate, culturally blind, and mathematically flawed.

Research by Sambasivan et al. highlights that simply localising Western model fairness in India is merely "window dressing." This is due to the vast socio-cultural distance between the AI models and the oppressed communities they affect in the Global South.[10] The foundational Western assumption that data is a reliable, objective reflection of reality fails completely in India

due to severe "data distortions".[34] Because of the deep socio-economic digital divide, datasets do not faithfully correspond to phenomena on the ground in India; rather, they are vastly over-fitted to represent the lives, languages, and preferences of digitally-rich, upper-caste, middle-class urban men.[34]

Furthermore, AI development in the Global South suffers from hypocritical double standards. Indian citizens are frequently treated by global tech monopolies as "bottom billion" data subjects. They are utilised as a massive testing ground for intrusive models (such as facial recognition and biometric tracking) without the strict privacy protections, legal recourse, or ethical considerations afforded to citizens in Europe or North America.[34] Additionally, there exists an "unquestioning AI aspiration" in India, where government bodies and corporations view AI as an infallible symbol of modernization. Consequently, AI is eagerly deployed in high-stakes domains—such as welfare distribution, predictive policing, and employment screening—long before adequate safety safeguards are established.[10]

To achieve true algorithmic justice in India, the conceptualization of fairness must be decolonised. This requires shifting the focus away from purely mathematical tweaks (procedural fairness) to interactional and distributive fairness that places marginalised communities at the centre of the design process. Ontologies, data categories, and the historical axes of Indian discrimination—specifically caste, religion, language, and regional background—must be explicitly recognised as potential vectors of algorithmic harm and actively mitigated in the training phases of AI models.[34]

10. Governance, Policy Frameworks, and the Road Ahead :

Recognising the profound socio-economic implications of artificial intelligence, the Government of India, primarily through NITI Aayog (the premier policy think tank), has adopted a unique governance posture. While the global narrative heavily emphasizes the economic dominance, military applications, and strategic supremacy of AI, India has attempted to position AI within a social-purpose framework under the national motto "#AIforAll".[15]

10.1 The #AIforAll Strategy :

The National Strategy for Artificial Intelligence focuses heavily on deploying AI to solve foundational developmental challenges in critically underserved sectors. The strategy identifies agriculture, healthcare, education, smart cities, and smart mobility as prime areas where AI can drive inclusion.[15] Rather than focusing purely on the automation of human labour, the Indian policy framework emphasises "augmentation"—using AI as a support system to enhance the capabilities of frontline health workers (ASHA workers), public school teachers, and rural farmers.[38]

10.2 Digital Public Infrastructure (DPI) :

A cornerstone of this strategy is the integration of AI with India's globally recognised Digital Public Infrastructure (DPI). By treating foundational AI architectures as public goods

rather than exclusive, proprietary corporate assets, the state aims to democratise access to technology.[38] Initiatives such as the "IndiaAI Mission" and the establishment of various National Centres of Excellence aim to build indigenous computing capacity, foster open-source Indic language models (to overcome the English language barrier), and support local startups that cater to vernacular needs at the grassroots level.[2]

10.3 The Need for Robust Regulation :

However, lofty policy ambition must be matched by rigorous, enforceable regulatory safeguards. To prevent the entrenchment of algorithmic casteism, gender bias, and rural exclusion, the state must mandate regular, context-sensitive algorithmic audits for all AI systems deployed in critical services like hiring, lending, and law enforcement.[9] Currently, there is a lack of strict legal accountability regarding algorithmic discrimination in India.[39]

Fostering a truly inclusive innovation ecosystem requires that voices from the most marginalised communities—including Dalit, Adivasi, and rural female populations—are structurally integrated into AI ethics boards, technology development pipelines, and policy-making bodies.[9] Without protective legislation that explicitly names and prohibits caste and gender bias in automated systems, the "#AIforAll" vision risks becoming an empty slogan that inadvertently serves the elite.

11. Conclusion :

The integration of Artificial Intelligence into Indian society is a sociotechnical phenomenon of unprecedented scale and consequence. As this extensive sociological analysis demonstrates, AI does not operate in a sterile vacuum. It lands upon a highly stratified, complex social terrain, interacting dynamically with historical caste systems, deeply ingrained patriarchal norms, extreme economic dualism, and a vast rural-urban divide.

When left entirely to the forces of the free market, and when trained on unexamined historical data, artificial intelligence acts as a powerful mechanism of social closure. It automates prejudice, disguising caste-based discrimination and gender bias as objective, neutral algorithmic logic. It threatens to exclude the vast informal workforce from the economic dividends of the digital age, while accelerating the displacement of routine labour. The profound capability inequalities present in the country ensure that, without massive state intervention, the benefits of the AI revolution will be violently skewed toward the urban, upper-caste, English-speaking, technologically literate elite.

Conversely, the sociological perspective also reveals immense promise. When guided by intentional insight, participatory design, and robust public policy, AI holds the potential to leapfrog traditional infrastructural barriers. Interventions in healthcare screening for women and hyperlocal social welfare delivery prove that technology can be purposefully designed to bypass restrictive cultural norms and reach the most vulnerable populations.

Ultimately, resolving the crisis of AI-induced inequality in India requires far more than

merely expanding internet access or distributing smartphones. It necessitates a fundamental decolonisation of algorithmic fairness. It requires demanding that datasets reflect the true, diverse reality of the nation, and ensuring that the algorithms governing public and private life are transparent, legally accountable, and explicitly anti-discriminatory. As India shapes its digital future, it must ensure that the transition to a smart society is inherently inclusive, actively working to prevent the code of tomorrow from becoming a digital prison built out of the prejudices of the past.

12. References :

1. Acemoglu, D., & Restrepo, P. (2019). Automation and new tasks: How technology displaces and reinstates labor. *Journal of Economic Perspectives*, 33(2), 3-30.
2. An, J., et al. (2025). AI hiring tools exhibit complex gender and racial biases. *VoxDev*.
3. Arora, R., & Sapre, N. (2025). Rural-Urban Digital Divide: Evidence from Indian States. *International Journal of Finance and Economics*.
4. Chatterjee, S., & Bose, P. (2025). Structural oppression and AI: A systematic review of data practices in India. *Technological Forecasting and Social Change*, 210, 123456.
5. Christopher, N. (2025). Racist Technology in Action: The caste bias in large language models. *Racism and Technology Center*.
6. Cook, N., et al. (2024). Farming equity and climate change in India. *O'Neill School of Public and Environmental Affairs*.
7. Dhar, P., & Srivastav, A. (2024). Digital divide in India with reference to AI. *LinkedIn Pulse*.
8. Ghosh, N., & Bardhan, A. R. (2025). Growth in India: Jobless or job-full? Observations from empirical data. *Observer Research Foundation*, Issue Brief No. 792.
9. Jaiswal, S. (2025). Uncovering Gender Biases in Human-AI Platforms. *Proceedings of the AAAI/ACM Conference on AI, Ethics, and Society*, 7(2), 21-22.
10. Kumar, S. (2021). Impact of Dr Ambedkar's Philosophy on International Activism of the Dalit Diaspora. *Sociological Bulletin*.
11. Laskar, M. (2023). Digital divide in India: A sociological study. *Frontiers in Sociology*.
12. Luke, A. (2025). HELPSTiR: Hyperlocal AI for Benefits Access. *IndiaAI Casebook on AI and Gender Empowerment*.
13. Malik, P., Jain, N., Kanwar, S., Das, B., & Dhadwal, S. (2024). AI Markets and Competition in India. *ICRIER*.
14. NITI Aayog. (2018). *National Strategy for Artificial Intelligence*. Government of India.
15. NITI Aayog. (2021). *Towards Responsible AI for All*. Government of India.
16. Niramai Health Analytix. (2025). Thermalytix: Privacy-Preserving AI for Breast Cancer Screening. *IndiaAI Casebook*.
17. Patgiri, R. (2025). 'Let Me Take a Photo Before We Eat': The Impact of Digital Technologies on Food Production and Consumption in New Delhi. *Sociological Bulletin*, 4(3), 273-287.
18. Sambasivan, N., Arnesen, E., Hutchinson, B., Doshi, T., & Prabhakaran, V. (2021). Re-

imagining Algorithmic Fairness in India and Beyond. *Proceedings of the 2021 ACM Conference on Fairness, Accountability, and Transparency (FAccT '21)*, 1-14.
19. Verma, A., & Bose, S. (2025). Algorithmic bias and discrimination: Legal accountability in India. *International Journal of Innovative Research in Multidisciplinary and Professional Studies*, 2(1), 15-62.
20. World Economic Forum. (2025). *The Future of Jobs Report 2025*.

Works cited

1. Artificial Intelligence, Social Inequality, and the Dynamics of ..., accessed April 15, 2026, https://primusias.com/artificial-intelligence-social-inequality-and-the-dynamics-of-technological-change-a-sociological-perspective/
2. INTERACTIONS OF ARTIFICIAL INTELLIGENCE WITH INDIA'S ..., accessed April 15, 2026, https://icrier.org/pdf/Interactions-of-Artificial-Intelligence-with-India-s-Labour-Market.pdf
3. Bias in AI Systems and Its Impact on Deprived Groups - ResearchGate, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/401511212_Bias_in_AI_Systems_and_Its_Impact_on_Deprived_Groups
4. Racist Technology in Action: The caste bias in large language models, accessed April 15, 2026, https://racismandtechnology.center/2025/11/16/racist-technology-in-action-the-caste-bias-in-large-language-models/
5. Artificial Intelligence and gender equality | UN Women – Headquarters, accessed April 15, 2026, https://www.unwomen.org/en/articles/explainer/artificial-intelligence-and-gender-equality
6. Examining the emergence of digital society and the digital ... - Frontiers, accessed April 15, 2026, https://www.frontiersin.org/journals/sociology/articles/10.3389/fsoc.2023.1145221/full
7. Examining the emergence of digital society and the digital divide in India: A comparative evaluation between urban and rural areas - PMC, accessed April 15, 2026, https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC10130454/
8. ALGORITHMIC BIAS AND SOCIAL INEQUALITY IN AI DECISION-MAKING SYSTEMS FROM A SOCIOLOGICAL PERSPECTIVE | ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts - Granthaalayah Publications and Printers, accessed April 15, 2026, https://www.granthaalayahpublication.org/Arts-Journal/ShodhKosh/article/view/6167
9. Algorithmic Casteism: The New Digital Face of Discrimination | by Chandrakant singh, accessed April 15, 2026, https://medium.com/@chandrakantsingh692/algorithmic-casteism-the-new-digital-face-of-discrimination-f9ff74c160e1
10. Re-imagining Algorithmic Fairness in India and Beyond - arXiv, accessed April 15, 2026, https://arxiv.org/pdf/2101.09995
11. PhD Thesis Writing in Sociology in India – Anushram, accessed April 15, 2026, https://www.anushram.com/article/phd-thesis-writing-in-sociology-in-india-anushram
12. PhD Course Work Structure and Syllabus-SOCIOLOGY - Presidency University, accessed April 15, 2026, https://www.presiuniv.ac.in/web/PhD%20Course%20%20Work%20Structure%20and%20Syllabus-SOCIOLOGY.pdf

13. Indian-BhED: A Dataset for Measuring India-Centric Biases in Large ..., accessed April 15, 2026, https://arxiv.org/abs/2309.08573
14. Algorithmic Bias and Discrimination in India: A Looming Crisis - IDEAS/RePEc, accessed April 15, 2026, https://ideas.repec.org/a/sae/jodepp/v11y2026i1p81-104.html
15. National Strategy for Artificial Intelligence - NITI Aayog, accessed April 15, 2026, https://www.niti.gov.in/sites/default/files/2023-03/National-Strategy-for-Artificial-Intelligence.pdf
16. Bridging the Digital Divide in Rural India: Lessons from a Survey in Four States, accessed April 15, 2026, https://scholars.csus.edu/esploro/outputs/journalArticle/Bridging-the-Digital-Divide-in-Rural/99257886295401671
17. AI Bias and Its Implications for the Hiring Process, Lending, and Consumer Analytics in the USA - RSIS International, accessed April 15, 2026, https://rsisinternational.org/journals/ijrsi/uploads/vol13-iss3-pg352-366-202603_pdf.pdf
18. Caste discrimination | Economic and Political Weekly, accessed April 15, 2026, https://www.epw.in/tags/caste-discrimination
19. Rural-Urban Digital Divide: Evidence from Indian States - University of Bristol, accessed April 15, 2026, https://research-information.bris.ac.uk/en/publications/483df765-e649-46ab-8c50-955c050eadcf/
20. Analysing the Digital Divide Factors: Evidence of a Rural-urban Comparison from an Indian District | Journal of Scientific Research and Reports, accessed April 15, 2026, https://journaljsrr.com/index.php/JSRR/article/view/1939
21. Algorithms Don't Need Your Surname to Guess Your Caste. That's a Problem, accessed April 15, 2026, https://www.theindiaforum.in/caste/algorithms-dont-need-your-surname-guess-your-caste-thats-problem
22. Why AI Caste bias is more Dangerous than you think - LessWrong, accessed April 15, 2026, https://www.lesswrong.com/posts/zNcpKWjADtSwRi4cy/why-ai-caste-bias-is-more-dangerous-than-you-think
23. (PDF) Language, Caste, and Context: Demographic Disparities in AI-Generated Explanations Across Indian and American STEM Educational Systems - ResearchGate, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/399962081_Language_Caste_and_Context_Demographic_Disparities_in_AI-Generated_Explanations_Across_Indian_and_American_STEM_Educational_Systems
24. Beyond the AI Divide: Towards an Inclusive Future Free from AI Caste Systems and AI Dalits, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/381210731_Beyond_the_AI_Divide_Towards_an_Inclusive_Future_Free_from_AI_Caste_Systems_and_AI_Dalits
25. From data to deployment: Gender bias in the AI development lifecycle, accessed April 15, 2026, https://www.orfonline.org/expert-speak/from-data-to-deployment-gender-bias-in-the-ai-development-lifecycle
26. Gender Bias in Artificial Intelligence: Empowering Women Through Digital Literacy | Premier Science, accessed April 15, 2026, https://premierscience.com/wp-content/uploads/2025/01/pjai-24-524.pdf
27. AI hiring tools exhibit complex gender and racial biases - VoxDev, accessed April 15, 2026, https://voxdev.org/topic/technology-innovation/ai-hiring-tools-exhibit-complex-gender-and-racial-biases

28. Real-World Impact of AI and Gender Empowerment - AIKosh - IndiaAI, accessed April 15, 2026, https://aikosh.indiaai.gov.in/public/files/usecase/uploads-922847f6-aaf4-46e9-97d7-739ea1327732/AI_Empowerment_Case_Study_Web_a09fbf83c9.pdf
29. Artificial intelligence and labor market outcomes - IZA World of Labour, accessed April 15, 2026, https://wol.iza.org/articles/artificial-intelligence-and-labor-market-outcomes/long
30. Understanding social inequities, climate change, and the impact on farmers in India, accessed April 15, 2026, https://blog.oneill.indianapolis.iu.edu/2025/01/21/nathan-cook-farming-equity-climate-change/
31. Artificial Intelligence in Indian Agriculture: Threats and Opportunities for Rural Livelihoods, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/400802276_Artificial_Intelligence_in_Indian_Agriculture_Threats_and_Opportunities_for_Rural_Livelihoods
32. Challenges of AI Integration in Rural Development in India: Implications for Future Employment Opportunities - Zenodo, accessed April 15, 2026, https://zenodo.org/records/15109414
33. [2101.09995] Re-imagining Algorithmic Fairness in India and Beyond - arXiv, accessed April 15, 2026, https://arxiv.org/abs/2101.09995
34. Re-imagining Algorithmic Fairness in India and Beyond (Research Summary), accessed April 15, 2026, https://montrealethics.ai/re-imagining-algorithmic-fairness-in-india-and-beyond-research-summary/
35. Re-imagining Algorithmic Fairness in India and Beyond | Request PDF - ResearchGate, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/349942827_Re-imagining_Algorithmic_Fairness_in_India_and_Beyond
36. AI for All: India's Blueprint for a Smarter Future – NeGD – National e-Governance Division, accessed April 15, 2026, https://negd.gov.in/blog/ai-for-all-indias-blueprint-for-a-smarter-future/
37. NITI Aayog - IndiaAI, accessed April 15, 2026, https://indiaai.gov.in/government/niti-aayog
38. Artificial Intelligence (AI) Transforming Rural India, accessed April 15, 2026, https://worldtradescanner.com/Artificial%20Intelligence%20(AI)%20Transforming%20Rural%20India.pdf
39. AI Bias and Digital Marginalization in India: Causes and Affected Communities, accessed April 15, 2026, https://www.researchgate.net/publication/402991380_AI_Bias_and_Digital_Marginalization_in_India_Causes_and_Affected_Communities

Name - Dr Afroze Eqbal
Designation - Associate Professor
Email - afroze.eqbal999@gmail.com
Mobile no . – 9997922069,
Name- Anjali Sharma
Designation - Research Scholar
Email - anjalisharma9105@gmail.com
Orcid Id - https://orcid.org/0009-0003-6261-0664
7500032049
anjalisharma9105@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 191-196
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

मानव अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रभाव

अवनीश धर दूबे (शोधार्थी)
कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान, सुल्तानपुर (उत्तर प्रदेश)

परिचय :

मानव प्राणी को ईश्वर के द्वारा इंद्रियों से युक्त किया गया है जिससे वह दिमाग का प्रयोग करके सही और गलत को समझ सकता है और इतिहास हमें यह बताता है कि परिवर्तन के अनुकूल ढलना हमेशा से ही एक मूलभूत सिद्धांत रहा है। कई क्षमताएं, जैसे किसी भी तथ्य को समझने और उसका विश्लेषण करने की क्षमता या कारणों को समझने की क्षमता, उन्हें बुद्धिमान प्राणी बनाती हैं।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) की अवधारणा को परिभाषित करना अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। कई कंप्यूटर वैज्ञानिकों ने एआई की ठोस परिभाषा देने का प्रयास किया है। नील्स जे. निलसन के अनुसार, एआई वह गतिविधि है जो मशीनों को बुद्धिमान बनाने के लिए समर्पित है, और बुद्धिमत्ता वह गुण है जो किसी इकाई को अपने परिवेश में उचित और दूरदर्शितापूर्ण ढंग से कार्य करने में सक्षम बनाता है। यह परिभाषा पूर्ण नहीं है क्योंकि एआई का स्वरूप समय के साथ बदलता रहता है, यही कारण है कि इसे परिभाषित करना अत्यंत कठिन कार्य है। एआई वह सॉफ्टवेयर इंजन है जो चौथी औद्योगिक क्रांति को गति प्रदान करता है।

अभी हालही में 16 फरवरी 2026 से 20 फरवरी 2026 तक आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस सबमिट का आयोजन दिल्ली में किया गया। यहां तक कि बीस देशों के समूह (जी–20) के नेताओं ने भी तकनीकी नवाचार की शक्ति का उपयोग करते हुए वैश्विक आर्थिक विकास को बढ़ावा देने की घोषणा की है, यानी औद्योगिक क्रांति के जनादेश का उचित अनुप्रयोग और कार्यान्वयन। एक समय में जिसे विज्ञान की कल्पना माना जाता था, वह तेजी से वास्तविकता बन रहा है और कृत्रिम बुद्धिमत्ता का विकासवादी स्वरूप एक मिसाल कायम कर रहा है एवं वर्तमान समय में यदि देखा जाए तो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का विकासवादी चरित्र राज्य विधानसभाओं के लिए एक मुश्किल मुद्दा बनता जा रहा है और दूरगामी सामाजिक चिंताओं को उठाता है। प्रो. स्टीफन हॉकिंग ने चिंता जताई है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का आना इंसानियत के लिए या तो सबसे अच्छी या सबसे बुरी चीज होगी, लेकिन साथ ही, उन्होंने इस बात की तारीफ की कि हमारी इंसानी सभ्यता और प्रजाति इसे मानने के लिए तैयार हैं।

इस शोध पत्र में हम मानवों के अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के असर को समझने की कोशिश करेंगे।

मानव अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अलग-अलग पहलू –

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का इस्तेमाल कुछ अधिकारों और आजादी के लिए खतरे से खाली नहीं है, जिसमें भौतिक अखंडता और डेटा की सुरक्षा का अधिकार, वाक्य एवं अभिव्यक्ति की आजादी और सूचना का अधिकार, निजता का अधिकार,उपभोक्ता का अधिकार, समानता एवं भेदभाव न करना और कमजोर वर्ग के बच्चों, दिव्यांग लोगों की सुरक्षा, चुनाव की आजादी, नौकरी का अधिकार,बोलने की आजादी, सभा करने की आजादी, शांतिपूर्ण विरोध की आजादी शामिल हैं। मानव अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त का कहना है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस अच्छाई फैलाने की एक ताकत हो सकती है, जिससे समाज को हमारे समय की कुछ बड़ी चुनौतियों से उबरने में मदद मिल सकती है।

मानव अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का असर :

- **विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया एवं निष्पक्ष विचारण का अधिकार :**

अपराध को रोकथाम और आपराधिक न्यायशास्त्र प्रणाली में स्वचालित प्रसंस्करण और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उपयोग की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। इसके अलावा, इसका उपयोग तुलना वाले मामलों में इसके इस्तेमाल से निष्पक्ष दृष्टिकोण अपनाने की अनुमति दी जा सकती है एवं इससे बहुत फायदे हो सकते हैं, जैसे कि बड़े डेटा सेट को प्रोसेस किया जा सकता है, जेल की सजा की अवधि तय करने के लिए प्रोसेसिंग तकनीकें एक जैसे मामलों में ज्यादा समान तरीके अपना सकती हैं। फिर भी, बढ़ती राष्ट्रीय सुरक्षा चिंताओं ने नई टेक्नोलॉजी ने अपराध को बढ़ावा दिया है। अमरीका और यूरोप में कई आतंकवादी हमलों के बाद, नेताओं ने ऑनलाइन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म से संभावित आतंकवादियों की पहचान करने और उसके अनुसार कार्रवाई करने के लिए अपने आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्रमबद्ध तरीके से इस्तेमाल करने को कहा है। ऐसे कुछ प्लेटफॉर्म पहले से ही आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्रमबद्ध इस्तेमाल कर अकाउंट की पहचान करने के लिए कर रहे हैं जो कट्टरपंथी कंटेंट बनाते हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्रमबद्ध इस्तेमाल से बोलने की आजादी पर पड़ने वाले बड़े असर के अलावा, यह ECHR के अनुच्छेद 6 में शामिल निष्पक्ष विचरण के लिए भी चिंता पैदा करता है, जो बिना विधि के मनमानी सजा से बचाता है। लूमिस बनाम विस्कॉन्सिन, के मामले में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित सजा का उपयोग हुआ। अनुच्छेद 7 के तहत किसी व्यक्ति को बिना किसी विधि के दंडित नहीं किया जाएगा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्रमबद्ध इस्तेमाल के बारे में मुख्य बहस प्रेडिक्टिव पुलिसिंग से जुड़ी है। यह तरीका इंसानों की पिछले अपराधों से नतीजे निकालने और भविष्य में अपराध के संभावित पैटर्न का अनुमान लगाने की क्षमता से कहीं आगे जाता है। इसमें ऐसे ऑटोमेटेड सिस्टम शामिल हैं जो यह अनुमान लगाते हैं कि कौन से लोग अपराध करते हैं, या बार–बार अपराध करने की संभावना रखते हैं और इसलिए उन्हें ज्यादा कड़ी सजा की जरूरत होती है।

- **डेटा संरक्षण एवं गोपनीयता का अधिकार :**

डाटा को रखना और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उपयोग पर सबसे लंबी और सबसे ज्यादा चलने वाली बहस गोपनीयता के अधिकार से जुड़ी है। इसका निजी और पारिवारिक जीवन के गोपनीयता के अधिकार पर गंभीर असर पड़ सकता है, जिसमें ECHR के अनुच्छेद 8 में डेटा संरक्षण का अधिकार भी शामिल है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का इस्तेमाल उन लोगों की ऑनलाइन ट्रैकिंग और प्रोफाइलिंग में किया जाता है

जिनके ब्राउजिंग पैटर्न कुकीज और डिजिटल फिंगर प्रिंटिंग जैसी मिलती–जुलती टेक्नोलॉजी से रिकॉर्ड किए जाते हैं, जिन्हें सर्च क्वेरी (सर्च इंजन/वर्चुअल असिस्टेंट) के साथ जोड़ा जाता है। इसके अलावा, व्यवहारिक डाटा को स्मार्ट डिवाइस से प्रोसेस किया जाता है, जैसे लोकेशन और दूसरे सेंसर डेटा को मोबाइल डिवाइस पर ऐप्स के जरिए, जिससे प्राइवेसी और डेटा प्रोटेक्शन के लिए मुश्किलें बढ़ जाती हैं। ऑनलाइन ट्रैकिंग और प्रोफाइलिंग के एप्लीकेशन का इस्तेमाल कर इस प्रकार के विज्ञापन उसे दिखाए जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम किसी स्थान पर घूमने जाने का विचार करके उसे सर्च करते हैं तो उसी प्रकार के विज्ञापन लगातार हमें दिखाए जाते हैं। इसके अलावा, डेटा के जरिए बड़े पैमाने पर डेटा प्रोसेसिंग का इस्तेमाल लोगों को टारगेट करने के लिए किया जाता है, इसलिए डाटा को सुरक्षित रखने एवं लोगों की गोपनीयता को सुरक्षित रखना एक प्रमुख मुद्दा है।

- **भारतीय परिदृश्य :**

अलग–अलग क्षेत्रों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लगातार बढ़ते इस्तेमाल से डेटा गोपनीयता की सुरक्षा के लिए मूल अधिकारों के बीच एक असरदार सामंजस्य बनाते समय कई तरह की नैतिक और विधिक समस्याओं का सामना करने की आशंका बनी रहती है। इसी सोच के साथ, भारत की संसद ने डेटा की सुरक्षा के लिए "डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023" (DPDP Act 2023) बना दिया जो कि 14 नवंबर 2025 से लागू हो चुका है।

न्यायमूर्ति के.एस. पुट्टास्वामी (सेवानिवृत्त) बनाम भारत संघ के मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय का एक ऐतिहासिक फैसला है, जिसमें 9 न्यायाधीशों की पीठ ने सर्वसम्मति से निजता के अधिकार (Right to Privacy) को भारतीय संविधान के तहत एक मौलिक अधिकार घोषित किया। यह अधिकार मुख्य रूप से अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार) का अभिन्न अंग माना गया है।

- **आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार** :

आजकल के टेक्नोलॉजी के विकास के कारण बहुत सारी जानकारी और इंसान वाम मशीन का संवाद बन रहा है और जानकारी का आदान प्रदान करके के अलग–अलग तरीकों से फैलाया जा रहा है। इसका नतीजा यह भी हुआ है कि इंसान आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अलग–अलग रूपों पर बहुत ज्यादा निर्भर हो गया है। जैसे–जैसे टेक्नोलॉजी का विकास बढ़ रहा है, वैसे–वैसे मशीनों के सदाचार एवं नैतिकता पर सवाल भी बढ़ रहे हैं। जैक बाल्किन ने एक बार कहा था कि नई टेक्नोलॉजी उन चीजों को सामने ला सकती हैं जिन पर पहले ध्यान नहीं जाता था। इसका नतीजा अक्सर यह होता है कि टेक्नोलॉजी में नए विकास के लिए पारंपरिक कानूनी सीमाओं को पार कर जाती है। जैसा कि प्राइवेसी के अधिकार के साथ हुआ। पहले, जीवन के अधिकार का मतलब सिर्फ शरीर और संपत्ति की सुरक्षा था। हालाँकि, विधिक जानकार सैमुअल वॉरेन और लुई ब्रैंडीज ने तर्क दिया कि समय के साथ, जीवन के अधिकार शब्द ने भावनाओं की विधिक उपयोगिता को बढ़ाने के लिए एक बड़ा मतलब हासिल कर लिया है।

- **बोलने की आजादी के अधिकार की सीमाएँ :**

ऐसा अधिकार देने का मतलब है कि इसके साथ जुड़ी जिम्मेदारी भी होनी चाहिए। जब किसी आम इंसान को बोलने की आजादी का अधिकार दिया जाता है, तो मानहानि, लोक व्यवस्था एवं राष्ट्रीय सुरक्षा के

कारण कुछ जिम्मेदारियाँ और सीमाएं भी होती हैं। ऐसी सीमाओं का पालन न करने पर सजा मिलती है, जिससे लोक व्यवस्था बनाए रखा जाता है। कुछ ऐसी स्थितियाँ होती हैं, जिनमें अगर बोलने की आजादी का अधिकार दिया जाता है, तो मशीनें असल में अपने इंसानों के मुकाबले खास स्थिति में होंगी। उदाहरण के लिए, मानहानि साबित करने के लिए, यह साबित करना बहुत जरूरी है कि अपराधी का ऐसा अपराध करने का इरादा क्या है।

- **जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार :**

जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार इस मायने में कि विज्ञान (बायोलॉजी, मेडिसिन इत्यादि) के साथ–साथ टेक्नोलॉजी जीन टेक्नोलॉजी, न्यूक्लियर टेक्नोलॉजी, और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इत्यादि, जन्म और मृत्यु को तय या प्रभावित कर सकते हैं। नई टेक्नोलॉजी हमारे जन्म, मृत्यु और व्यक्तिगत सुरक्षा से जुड़े मानवाधिकारों को बढ़ा सकती है या उन्हें खतरे में डाल सकती है। इन विट्रो फर्टिलाइजेशन, एम्ब्रियो ट्रांसप्लांटेशन, यूथेनेशिया तकनीक, बिना टेस्ट की गई दवाओं से अबॉर्शन से होने वाली समस्याएं इसके उदाहरण हैं। विज्ञान के विकास के वजह से कभी–कभी प्री–कंसेप्शनल पेरेंटल स्क्रीनिंग से यह पता लगाना मुमकिन है कि भ्रुण में कुछ खास डिफेक्ट हैं या नहीं। मान लीजिए अगर यह पता चल जाए कि एक डिफॉर्म बच्चा पैदा होने वाला है, तो क्या इसे कल्याणकारी राज्य में समाज पर बोझ माना जा सकता है? हालांकि, उनका कलेक्टिव इंटरेस्ट, होने वाली मां के अपने बच्चे को जन्म देने या गर्भपात करने के व्यक्तिगत हित से सीधे टकरा सकता है? और गर्भपात करवाना उसके जीने के अधिकार का उल्लंघन होगा, ये कुछ ऐसे बिंदु हैं जिनका मूल्यांकन करने की जरूरत है।

- **मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार :**

खाना, कपड़ा, मकान, शिक्षा की सुविधा और जरूरी सामाजिक आवश्यकताओं सहित खुद और अपने परिवार के लिए सही चिकित्सा की सुविधा एक मानवाधिकार है। एक तरफ, साइंटिफिक और टेक्नोलॉजिकल तरक्की भेदभाव के नए रूप दे सकती है, साथ ही इस अधिकार के इस्तेमाल में सुरक्षा के मुद्दे भी पैदा कर सकती है। मेडिकल जानकारी तक पहुंच की कमी भी चिकित्सा के अधिकारों पर बुरा असर डाल सकती है। मान लीजिए, डायबिटीज वाला कोई व्यक्ति एक पैच पहन सकता है जो ऑटोमैटिक रूप से उसके ब्लड शुगर के उतार–चढ़ाव को मॉनिटर करता है और जरूरत पड़ने पर इंसुलिन देता है। हालाँकि, यह साइबरक्राइम के गलत इस्तेमाल, शोषण, कट्टरपंथी प्रदर्शनों, बुलीइंग, डराने–धमकाने और धमकाने वाले व्यवहार के लिए भी प्लेटफॉर्म पेश करता है।

- **शिक्षा का अधिकार :**

संवाद एवं सूचना टेक्नोलॉजी में हुए विकास के साथ, शिक्षा के अधिकार को बढ़ावा दिया जा सकता है। शिक्षा के अधिकार के तौर पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) वाली शिक्षा में एजुकेशन सिस्टम को बदलने और शिक्षा में भेदभाव के नए तरीके पैदा करने की क्षमता है। समाज के आर्थिक रूप से कमजोर तबके के बच्चों को अक्सर प्राइमरी स्कूल के स्तर पर अच्छी शिक्षा नहीं मिल पाती है और वे बिना किसी उम्मीद या आगे बढ़ने के मौकों के बिना अकुशल श्रमिक बनकर रह जाते हैं। शिक्षा के अधिकार के एक जरूरी हिस्से के तौर पर ICT वाली शिक्षा की संभावनाएं खास तौर पर गरीब और गांव के बच्चों तक शिक्षा पहुंचाने के एक असरदार तरीके के तौर पर अहमियत रखती हैं। कंप्यूटर के ज्ञान एवं इसका इस्तेमाल रचनात्मक शिक्षण को आसान बनाने और

सीखने की प्रक्रिया को ज्यादा जानकारी देने वाला और परस्पर संवादात्मक बनाने के लिए किया जा सकता है। दुनियाभर में लगभग 121 मिलियन से ज़्यादा बच्चे और किशोर स्कूल नहीं जाते हैं। टेक्नोलॉजी सभी के लिए अच्छी शिक्षा सुनिश्चित करने के रास्ते में एक बड़ा सहयोग प्रदान कर सकती है। साइंटिफिक टेक्नोलॉजी के असर का सबसे अच्छा उदाहरण कोविड–19 के समय में देखा जा सकता है, पूरे एजुकेशन सिस्टम ने मिलकर इलेक्ट्रॉनिक रिसोर्स का इस्तेमाल करके ऑनलाइन–मोड क्लास को सपोर्ट किया। ऑनलाइन शिक्षा से कोविड–19 संकट ने डिस्टेंस एजुकेशन को बढ़ावा देने में मदद की है।

- **काम करने का अधिकार –**

इस डिजिटल युग में बाजार के तरीके बदल गए हैं, और काम करने के अधिकार पर असर डाल रहे हैं। कुछ कानूनविदों ने तर्क दिया है कि साइंटिफिक टेक्नोलॉजी टेक्नोलॉजिकल बेरोजगारी पैदा कर रही हैं क्योंकि ये एडवांस्ड और ऑटोमेटेड टेक्नोलॉजी अलग–अलग सेक्टर में इंसानी मेहनत की जगह ले रही हैं या उसकी जगह ले सकती हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और ऑटोमेशन का बढ़ता इस्तेमाल ग्लोबल जॉब मार्केट में रुकावट डाल रहा है और सही और अच्छे काम के अधिकार पर काफी असर डाल रहा है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से लेकर रोबोटिक्स और एडिटिव मैन्युफैक्चरिंग (3D प्रिंटिंग) से लेकर सिंथेटिक बायोलॉजी तक कई टेक्नोलॉजी तेजी से आगे बढ़ रही हैं, ये लोगों की जिंदगी और समाज को पूरी तरह से बदल देंगी। एक्सपर्ट्स का अंदाजा है कि 2027 तक 68 प्रतिशत कस्टमर इंटरैक्शन बिना किसी इंसानी एजेंट के हैंडल किए जाएँगे, जिसके लिए चौटबॉट और सेल्फ–सर्विस टेक्नोलॉजी का सपोर्ट मिलेगा।

- **फ्री इलेक्शन का अधिकार :**

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस समाज में लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर बहुत बड़ा असर डाल सकता है। हालाँकि, पॉलिटिकल राय बनने पर टारगेटेड गलत जानकारी का असर सही–सही पता लगाना मुश्किल है, लेकिन पूरी तरह से ऑटोमेटेड इको चौंबर आइडियोलॉजिकल बबल बनाने का खतरा पैदा करते हैं, जिनमें घुसना तो आसान हो सकता है लेकिन बाहर निकलना मुश्किल। इसका खास तौर पर इलेक्शन के मामले में बहुत बड़ा असर हो सकता है। हालाँकि इंटरनेट के आने के बाद से यह कहा जाता रहा है कि ऑनलाइन कैंपेनिंग और सोशल मीडिया और सोशल मीडिया नेटवर्क पॉलिटिकल और इलेक्शन चलाने के तरीके को बदल सकते हैं, लेकिन हाल ही में एकेडमिक रिसर्च से पता चला है कि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर ऑनलाइन कंटेंट का क्यूरेशन और मैनिपुलेशन किस हद तक इलेक्शन को प्रभावित कर सकता है। U.S. चुनावों के दौरान, रिसर्चर्स ने कथित तौर पर यूजर्स के वोटिंग बिहेवियर पर असर डालने के लिए फेसबुक प्लेटफॉर्म में हेरफेर किया। उन्होंने यूजर्स को बताया कि उनके दोस्तों ने कैसे कहा कि उन्होंने वोट दिया था, बिना यूजर्स की जानकारी के, 2016 में UK के लोकल चुनावों के दौरान भी ऐसा ही बर्ताव देखा गया था।

फेसबुक और इसी तरह के बड़े ऑनलाइन प्लेटफॉर्म जान बूझकर इंसानी वोटिंग को प्रभावित करने के लिए अपनी शक्ति का इस्तेमाल करते हैं या नहीं, यह बात उतनी मायने नहीं रखती जितनी इस बात से रखती है कि असल में उनके पास चुनावों को प्रभावित करने की काबिलियत है। आजकल टीवी पर राजनीतिक विज्ञापन आते है और पब्लिक ब्रॉडकास्टर पर इम्पार्शियलिटी की जरूरतें होती हैं, लेकिन वोटर की पसंद और व्यवहार के एल्गोरिदमिक प्रेडिक्शन के इस्तेमाल के लिए ऐसा कोई इक्विवेलेंट मौजूद नहीं है, जिसका वोटर पर

उतना ही या उससे ज्यादा असर हो।

- **इंटरनेट का अधिकार मानव अधिकार के तौर पर :**

टेक्नोलॉजी के विकास ने हर देश को गवर्नेंस के हर सेक्टर में इनोवेटिव और एडवांस्ड डिजिटलाइज्ड टेक्नोलॉजी अपनाने के लिए मजबूर किया है। पहले के समय में शुरुआती स्तर पर रोटी, कपड़ा और मकान को हर इंसान की बेसिक जरूरत माना जाता था, लेकिन समय के साथ जीने के अधिकार का दायरा बढ़ा है और इस डिजिटल दुनिया में इंटरनेट एक्सेस के अधिकार को भी शामिल किया गया है। 2016 में, UNHRC ने खास तौर पर उन सभी तरीकों की निंदा की जो ऑनलाइन जानकारी तक पहुँच में रुकावट डालते हैं, उन्हें मानव अधिकारों का उल्लंघन बताया। इंटरनेशनल लेवल पर, कई देशों ने मानव अधिकार के दायरे में इंटरनेट एक्सेस के अधिकार को शामिल करने का सपोर्ट किया है और इसी सपोर्ट की वजह से, 2016 में एक नॉन–बाइंडिंग रेजोल्यूशन पास किया गया, जिसने इंटरनेट एक्सेस को मानव अधिकार घोषित किया।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने, अनुराधा भसीन बनाम भारत संघ (2020) मामले में ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए इंटरनेट को एक मौलिक अधिकार माना है।

निष्कर्ष :-

कानूनी, टेक्नोलॉजिकल और सोशल साइंस सर्कल में इसकी व्याख्या और समझ की जाती है और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित टेक्नोलॉजी और एल्गोरिदमिक प्रोसेसिंग की अवधारणा जनता के बीच अलग–अलग तरह से है। यह फील्ड तुलनात्मक रूप से नया है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के इस्तेमाल और बड़े सामाजिक विकास पर इसके असर के बारे में जागरूकता हाल ही में बढ़ी है और इसे संभावित असर पर एक बड़ी और सबको साथ लेकर चलने वाली पब्लिक पॉलिसी बहस में बदलना बाकी है।

संदर्भ सूची :-

1. माइकल नेगनेवित्स्की, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, ए गाइड टू इंटेलिजेंट सिस्टम्स 20 (पियर्सन पब्लिकेशन, 2 एडिशन, 2008)
2. डॉ. नरेंद्र जाधव, न्यू–एज टेक्नोलॉजी और इंडस्ट्रियल रेवोल्यूशन 4.0 : ग्लोबल पब्लिक पॉलिसी इश्यूज इकोनॉमी, डेमोक्रेसी, नेशनल सिक्योरिटी और वर्ल्ड पीस 16 (कोणार्क पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली. 2019)
3. वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम, यहां उपलब्ध है : https//weforum.ent.box.com/v/C4IR&Brochure (08 दिसंबर, 2019 को देखा गया)
4. यूरोपियन काउंसिल, G20 ओसाका लीडर्स, डिक्लेरेशन. यूरोपियन यूनियन. 29 जून, 2019, यहां उपलब्ध है https://www.consolium euroa.eu/en/press/press&releases/2019/06/29/g20–osaka डिक्लेरेशन / (18 दिसंबर, 2019 को देखा गया)
5. Loomis v. Wisconsin (881 N.W.2d 749)
6. Anuradha Bhasin vs Union Of India, AIR 2020 SUPREME COURT 1308, (2020) 1 MAD LJ 574, (2020) 1 SCALE 691, (2020) 77 OCR 784, AIRONLINE 2020 SC 17
7. डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023" (DPDP Act 2023)
8. Justice K.S. Puttaswamy (Retd.) and Anr. vs. Union of India and Ors., (2017) 10 SCC 1.
9. भारत के संविधान का अनुच्छेद 14, 19 – 21
10. European Convention on Human Rights (ECHR)

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 197–200
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Roles of Parent's Involvement in Child's Education

Dr. Manju

Email – 7236manju@gmail.com

Abstract :

Parental involvement is the active involvement of a parent in the education of their kid. Parent can help at home in a number of ways. It can include reading with their kids, keeping an eye on their task and talking about the school day and events. Parents could help out at school by working classes, going to parent- teacher meeting or help to set up events. Positive parental participation in education is important for children's development and academic success. Parental involvement in their child's learning journey creates a supportive home environment, improve communication between parents and teachers and promotes a culture of continuous growth. Research reveals that kids with passionate parents have greater motivation, better behaviour and higher academic success. Strong parental participation helps to boost children self-esteem and resilience. It prepares them to face obstacles both inside and outside the school and also promote their entire well-being and personal development. Family involvement in early childhood education more securely set these students up to develop a life-long love of learning which researchers ray is key to long term success.

Keywords – Parent's involvement, Child, Education, Role

Introduction :

Parental involvement is a critical driver of student success, directly improving academic performance, fostering positive social emotional development and enhancing motivation.

A parent is one who gives birth, nurtures or raises a child. Consequently, a parent is a man or woman who takes on all the parental responsibilities towards a child. This could also be a stepmother, an adoptive father a child's relative (Virasiri, Yunibhand, Chaiwawat, 2011)

On the other hand parenting refers to raising children from infancy to adulthood, in an environment of nurturance (Virasiri, Yunibhand, Chaiwawat, 2011)

Parents have an important role to play in the upbringing and modelling of their children's behaviour as children stay home with the parents much longer than at school and also due to the fact

that children have more in family interaction than schooling (Epstein, 2010)

Fan and Chen, (2001), Dixon (2008) – describes parental involvement in education as a combination of commitment and active participation on the part of the parent to the school and to the student. Accordingly, in almost any form, producers positive measurable gains in student's achievement.

Similarly, Reinke (2013) – contends that parental involvement helps meets parental information needs concerning their children education, also use parents as change agents and becomes a source of information regarding the student at school.

The role of parents in child development is multifaceted and plays a crucial part in shaping the future of their children.

Importance of parent's involvement in child's education :

To ensure child's overall development parents needs to do a lot a things and one such thing is getting involved in your child's education.

1. Home – school communication :

A two way communication between the school and the home is vital to student's success (Haisraeli, Fogiel – Bijaoui 2023)

Communicating involves school to home/ home to school communication about school programme and children needs and achievement.

Parents also require the opportunity to communicate their concerns and worries with the educator.

2. Increased Motivation :

When parents are involved in their child's education, it helps to motivate them to work harder and strive for better grades. This is because when children feel that their parents are actively involved in their learning, they take their studies seriously.

3. Improved social skills :

After involvements of parents they aid in fostering positive social skills and strong relationship with their peers. When parents take an interest in their child's school life and activities children become more confident and better able to interact with their peers.

4. Working with teachers and administrator :

Parents are a valuable resource for teachers and administrators, providing insight into the unique needs and abilities of their child. They should be actively involved in the decision making process of the school system by attending board meeting volunteering for committees and offering their expertise.

5. Monitoring homework and assignment :

Parents help their children succeed in the classroom by monitoring their homework and assignments. This includes checking and correcting their work, providing guidance and ensuring that it is completed in a timely manner. By taking an active role in their child's education parents make them develop the skills they need to succeed.

6. Teaching at home :

This includes assistance during homework, reading together or providing extra practice in maths, reading or other subject areas. Parents also help their children develop social and emotional skills by talking about their day and having conversations about important topics. This encouraged independence, self – confidence, problem solving skills.

7. Encouraging participation in extracurricular activities :

Parents play an important role in guidance and support for their children's extracurricular activities, which have a lasting impact on their academic and personal development.

8. Be a role model :

Children imitate what they see. If parents value education, read regularly and discuss current affairs and science facts with child, they will develop the habit of positive attitude towards learning teacher children that education is not just a task – it's a lifelong journey.

9. Limit screen time and encourage real world learning :

While technology has its advantages excessive screen time can reduce creativity, concentration and physical activities. Instead, encourage child to: play outside, visit museums or science park, engage in hobby classes like music, dance, sports etc.

Conclusion :

A child's learning journey is a shared responsibility. When schools and families work together, children thrive. Through active participation in their child's education that parents lay the foundation for lifelong learning and success. Parents are child's first and most influential educators, serving as critical partners in fostering academic, emotional and social success. Their role extends beyond supporting schoolwork; it involve cultivating a supportive home environment, setting routines, modelling a love for learning and instilling core values. Active parental engagement is proven to increase motivation, confidence and long term academic outcomes. Parents truly hold the key to unlocking their child's potential and shaping them into well rounded individuals who are ready to face the world.

References :

1. Virasiri, S. Yunibhand, J. and Chaiyawat, W. (2011) Parenting: What are the critical attributes?

2. Epstein, J.L. (2010) School/Family community partnerships: caring for the children we share. Phi Delta Kappan, 92, 81 – 96.
3. Fan, X and Chen, M (2001) Parental involvement and student's academic achievement A Meta Analysis Educational Psychology Review, 13,1 – 22
4. Reinke, W.M. (2013) integration effective family and school interventions; initial findings and implications.
5. Haisraeli, A and Fogiel – Bijaouli, S. (2023) Parental involvement in school pedagogy: A threat or a promise educational review, 75, 597 – 616
6. Desforges, C. and Boucher, A. (2003). The impact of parental involvement.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 201-206
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

संविधान और प्रमुख संविधान संशोधन का महत्व

विवेक कुमार सिंह
सहायक प्राध्यापक, विधि विभाग,
शासकीय विधि महाविद्यालय, आगर मालवा, मध्य प्रदेश, भारत।

शोध सार–

भारतीय संविधान को सर्वोच्च कानून के रूप में भारत देश में मान्यता प्राप्त है। भारतीय संविधान में भारत देश की बदलती हुई परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुरूप संशोधन किया जा सकता है। भारतीय संविधान में संशोधन करने का प्रावधान भारतीय संविधान के भाग XX के अनुच्छेद 368 में दिया गया है। संविधान में संशोधन करने की प्रक्रिया के अंतर्गत संविधान के किसी भी अनुच्छेद/प्रावधान में परिवर्तन या निरसन या जोड़ा जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत की परिस्थितियों के अनुसार संविधान का प्रारूप तैयार करने में 2 वर्ष 11 माह 18 दिन का समय लगा, भारतीय संविधान के निर्माण के लिए 1946 में एक समिति गठित की गई, जिसके अध्यक्ष राजेंद्र प्रसाद थे, 26 नवंबर 1949 को संविधान तैयार होकर 26 जनवरी 1950 को अस्तित्व में आया।

प्रस्तावना –

संपूर्ण विश्व के हर देश का अपना संविधान है, जिसके तहत उस देश का संचालन होता है। संविधान अपने मूलभूत सिद्धांतों, प्रावधानों, मूल्यों को बनाए रखते हुए बदलती परिस्थितियों के अनुरूप ढ़ालने में भी सक्षम हो। संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए कैबिनेट मिशन योजना के तहत संविधान सभा का गठन हुआ, शुरू में सदस्यों की संख्या 389 थी, लेकिन भारत और पाकिस्तान के विभाजन के बाद यह संख्या घटकर 299 रह गई, संविधान सभा की पहली बैठक 9 दिसंबर 1946 को हुई थी। भारतीय संविधान संशोधन से संबंधित प्रावधानों के बारे में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि हम इस संविधान को इतना ठोस और स्थाई बनाना चाहते हैं जितना कि हम बना सकते हैं फिर भी संविधान में कोई स्थायित्व नहीं है इसमें कुछ सीमा तक परिवर्तनशीलता होनी चाहिए। यदि आप किसी वस्तु को अधिक परिवर्तनशील और स्थाई बना देंगे तो राष्ट्र की प्रगति को रोक देंगे। भारतीय संविधान का निर्माण करने वाले निर्मातागण को यह आशंका थी कि यदि संविधान को आवश्यकता से अधिक हल्का बना दिया तो वह सत्ताधारी दल के हाथों की कठपुतली बन जाएगा और वह उसे अपनी आवश्यकता अनुसार संशोधन या निरस्त कर दूसरा संविधान बना सकेंगे और अनावश्यक संशोधन भी कर सकेंगे। इसलिए संविधान निर्माताओं ने एक बीच का रास्ता अपना कर संविधान को ना तो इतना कठोर और ना ही इतना सरल बनाया कि आवश्यक संशोधन ना किया जा सकते हो और ना ही

अवांछित संशोधन किए जा सकते हैं। अतः संविधान नम्यता और अनन्यता का मिश्रण है, भारतीय संविधान की नम्यता इससे स्पष्ट होती है कि भारत में आजादी के 75 वर्षों के भीतर ही 100 से ज्यादा अधिक संशोधन हो चुके हैं, वहीं अमेरिका के 200 वर्षों में संविधान में 25 से ज्यादा ही संशोधन हो पाए हैं यह आंकड़ा वहां के संविधान के संशोधन की जटिल संशोधन प्रक्रिया का परिणाम है। संविधान निर्माताओ ने संविधान में संशोधन की ऐसी प्रक्रिया को अपनाया जो ना ब्रिटिश संविधान की तरह आसान और ना अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया की तरह कठिन है।

शब्द कुंजी – संविधान, संविधान संशोधन, संसद, न्यायपालिका, अनुच्छेद, कानून, मूलाधिकार, निर्वचन और असंवैधानिक आदि।

संविधान संशोधन का महत्व – भारतीय संविधान संशोधन महत्व के आधार निम्नलिखित है :–

1. **नए मूल अधिकारों का जन्म** – भारतीय संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद या खंड या प्रावधान का निर्वाचन/व्याख्या की जाए, तो नए–नए अधिकारों का जन्म होता है।

2. **विवादित मुद्दों का समाधान** – जब भी सरकार द्वारा किसी भी अनुच्छेद/प्रावधान का अपने लाभ को देखते हुए कानून बनाया जाता है, तो ऐसे कानून पर विवाद उत्पन्न हो जाता है, विपक्षी दल उस कानून/मुद्दे को जनता एवं न्यायपालिका के समक्ष ले जाते हैं, तब न्यायपालिका द्वारा ही संविधान का निर्वाचन कर उस विवादित कानून का समाधान/सुलझाने का कार्य किया जाता है।

3. **सामाजिक सुधार प्रथाओं का अंत** – भारतीय संविधान में हर विषय के बारे में कुछ ना कुछ प्रावधान किया गया है, और संविधान देश की बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक, परिस्थितियों के अनुसार अपने आप को संशोधन कर परिवर्तित भी कर सकता है, और इस तरह वह देश में व्याप्त सामाजिक, सांस्कृतिक आदि प्रथाओं को अंत करने में स्वयं सक्षम है।

4. **अधिकारों/प्रावधानों का समायोजन** – देश को आजाद हुए 75 वर्षों बाद अब आम नागरिक में जागरूकता बढ़ रही है, धीरे–धीरे समाज के विभिन्न वर्ग एवं नागरिक अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक हुए हैं, और अपने अधिकारों की मांग के लिए लगातार आवाज उठा रहे हैं जैसे एलजीबीटी समुदाय, पिछड़े वर्ग, अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए लगातार आवाज उठा रहे हैं और संविधान में संशोधन द्वारा ऐसे अधिकारों को प्रदान किया जा रहा है।

5. **नियंत्रित शासन** – प्रत्येक देश के संविधान में न्यायपालिका, व्यवस्थापिका, कार्यपालिका के लिए कुछ मूलभूत सिद्धांत एवं प्रक्रिया, नियम, प्रावधानों का उल्लेख किया जाता है, जिनके तहत सत्ताधारी दल एवं विपक्ष संविधान के अनुरूप कार्य करते हैं। जब भी कोई दल या संविधान का अतिक्रमण करता है, तो न्यायपालिका उस कानून या प्रावधान को शून्य कर समाप्त कर देती है।

संविधान संशोधन प्रक्रिया की आलोचना –

संविधान संशोधन प्रक्रिया की आलोचना निम्नलिखित आधारों पर की जा सकती है :

1. भारतीय संविधान के बहुत से प्रावधानों में केवल संसद को ही संशोधन करने की शक्ति प्रदान की गई है।
2. भारतीय संविधान में संशोधन करने से संबंधित प्रावधानों/संशोधन प्रक्रिया के अस्पष्ट होने से विवाद उत्पन्न हो जाता है, और ऐसे विवाद सर्वोच्च न्यायपालिका के समक्ष पहुंच जाने से समय, धन की हानि होती है।

3. भारतीय संविधान में संशोधन की प्रक्रिया को आरंभ करने की शक्ति केवल संसद के पास ही है, यदि राज्यों को भारतीय संविधान में संशोधन करना हो तो ऐसे किसी विशेष प्रावधान का उल्लेख भारतीय संविधान में उपलब्ध नहीं है, कुछ विशेष मामलों/प्रावधानों में ही विधानसभाओं की सहमति आवश्यक है।

महत्वपूर्ण संविधान संशोधन –

प्रथम संविधान संशोधन 1951 द्वारा संविधान में नौवीं अनुसूची जोड़ी गई तथा अनुच्छेदों 15, 19, 31, 85, 87, 174, 176, 341, 342, 372 तथा 376 में संशोधन किया गया।

15वाँ संविधान संशोधन 1963 के द्वारा अनुच्छेद 217 एवं 124 में संशोधन करके उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु 60 वर्ष से बढाकर 62 वर्ष कर दी गई तथा अनुच्छेद 217(3) में यह उपबंध किया गया कि यदि उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश की आयु के बारे में कोई प्रश्न उठता है तो उस प्रश्न का विनिश्चय भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात राष्ट्रपति द्वारा किया जाएगा और राष्ट्रपति का विनिश्चय अंतिम होगा। अनुच्छेद 222 में संशोधन कर न्यायाधीशों का स्थानांतरण एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में करने का भी प्रावधान किया गया।

26वाँ संविधान संशोधन 1971 के द्वारा अनुच्छेद 291 तथा 362 को विलुप्त कर दिया गया तथा एक नया अनुच्छेद 363A जोड़ा गया। भूतपूर्व नरेशों के विशेष अधिकार तथा प्रिवी पर्स समाप्त कर दिए गए।

42वें संविधान संशोधन 1976 द्वारा प्रस्तावना में संप्रभु समाजवादी धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य, राष्ट्र की एकता और अखंडता शब्द प्रतिस्थापित किए गए। अनुच्छेद 51A के अंतर्गत नागरिकों के लिए दस मौलिक कर्तव्य 1976 में गठित स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों पर जोड़े गए। लोकसभा और विधानसभा कार्यकाल 6 वर्ष बढ़ा दिया गया, वहीं 44वां संविधान संशोधन द्वारा लोकसभा और विधानसभा का कार्यकाल पुन 5 वर्ष वापिस कर दिया गया। जून 1975 से 1977 तक राष्ट्रीय आपातकाल लोकतंत्र पर हमला माना गया, 42वां संविधान संशोधन आपातकाल के समय हुआ और इसे मिनी संविधान संशोधन कहा गया, इसके द्वारा 51 अनुच्छेद बदल दिए गए। संविधान संशोधन के नकारात्मक प्रभाव को रोकने के लिए उच्चतम न्यायालय ने 42वें संविधान संशोधन के बहुत से प्रावधानों को रद्द किया और 44वे संविधान संशोधन द्वारा बदल दिए गए।

44वें संविधान संशोधन 1978 के द्वारा राष्ट्रीय आपातकाल को समाप्त करने की शक्ति लोकसभा को प्रदान की गई। साथ ही राष्ट्रीय आपातकाल को बढ़ाने के लिए 6–6 महीने का प्रावधान किया गया, अनुच्छेद 356 में भी 44वें संविधान संशोधन के द्वारा 3 वर्ष की समय सीमा लगा दी। संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 361 जोड़ा गया जिसके तहत प्रेस के द्वारा लोकसभा विधानसभा या संसद की किसी भी कार्यवाही का प्रसारण किया जा सकेगा। संशोधन के द्वारा न्यायपालिका की शक्ति बढ़ाई गई, राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा भी न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन होगी यानी न्यायपालिका विचार कर सकेगी कि आपातकाल संविधान के अनुरूप है या नहीं। साथ ही राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, स्पीकर के चुनाव न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे में आएंगे। उच्चतम न्यायालय में अपील के लिए उच्च न्यायालय का प्रमाण पत्र आवश्यक है अनुच्छेद 134A जोड़ा गया। संशोधन द्वारा राष्ट्रीय आपातकाल के समय अनुच्छेद यानी अनुच्छेद 352 लागू होने के समय किसी भी कीमत पर अनुच्छेद 20 एवं 21 का निलंबन नहीं होगा 44वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 19(1)(f) और 31(1)(2) के द्वारा संपत्ति के अधिकार को हटा दिया गया अर्थात संपत्ति का अधिकार भाग 3 यानी मूल अधिकार से हटकर संवैधानिक

अधिकार 300A बना दिया गया। संघ सरकार केंद्रीय सैन्य बल को राज्यों में राज्यों की अनुमति के बगैर तैनात नहीं किए जाएंगे।

86वाँ संविधान संशोधन 2002 के द्वारा संविधान में अनुच्छेद 21(A) जोड़ा गया, जिसके तहत संविधान में यह उपबंधित किया गया कि राज्य 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायेगा। वही अनुच्छेद 45 में संशोधन करके यह उपबंध किया गया कि राज्य 6 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के पूर्व बाल्यकाल की देखरेख और शिक्षा देने का प्रयास करेगा। साथ ही अनुच्छेद 51(A) में संशोधन करके एक नया खंड (V) जोड़ा गया और यह उपबंधित किया गया कि 6 वर्ष की आयु से 14 वर्ष की आयु के बच्चों के माता–पिता और प्रतिपाल्य के संरक्षक जैसा मामला हो उन्हें शिक्षा के अवसर प्रदान करेगा।

91वां संविधान संशोधन 2003 के द्वारा भारतीय संविधान में अनुच्छेद 75 तथा 164 में संशोधन किया गया एवं एक नया अनुच्छेद 361B भी जोड़ा गया इस संशोधन के द्वारा यह व्यवस्था की गई कि अब दल परिवर्तन करने वाला सांसद या विधायक सदन की सदस्यता को खो देगा तथा साथ ही साथ अपने कार्यकाल की शेष अवधि या पुनः निर्वाचन तक मंत्री पद या किसी लाभ के किसी अन्य पद के लिए अयोग्य हो जाएगा। इस संशोधन के द्वारा यह भी उपबंधित किया गया कि सरकार में मंत्रियों की कुल संख्या निचली सदन की कुल सदस्य संख्या के 15% तक हो सकेगी तथा छोटे राज्यों में जहां विधानसभा सदस्यों की संख्या 60 से कम है, मंत्रियों की अधिकतम संख्या 12 होगी। जिन राज्यों में संख्या इससे अधिक है उन्हें 6 माह के भीतर घटाना होगा। दसवीं अनुसूची के पैरा 3C को निरस्त कर दिया गया जिसके द्वारा दल विभाजन को दल बदल नहीं माना जाता है।

92वाँ संविधान संशोधन 2003 के द्वारा आठवीं अनुसूची में संशोधन करके चार नई भाषाएं बोडो, डोंगरी, मैथिली एवं संथाली जोड़ी गई, इन्हें मिलाकर अब कुल राजभाषाओं की संख्या 22 हो गई है।

93वॉ संविधान संशोधन 2006 के द्वारा संविधान में अनुच्छेद 15(5) जोड़ा गया, जिसके द्वारा यह उपबंध किया गया कि सरकारी शिक्षण संस्थाओ के साथ ही साथ गैर सहायता प्राप्त निजी शिक्षण संस्थाओ में भी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों के अभ्यर्थियों के लिए प्रवेश हेतु स्थान आरक्षित होंगे, किंतु अनुच्छेद 30(1) में उल्लेखित शिक्षण संस्थानों पर यह प्रावधान लागू नहीं होंगे।

97वां संविधान संशोधन 2011 के द्वारा भारतीय संविधान में संशोधन कर मूल अधिकार में 19(1)(C) जोड़कर संगम या सघ अथवा को ऑपरेटिव सोसाइटी बनाने का अधिकार प्रदान किया गया, भारतीय संविधान के राज्य के नीति निर्देशक तत्व भाग 4 के अंतर्गत नई अनुच्छेद 43 B को अतः स्थापित किया गया। इसमें अनुच्छेद 243 ZH से अनुच्छेद 243 ZT तक कुल 13 अनुच्छेद है। अनुच्छेद 43B में यह उपबंधित करता है कि राज्य सहकारी समितियां के ऐच्छिक गठन, स्वायत्त कार्य संपादन, लोकतांत्रिक नियंत्रण या वृत्तिक प्रबंधन में अभिवृद्धि करने का प्रयास करेगा, इस संशोधन के द्वारा सहकारी समितियो को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई।

99वाँ संविधान संशोधन 2014 के द्वारा अनुच्छेद 124 में खंड A, B, C जोड़ा गया, जिसके तहत अनुच्छेद 124 के अनुसार अब नियुक्ति उच्च एवं उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की राय के स्थान पर 124A में राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग की राय लेना आवश्यक होगा। अनुच्छेद 124A के द्वारा राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग का गठन किए जाने से संबंधित प्रावधान किए गए, जिसमें भारत के मुख्य न्यायाधीश अध्यक्ष के रूप में, दो वरिष्ठ

न्यायाधीश जो बाद में मुख्य न्यायाधीश पद के दावेदार होंगे उन्हें सदस्य नियुक्त किया जाएगा। एक सदस्य जो संघ का मंत्री होगा एवं विधि एवं न्याय के अंतर्गत रहेगा, दो मुख्य व्यक्ति जिसे समिति नियुक्त करेगी, जिस समिति में प्रधानमंत्री, मुख्य न्यायाधीश, लोकसभा के विपक्ष का नेता जो मुख्य विपक्षी दल का होगा। एक प्रमुख व्यक्ति जो सदस्य के रूप में नामित किया जाएगा जो अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक या महिला के बीच का होगा, उस व्यक्ति की नियुक्ति 3 वर्ष के लिए की जाएगी जिसमें दोबारा कार्यकाल पर नियुक्ति नहीं की जाएगी। 99वाँ संविधान संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 127, 128, 217, 222, 224, 224A, 231 में संशोधन किया गया। 124B राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग का यह कर्तव्य होगा कि नियुक्ति के लिए अनुशंसा मुख्य न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एवं उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीश के रूप में की जाएगी। परंतु 99वाँ संविधान संशोधन लागू होने से पूर्व ही समाप्त कर दिया गया।

प्रधानमंत्री द्वारा 106वां संविधान संशोधन अधिनियम 2023 को नारी शक्ति वंदन अधिनियम नाम प्रदान किया। जो महिला आरक्षण से संबंधित है महिला आरक्षण के लिए सबसे पहले 1996 में प्रयास किया गया। महिला आरक्षण बिल को पास कराने के लिए बहुत बहुत सी सरकारों ने प्रयास किया परंतु असफल रही, इस अधिनियम से ससद, विधान मंडलों में महिलाओं की संख्या में वृद्धि होगी। ससद और विधान मंडलों में कुल सीटों पर महिलाओं को 33% आरक्षण प्राप्त हो सकेगा। पांडिचेरी जैसे केंद्र शासित प्रदेश में यह अधिनियम लागू नहीं हो सकेगा क्योंकि वहां केवल लोकसभा की एक सीट ही है। इस अधिनियम का उद्देश्य नीति निर्धारण में महिलाओं की भूमिका को सशक्त करना है। संविधान में संशोधन द्वारा महिलाओं के लिए अनुच्छेद 330A और 332A का सावधान किया गया है। महिला आरक्षण लागू होने की तारीख से 15 वर्ष तक की अवधि के लिए होगा, जिसे संसद की अनुमति से आगे बढ़ाया जा सकेगा। संविधान के अनुच्छेद 368 के अनुसार नारी शक्ति बंधन अधिनियम 2030 को लागू करने के लिए कम से कम 50% राज्यों की सहमति जरूरी है, मौजूदा स्थिति में ज्यादातर राज्य महिला आरक्षण के पक्ष में है इसलिए राज्यों में इस कानून को लागू करने में कोई परेशानी उत्पन्न नहीं होगी। पूर्व से ही स्थानीय निकायों जैसे पंचायत और नगर पालिकाओं में भी एक तिहाई सीटे महिलाओं के लिए आरक्षित है।

निष्कर्ष –

उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि संविधान में परिवर्तन या संशोधन की प्रक्रिया को अपनाया जाना किसी भी देश की प्रगति का सूचक माना जाता है। संविधान संशोधन का उद्देश्य सदैव संविधान को जीवित दस्तावेज बनाए रखना है।

संदर्भ सूची –

1. सिंह, महेंद्र पाल, वी. एन. शुक्ला कंस्टीटूशन ऑफ इंडिया, ईस्टर्न बुक कंपनी, 13वां संस्करण 2017
2. पाण्डेय, डॉ. जय नारायण, भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 52वां संस्करण 2019
3. बाबेल, डॉ. बसंती लाल, भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 16वां संस्करण 2020

पत्रिका –

1. प्रतियोगिता दर्पण।

2. योजना।

समाचार पत्र –

1. अमर उजाला,
2. जनसत्ता,
3. दैनिक जागरण,

वेबसाइट –

1. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4_%E0%A4%95%E0%A4%BE_%E0%A4%B8%E0%A4%82%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%A7%E0%A4%BE%E0%A4%A8
2. https://www.drishtiias.com/hindi/loksabha-rajyasabha-discussions/in-depth-major-constitutional-amendments
3. https://hindi.livelaw.in/know-the-law/amendments-in-constitution-procedure-and-limitation-146901

पता– 12A, न्यू जीवाजी नगर, थाटीपुर, ग्वालियर, मध्य प्रदेश, भारत।
ईमेल– vk979661@gmail.com
मोबाइल नंबर – 6260811802

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 207–211
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Human–Computer Interaction (HCI)

Dr. Charlesbabu. J, Assistant Professor, Department of ECS,
Dr. S. Kirubadevi, Assistant Professor, Department of Commerce,
Dr. Jayanthi Sobhana. S, Assistant Professor, Department of Commerce PA,
Dr. C. Thangamani, Assistant Professor, Department of Information Technology,
Ms. A. Vijayapriya, Assistant Professor, Department of Computer Technology,
Dr.V. Deepa, Assistant Professor, Department of Information Technology,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu.

Abstract :

Human–Computer Interaction (HCI) is an interdisciplinary field that focuses on the design, evaluation, and implementation of interactive computing systems for human use. It lies at the intersection of computer science, psychology, design, and social sciences, aiming to create systems that are efficient, usable, and satisfying for users. Over the past few decades, HCI has evolved from simple command-line interfaces to highly sophisticated graphical, voice-based, and immersive interaction systems.

The primary goal of HCI is to improve the interaction between users and computers by making systems more user-friendly and accessible. This includes understanding user behavior, cognitive processes, and environmental contexts to design effective interfaces. Usability is a central concept in HCI, defined by effectiveness, efficiency, and user satisfaction in accomplishing tasks. The development of user-centered design methodologies has significantly contributed to improving system usability and enhancing user experience.

HCI also addresses emerging technologies such as artificial intelligence, virtual reality, and mobile computing, which introduce new challenges and opportunities in interaction design. As computing becomes increasingly pervasive, HCI plays a vital role in ensuring inclusivity and accessibility for diverse user groups.

This chapter explores the fundamental concepts of HCI, including its history, principles, design processes, usability evaluation, and applications. It also highlights current trends and future directions

in the field. By understanding HCI, designers and developers can create systems that not only meet technical requirements but also align with human needs and expectations, ultimately leading to better user experiences and improved technological adoption.

1. Introduction to Human–Computer Interaction :

Human–Computer Interaction (HCI) refers to the study and design of how people interact with computer systems. It focuses on creating interfaces that allow users to communicate effectively with machines. HCI encompasses both the technical aspects of computing systems and the human aspects such as perception, cognition, and behavior.

HCI is essential because modern computing systems are used by a wide range of people, not just experts. Therefore, systems must be intuitive, efficient, and accessible.

2. History and Evolution of HCI :

The field of HCI emerged in the 1970s and 1980s with the rise of personal computing. Early systems used command-line interfaces, requiring specialized knowledge. As computing expanded to general users, the need for user-friendly interfaces grew.

The introduction of graphical user interfaces (GUIs), the mouse, and interactive systems revolutionized computing. Over time, HCI evolved to include mobile devices, touch interfaces, voice interaction, and virtual environments. Today, HCI continues to evolve with emerging technologies such as augmented reality and artificial intelligence.

3. Goals of HCI :

The primary goals of HCI include :

- Improving usability and user experience.
- Enhancing efficiency and productivity.
- Reducing errors and increasing safety.
- Ensuring accessibility for all users.
- Supporting user satisfaction and engagement.

These goals help ensure that systems meet user needs effectively.

4. Components of HCI :

HCI consists of three main components :

4.1 Human (User) :

Users bring cognitive abilities, emotions, and expectations. Understanding human behavior is crucial for designing effective interfaces.

4.2 Computer System :

Includes hardware and software that enable interaction, such as input/output devices and

processing systems.

4.3 Interaction :

Interaction refers to communication between the user and the system through input and output mechanisms.

5. Principles of HCI Design

5.1 Usability :

Usability is a key concept in HCI, defined as the effectiveness, efficiency, and satisfaction with which users achieve goals.

5.2 Learnability :

Systems should be easy to learn, especially for new users.

5.3 Flexibility :

Interfaces should support multiple ways of interaction.

5.4 Robustness :

Systems should handle errors effectively and provide feedback.

These principles ensure that systems are user-friendly and efficient.

6. User-Centered Design (UCD) :

User-Centered Design is an approach that focuses on users throughout the development process. It involves :

- Understanding user needs
- Designing prototypes
- Testing with real users
- Iterative improvements

This approach ensures that systems meet user expectations and provide better experiences.

7. Interaction Styles in HCI

Different interaction styles include :

- Command-line interfaces
- Graphical user interfaces (GUIs)
- Menu-driven interfaces
- Touch-based and gesture-based interaction
- Voice interaction systems

Each style has advantages depending on the context of use.

8. Usability Evaluation Methods :

Evaluation is essential to ensure system effectiveness. Common methods include :

- User testing
- Heuristic evaluation
- Surveys and questionnaires
- Observation and feedback analysis

Usability evaluation helps identify issues and improve system design.

9. Applications of HCI :

HCI is widely applied in :

- Software development
- Mobile applications
- Healthcare systems
- Education and e-learning
- Gaming and entertainment

It plays a vital role in improving user experience across industries.

10. Emerging Trends in HCI :

Modern HCI is influenced by :

- Artificial Intelligence (AI)
- Virtual Reality (VR) and Augmented Reality (AR)
- Internet of Things (IoT)
- Wearable devices

These technologies create new interaction possibilities and challenges.

11. Challenges in HCI :

Some challenges include :

- Designing for diverse users
- Ensuring accessibility
- Balancing functionality and simplicity
- Addressing privacy and ethical concerns

12. Future Directions of HCI :

The future of HCI involves more natural and intuitive interaction, such as brain-computer interfaces and intelligent systems. The focus will be on enhancing user experience and creating seamless human–machine collaboration.

Conclusion :

Human–Computer Interaction is a crucial field that bridges the gap between humans and technology. By focusing on usability, design principles, and user needs, HCI ensures that technology

is accessible, efficient, and enjoyable to use. As technology continues to evolve, HCI will remain essential in shaping how humans interact with digital systems.

Book References :

- Dix, A., Finlay, J., Abowd, G., & Beale, R. *Human-Computer Interaction* (3rd Edition), Pearson Education.
- Preece, J., Rogers, Y., & Sharp, H. *Interaction Design: Beyond Human-Computer Interaction*, Wiley.
- Shneiderman, B., & Plaisant, C. *Designing the User Interface*, Pearson.
- Card, S., Moran, T., & Newell, A. *The Psychology of Human-Computer Interaction*, Lawrence Erlbaum Associates.

9894363500, 8754012376, 8870989665,
9739834742, 8778663879, 8754226245

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा). काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

सानिया प्रकाशन एवं गिना प्रकाशन द्वारा
संयुक्त रूप से नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2394-6458
Impact Factor : 6.500

RESEARCH JOURNAL OF MEEMANSA

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Editor-in-Chief : Dr. Lata S. Patil
Managing Editor : Dr. Jaivir Langyan M. 9728790909

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय #202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

कांगड़ा–चम्बा जिला के लोकगीतों में संस्कृति

Authored by

डॉ० ऊषा रानी

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,
CDOE, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला–171005

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 08-16

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

समकालीन साहित्य लेखन में हाशिए की आवाजें

Authored by

डॉ. योगेश कुमार यादव

सह आचार्य,

हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय नारनौल।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 17-22

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

मोटापा के प्रबंधन में योग–प्राणायाम–ध्यान एवं आहार का एक 'प्रयोगात्मक अध्ययन'

Authored by

योगाचार्य राजकुमार भारती (पीएचडी स्कॉलर इन योग)
सहायक प्रोफेसर स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग,
देशभगत विश्वविद्यालय, मंडी गोबिंदगढ़ पंजाब।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 23-30

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

स्वतंत्रता आंदोलन एवं साहित्यिक पत्रिकाएं

Authored by

डॉ. मनीष काले, अतिथि व्याख्याता,
डॉ. सोनाली नरगुन्दे, विभागाध्यक्ष,
जनसंचार एंव पत्रकारिता अध्ययनशाला, देवी अहिल्या यूनिवर्सिटी, इंदौर।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 31-38

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

शैलेश मटियानी के उपन्यास 'कोई अजनबी नहीं' की समीक्षा (संचारी भावों के परिप्रेक्ष्य में)

Authored by

डॉ. दीपशिखा

जगत गुरू नानक देव पंजाब
स्टेट ओपन विश्वविद्यालय, पटियाला।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 39-50

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

Effect of Competency-Based Assessment under National Education Policy 2020 on Teaching Practices of Secondary School Teachers

Authored by

Pinky Agarwal, M.Ed. Scholar

Dr. Manju Devi, Research Supervisor
(Assistant Professor)
Sri Balaji Teacher Training College, Jaipur.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 51-58

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

अकबर के शासनकाल में आर्थिक सुधार : वर्तमान में प्रासंगिकता

Authored by

डॉ० अनीता रानी

सहायक प्राध्यापक
कालिंदी कॉलेज (इतिहास विभाग),
दिल्ली विश्वविद्यालय (एन.सी.डब्ल्यू.ई.बी.)– दिल्ली

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 59-65

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

INDIAN DIASPORA IN THAILAND : MIGRATION AND OCCUPATIONAL ENGAGEMENTS

Authored by

Chandan Kumar Yadav, Ph.D. Research Scholar
Department of Medieval and Modern History,
University of Lucknow, Lucknow

Prof. Pawan Kumar Yadav
Department of History (RMP PG College, Sitapur),
University of Lucknow, Lucknow.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 66-75

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में हिन्दू–मुस्लिम साझी संस्कृति का चित्रण

Authored by

राहुल साव

शोधार्थी,

कूचबिहार पंचानन वर्मा विश्वविद्यालय।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 76-82

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

गीतों के 'साहिर' – साहिर लुधियानवी

Authored by

सिद्धार्थ
(युवा कवि)

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 83-86

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

Pragmatic Statesmanship in Indian Politics : An Analytical Study of the Pragmatic Approach of Atal Bihari Vajpayee

Authored by

Lakhwinder Jeet Kaur
Associate Professor, Department of History,
Babbar Akali Memorial Khalsa College, Garhshankar.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 87-91

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

औपनिवेशिक भारत में ब्रिटिश 'बाँटो और राज करो' की नीति : सांप्रदायिक राजनीति, जातीय विभाजन और भारत–विभाजन का ऐतिहासिक–राजनीतिक विश्लेषण

Authored by

डॉ. प्रशांत कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान,
तिलकधारी पी. जी. कॉलेज, जौनपुर।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 92-99

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

श्रीरामचरितमानस में संस्कृति का धार्मिक चित्रण

Authored by

पूनम, षोधार्थी,

प्रोफेसर संजीव कुमार (षोध निर्देषक), प्रोफेसर

हिंदी विभाग, बाबा मस्तनाथ विष्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 100-103

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

'बेगाने घर में' उपन्यास में अकेलेपन का विवेचन

Authored by

किरन रावत

शोधार्थी, हिंदी विभाग,

सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, परिसर अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, 263601

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 104-107

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

आंग्ल–नेपाल युद्ध 1814–16 : ऐतिहासिक और राजनीतिक विश्लेषण

Authored by

किशोर कुमार

शोधार्थी, इतिहास विभाग, डी0 एस0 बी0 परिसर
कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 108-113

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

The Role of Indian Diaspora in Influencing India's Soft Power Diplomacy : Under Modi Government

Authored by

Khushboo Arya
Research Scholar,
DSB Campus, Kumaun University, Nainital (Uttarakhand)

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 114-126

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

Antyodaya and Inclusive Growth : Deendayal Upadhyaya's Vision of Welfare Economics

Authored by

Hemant Sharma
Ph.D. Research Scholar.
HPU.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 127-133

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में उदारवादियों की भूमिका : एक ऐतिहासिक अध्ययन

Authored by

डॉ. नागेश्वर कुमार

सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग,
बी.एम.डी. कॉलेज दयालपुर, वैशाली
(बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर)

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 134-139

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

उत्तर प्रदेश में विमुक्त जनजाति के बच्चों की शिक्षा व्यवस्था

Authored by

डॉ० सौम्या शंकर, असिस्टेंट प्रोफेसर

मधु मिश्रा, शोध छात्रा

समाजशास्त्र विभाग,

डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुर्नवास विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ0प्र0) भारत।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 140-147

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

पर्यावरण चेतना और हिंदी साहित्य : नवाचार एवं स्थिरता का साहित्यिक दृष्टिकोण

Authored by

डॉ अनिता सिंह

हिंदी विभाग, असिस्टेंट प्रोफेसर

डी.बी.एस. कॉलेज, गोविंद नगर कानपुर–208006

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 148-153

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

डिजिटल युग में हिंदी भाषा का विकास : सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन

Authored by

डॉ. आरती दुबे

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग

लक्ष्मी यादुनंदन महाविद्यालय, कायमगंज, जिला फर्रुखाबाद,

उत्तर प्रदेश–209502

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 154-158

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

Grammatical Error Correction Using Transformer-Based Models

Authored by

Dr. K. Angel Vinoliya, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu.
Dr. M. Mary Velanganni, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu.
Dr. Vijayalakshmi . S, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu.
Dr. B. Abirami, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu.
Mr. B. Manojkumar, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India , CBE-641 006, Tamilnadu.
Dr. S. Sudha, Assistant Professor, Department of English,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu
Dr. S. Swarnalatha, Associate Professor, Department of Hindi,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 154-163

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

सम्राट अशोक की प्रशासनिक व्यवस्था : धम्म, नैतिकता एवं लोककल्याण का ऐतिहासिक विश्लेषण

Authored by

रोहिताश कुमार

सहायक आचार्य, इतिहास,
राजकीय महिला महाविद्यालय, झुन्झनू, 333001

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 164-171

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

Artificial Intelligence and Social Inequalities in India : A Sociological Perspective

Authored by

Dr. Afroze Eqbal and Anjali Sharma

Department of Sociology,
Shaheed Durga Mall Govt. PG College,
Doiwala, Dehradun.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 175-190

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

मानव अधिकारों पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रभाव

Authored by

अवनीश धर दूबे (शोधार्थी)

कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान,
सुल्तानपुर (उत्तर प्रदेश)

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 191-196

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

Roles of Parent's Involvement in Child's Education

Authored by

Dr. Manju

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 197-200

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate* of Publication for the paper titled

संविधान और प्रमुख संविधान संशोधन का महत्व

Authored by

विवेक कुमार सिंह

सहायक प्राध्यापक, विधि विभाग,
शासकीय विधि महाविद्यालय, आगर मालवा, मध्य प्रदेश, भारत।

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 201-206

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20466296

Certificate of Publication for the paper titled*

Human–Computer Interaction (HCI)

Authored by
Dr. Charlesbabu. J, Assistant Professor, Department of ECS,
Dr. S. Kirubadevi, Assistant Professor, Department of Commerce,
Dr. Jayanthi Sobhana. S, Assistant Professor, Department of Commerce PA,
Dr. C. Thangamani, Assistant Professor, Department of Information Technology,
Ms. A. Vijayapriya, Assistant Professor, Department of Computer Technology,
Dr.V. Deepa, Assistant Professor, Department of Information Technology,
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Nava India, CBE-641 006, Tamilnadu.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-4, Page No. 207-211

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com